आँधी का दीया

महेशकुमार शर्मा

मूल्य
पाँच रुपये

पूर्वाभास

कीर्त्ति वंशगत और प्रतिभा पैतृक सम्पत्ति नहीं। यहीं आकर भारतीय भाग्यवाद स्वतः सिद्ध हो जाता है। पिता का शौर्य पुत्र में नहीं आ पाता और पितामह की प्रतिभा पौत्र में नहीं लक्षित होती। सामान्य नियम यही है। कहीं एकाध प्रतिवाद मिल भी जाँय, तब भी विश्व की साधारण गति पर उसका कोई प्रभाव नहीं। शेरशाह का जीवन ऐसे ही असाधारण गौरव और कीर्त्ति की गाथा है!

सोलहवीं शताब्दी भारत में एक नवीन और महान् राजवंश की स्थापना का काल है। उत्तर में हमलों की बाढ़ निरन्तर आ रही थी। ऐसे समय में शेरशाह उस शक्ति के रूप में इतिहास के रंगमंच पर सामने आया जिसने कुछ काल के लिए भारत में बढ़ती हुई मुगल शक्ति को न केवल रोक दिया, अपितु कुछ काल के लिए उखाड़ फेंका और विजेताओं की श्रेणी में सम्मानित हो जा बैठा।

उस मध्ययुगीन इतिहास के प्रमुख नायक शेरशाह के उज्ज्वल चरित्र और कुशाग्र प्रतिभा ने लेखक को इतना प्रभावित किया कि प्रस्तुत उपन्यास में उस महान् व्यक्ति का आदर्श सामान्य पाठकों के सम्मुख उपस्थित करने के लिए उसे विवश होना पड़ा। शेरशाह के विषय में कीन (Keene) ने उचित ही लिखा है:—

"No government, not even the British has shown such wisdom as this Pathan."

[अर्थात्—जैसी बुद्धि-प्रखरता इस पठान (शेरशाह) ने दिखायी, वैसी अंग्रेजी राज्य में भी किसी सरकार ने नहीं प्रकट की।]

शेरशाह, जो एक छोटे से कुल में, छोटे जागीरदार का बेटा था, अपने भुज-बल और बुद्धि-बल से भारत के महान् साम्राज्य का अधिपति और साथ ही सूरवंश का संस्थापक बन गया। उसका बचपन का नाम फरीद था। वह सन् १४७२ ई० (या १४८६ ई०) में हिसार-फिरोजा में पैदा हुआ था। उसका दादा इब्राहीम खाँ सूर अफगानिस्तान का रहने वाला था। वह अपने बेटे हसन को लेकर पंजाब पहुँचा और वहीं बजवारा नामक स्थान पर बस गया। बजवारा के बाद यह वंश नारमूल में जा बसा, जहाँ उन्हें पंजाब के सूबेदार जमाँ खाँ शरखखानी से कुछ जागीर भी मिली।

इब्राहीम के बाद उसका बेटा हसन खाँ नारमूल में जागीर का मालिक हुआ और जमाँ खाँ की नौकरी करता रहा। जमाँ खाँ की बदली जब जौनपुर हुई तो वह उसे अपने साथ जौनपुर लाया। जमाँ खाँ ने हसन को पाँच सौ घोड़ों का मनसबदार बनाया और उसे सहसराम, खवासपुर, हाजीपुर और हाँडा के परगने जागीर में देकर सम्मानित किया।

हसन को चार बेगमें और आठ लड़के थे। छोटी बेगम से उसे बहुत स्नेह था। इसलिये फरीद और उसकी माँ से वह खिन्चा रहता था। घर की झंझटों से ऊब कर फरीद बाइस वर्ष की अवस्था में जौनपुर जमाल खाँ के पास चला गया। वहाँ उसने अरबी और फारसी का पूरा साहित्य पढ़ा। कहते हैं, गुलिस्ताँ, बोश्ताँ और सिकन्दरनामा उसे कण्ठस्थ थे। इस साहित्यिक रुचि के कारण जीवन के प्रारम्भिक काल में उसका सैनिक जीवन के प्रति कम झुकाव था। इसीलिये उसके इतिहास-लेखक कानूनगो महोदय ने लिखा है—

"We do not find a second man in the history of India who without being a soldier in his early life became the founder of an empire." (अर्थात्—

हम भारतीय इतिहास में कोई ऐसा दूसरा व्यक्ति नहीं पाते जो अपने प्रारम्भिक जीवन में सैनिक हुए बिना एक साम्राज्य का संस्थापक बन गया हो।)

जैसा महाकवि कालिदास ने कहा है कि—"पदं हि सर्वत्र गुणौर्विधीयते"—उसी प्रकार फरीद की बौद्धिकता ने उसे जौनपुर में सर्वप्रिय बना दिया। इस बात पर प्रसन्न होकर उसका पिता हसन उसे जौनपुर से वापस ले गया और उसके हाथ सहसराम और खवासपुर का प्रबन्ध सौंप दिया। उसकी योग्यता और सरल स्वभाव के कारण समस्त कर्मचारी उससे प्रसन्न रहने लगे। परन्तु अपनी सौतेली माँ की ईर्षा के कारण उसे फिर वहाँ से हटना पड़ा। सन् १५१६ ई० में वह आगरे चला गया जहाँ उसने सुलतान इब्राहीम लोदी खाँ के दरबार में नौकरी कर ली। सन् १५२२ ई० में वह बिहार के सुलतान बहार खाँ के पास चला गया जहाँ एक दिन आखेट करते समय शेर को मार डालने के फलस्वरूप उसे शेर खाँ की उपाधि मिली।

अप्रैल सन् १५२७ से जून १५२८ तक वह भारत-विजेता मुगल-सम्राट बाबर की सेना में रहा। अक्टूबर सन् १५२६ में शेर खाँ ने पुनः बिहार के सूबेदार जमाल खाँ लोहानी के यहाँ नौकरी कर ली और उसी वर्ष बंगाल के सुलतान नुसरत शाह के आक्रमण को विफल करके उसने अपना क्षेत्र बढ़ा लिया। पर लोहानी सरदारों के जलन के कारण उसने शीघ्र ही बिहार छोड़ दिया और चुनार चला आया।

प्रस्तुत उपन्यास का कथानक यहीं से प्रारम्भ होता है। सन् १५४० ई० तक शेर खाँ ने हुमायूँ को बुरी तरह पछाड़ दिया और भारत का सम्राट बन गया। उसकी मृत्यु २२ मई सन् १५४४ ई० को हुई। अर्सकिन (Erskin) के शब्दों में, शेरशाह भारतीय इतिहास में प्रकट होनेवाले अत्यधिक असाधारण व्यक्तियों में एक था। [Shershah was

one of the most extra-ordinary man whose name appears in the History of India."]

शेरशाह की राजनैतिक निपुणता और शासन सुधारों ने अँग्रेज इतिहासकारों को भी विस्मय में डाल दिया। Hagh Murray, F. R. S. E. अपनी पुस्तक History of British India के सातवें अध्याय (The Pathan or Afghan Dynasty) में लिखता है :—

"...Sherkhan had become undisputed master of the empire...He swayed the sceptre wisely and well at which the Moghul Historians are astonished considering the treason by which he gained it. His arrangements for the accomodition of travellers, which, in the east devolve generally upon the soverign were on a scale of which no former reign afforded an example."

शेरशाह शीघ्र ही एक विग्रह-शून्य साम्राज्य का अधिपति हो गया। राज-दण्ड को उसने अत्यन्त बुद्धिमत्ता तथा निपुणता से घुमाया जिस पर स्वयं मुगल इतिहासकारों को आश्चर्य होता है कि किस प्रकार सम्राट के प्रति विद्रोह करके उसने राज्याधिकार प्राप्त कर लिया। यात्रियों की सुविधाओं के लिए किये गये उसके सुधार, जो पूर्व देश के देशों में सामान्यतः राजाओं का कर्त्तव्य है, ऐसे स्तर पर हुए जैसा कि उसके पूर्व अन्य किसी शासक ने उदाहरण रूप में न कर दिखाया था।

श्री माउन्ट स्टुअर्ट एल्फिस्टन महोदय ने अपनी पुस्तक—दि हिस्ट्री आफ इंडिया—दि हिन्दू एण्ड मुहेमेडन पीरियड के पृष्ठ ३६६ पर शेरशाह की आदर्श महत्वाकांक्षाओं और सुधारों को अद्वितीय बताते हुए लिखा है :—

"Sherkhan appears to have been a prince of consummate prudence and ability...His ambition was always too strong for his principles..... He brought his territories into the highest order, and introduced many improvements in the civil government."

(अर्थात् शेर खाँ परम निपुण, उत्कृष्ट, विवेक तथा योग्यता से पूर्ण राजकुमार प्रकट होता है...उसकी महत्त्वाकांक्षाएँ उसके सिद्धान्तों के लिए सदैव अतिशय प्रबल होती थीं।...उसने अपने साम्राज्य को सर्वोच्च व्यवस्था पर ला दिया और नागरिक प्रशासन में अनेक नये सुधार किये...।)

प्रस्तुत उपन्यास लिखने में कई पुस्तकों से सहायता ली गयी है। ऐतिहासिक पुस्तकों के अतिरिक्त जौनपुर का तत्कालीन वर्णन अवहट्ट भाषा में महाकवि विद्यापति रचित 'कीर्तिलता' काव्य-ग्रन्थ के आधार पर किया गया है। लेखक समस्त सहायक पुस्तकों के विद्वान लेखकों के प्रति अतिशय आभारी है। साथ ही वह अपने पूर्व प्रकाशित उपन्यासों के पाठकों एवं अन्य समस्त मित्रों के प्रति कृतज्ञता प्रदर्शित करता है जिन्होंने अपने अमूल्य सुझाव देते हुए उसकी आशाओं को सदैव उठाये रखा। आदरणीय श्री गिरिजाशंकर पाण्डेय, शास्त्री एम० ए० एल० एल० बी० तथा श्री गयादीन त्रिपाठी बी० ए० बी० एड० से समय-समय पर जो सत्परामर्श एवं बहुमूल्य निर्देशन प्राप्त हुए, उनके प्रति आभार-प्रदर्शन कृतघ्नता-सी होगी।

हिन्दी साहित्य में शेरशाह के जीवन पर यह प्रथम कथा है। इसके पूर्व किसी अन्य लेखक ने कोई स्वतन्त्र रचना की है, यह मुझे ज्ञात नहीं। हाँ, काव्य में शेरशाह की प्रशस्तियाँ उपलब्ध हैं। अवधी के प्रसिद्ध महाकाव्य 'पदमावत' के रचयिता मलिक मुहम्मद जायसी

ने अपने उक्त महाकाव्य की प्रस्तावना में अपने काल के नरेश का उल्लेख करते हुए उसकी प्रशंसा की है। जायसी का शेरशाह-सम्बन्धी वर्णन औपचारिक वर्णन नहीं, उसमें ऐतिहासिक सत्य है। जिन बातों को इतिहास के विद्वानों ने बाद में स्वीकार किया, उन्हें ही जायसी ने सहज भाव से अपनी कविता में उतारा है। आज जायसी की उन्हीं कुछ कडवकों के प्रकाश में अपनी प्रस्तुत रचना पाठकों के समक्ष रखते हुए मुझे अत्यधिक हर्ष हो रहा है।

शेरशाह का चित्रण कहाँ तक सफल हो सका है, मैं नहीं जानता। इसे तो मेरे उदार पाठक ही बतायेंगे। इतना मैं अवश्य कहूँगा कि इस रचना में जो कुछ भी अभाव या त्रुटियाँ दिखायी देंगी वह सब मेरी अनुभवहीनता के कारण, और जो कुछ वैशिष्ट्य होगा वह मेरे गुरुजनों की कृपा है।

—महेश कुमार शर्मा

शेरशाह-प्रशस्ति

सेरसाहि देहली-सुलतानू। चारिउ खण्ड तपै जस भानू॥
ओहि छाज छात औ पाटा। सब राजै भुइँ धरा लिलाटा॥
जाति सूर औ खाँड़े सूरा। औ बुधिवन्त सबै गुन पूरा॥
सूर नवाये नवखण्ड वई। सातउ द्वीप दुनी सब नई॥
तह लगि राज खड़ग करि लीन्हा। इसकन्दर जुलकरन जो कीन्हा॥
हाथ सुलेमाँ केरि अँगूठी। जग कहँ दान दीन्ह भरि मूठी॥
औ अति गरू भूमिपति भारी। टेकि भूमि सब सिहिट सँभारी॥

दीन असीस मुहम्मद, करहु जुगहि जुग राज।
बादशाह तुम जगत के, जग तुम्हार मुहताज॥

बरनौं सूर भूमिपति राजा। भूमि न भार सहै जेहि साजा॥
हय गय सेन चलै जग पूरी। परबत टूटि उड़हिं होइ धूरी॥
रेनु रैनि होइ रबिहिं गरासा। मानुख पङ्ख लेहिं फिरि बासा॥
भुइँ उड़ि अन्तरिक्ख मृतमण्डा। खण्ड-खण्ड धरती ब्रह्माण्डा॥
डोलै गगन, इन्द्र डरि काँपा। बासुक जाइ पतारहि चाँपा॥
मेरु धसमसै, समुद सुखाई। बनखँड टूटि खेह मिलि जाई॥
अगिलहिं कहँ पानी लेइ बाँटा। पछिलहिं कह नहि काँदौ आटा॥

जो गढ़ न एउ न काहुहि, चलत होइ सो चूर।
जब वह चढ़ै भूमिपति, सेर साहि जग सूर॥

अदल कहौं पहुमी जस होई। चाँटा चलत न दुखवै कोई॥
नौ सेरवाँ जो आदिल कहा। साहि अदल-सरि सोउ न अहा॥
नीर खीर छानै दरबारा। दूध पानि सब करै निनारा॥
परी नाथ कोइ छुवै न पारा। मारग मानुष सोन उछारा॥
गऊ सिंह रेंगहिं एक बाटा। दूध पानि सब करै निनारा॥

अदल जो कीन्ह उमर के नाईं। भई ऊहा सारी दुनियाईं ॥
धरम नियाव चलै सतमाखा। दूबर बली एक सम राखा ॥
सब पृथवी सीसहिं नई, जोरि जोरि कै हाथ।
गङ्ग-जमुन जौं लगि जल, तौं लगि अम्मरनाथ ॥

पुनि रूपवंत बखानौं काहा। जावत जगत सबै मुख चाहा ॥
ससि चौदसि जो दई सँवारा। ताहू चाहि रूप उँजियारा ॥
पाप जाइ जो दरसन दीसा। जग जुहार के देत असीसा ॥
जैस भानु जग ऊपर तपा। सबै रूप ओहि आगे छपा ॥
अस भा सूर पुरुष निरमरा। सूर चाहि दस आगर करा ॥
सौंह दीठि कै हेरि न जाई। जेहि देखा सो रहा सिर नाई ॥
रूप सवाई दिन दिन चढ़ा। विधि सुरूप जग ऊपर गढ़ा ॥
पुनि दातार दई जग कीन्हा। अस जग दान न काहू कीन्हा।
बलि विक्रम दानी बड़ कहे। हातिम करन तियारी अहे ॥
सेर सहित सरि पूज न कोई। समुद सुमेर भडाँगी दोऊ ॥
दान डाँक बाजै दरबारा। कीरति गई समुन्दर पारा ॥
कंचन परसि सूर जग भयऊ। दारिद भागि दिसन्तर गयऊ ॥
जो कोइ जाइ एक बेर माँगा। जनन न भा दुनि भूखा नागा ॥
दस असमेध जगत जेइ कीन्हा। दान पुन्य सरि सौंह न दीन्हा ॥
ऐस दानि जग उपजा, सेर साहि सुलतान।
ना अस भयउ न होइहि, ना कोई देइ अस दान ॥

—मलिक मुहम्मद जायसी

———

ताज खाँ का प्रेत और उसकी सुन्दरी विधवा

उत्सव की पूर्णता जब बरसाती रात के घने अन्धकार में खर्राटे भरती निद्रा की प्रगाढ़ शान्ति में समा गयी तो छावनी में अकेले जागते हुए शेर खाँ ने अपने सहायक हैदर को झकझोर कर कहा—"हैदर, कल चुनार का किला अपना हो जायगा। मेरी इस योजना को देखकर आकाश पागल हो उठा है। उसके मुस्कुराते होंठ जमीन चूमने के लिए बेताब हो उठे हैं।"

अफगानों की छावनी में सन्नाटा छा चुका था। सेना का प्रत्येक प्राणी सो गया था। जाग रहा था तो केवल शेर खाँ जिसकी आँखों से नींद उड़ गयी थी, जिसके मानस पटल पर कभी चुनार दुर्ग, कभी उसकी तरुणी स्वामिनी लाद मलका और कभी उसके प्रतिद्वन्द्वी बादशाह हुमायूँ का चित्र खिंच जाता। शेर खाँ छावनी में टहल रहा था। कभी पलँग पर बैठ जाता, कभी किसी शेर की एकाध कड़ियाँ गुन-गुनाता...फिर चुप हो जाता।

हैदर उसका मुँहलगा सिपाही था। जौनपुर से ही साथ था, जब वह जमाल खाँ के यहाँ था। तभी उसे शेर खाँ ने पहचान लिया था। काम का आदमी था। निद्रा की लहर में ऊँघता हुआ बोला—"सच है परवर्दिगार! दुनिया की खुशियाँ आपके कदमों का बोसा ले रही हैं। इंशाअल्लाह! बादशाहत हुजूर के..."

बादशाहत! शेर खाँ की पुतलियाँ चमक उठीं। उनमें एक प्रदीप्त ज्योति विकीर्ण हो उठी। हिन्दुस्तान की बादशाहत! यही तो उसकी आन्तरिक कामना है, उसका स्वप्न, जिसे बड़े यत्न से सँजोता वह अपने

प्रयत्न में तल्लीन है। कितने वर्ष बीत गये। सफलता का मार्ग अब दिखायी पड़ने लगा है। भारत का विजेता बाबर अफगान लोदियों, राजपूतों और देश की अन्य सभी शक्तियों को पराजित कर, अपनी सत्ता की पताका गाड़नेवाला फरगना और काबुल का वह छोटा शासक गङ्गा-यमुना के मैदान की हजारों मील की भूमि को अपने विजयी घोड़ों की टापों से रौंदकर सदैव के लिए निद्रा की शान्ति में सो चुका था। इब्राहीम लोदी, राणा साँगा, मेदिनी राय तो बाबर के हाथों ही अस्त हो चुके थे, महमूद लोदी, बीवन, बयाजीद और सुलतान लोदी, उसके बेटे हुमायूँ से टकराकर चूर हो गये थे। महमूद लोदी दादरा की लड़ाई के बाद कहाँ चला गया, उसका कुछ पता न चला। उत्तर भारत में अब अफगानों का नेता अकेला शेर खाँ था। सहसराम के एक साधारण जागीरदार का पुत्र कालान्तर में इतना शक्तिशाली सरदार बन जायगा, कौन जानता था ?

चुनार का अफगान दुर्गपति ताज खाँ दो वर्षों पूर्व मर चुका था। किला उसकी युवती विधवा सुन्दरी लाद मलका के हाथों में था जिसकी सहायता उसके तीन देवर—दाद खाँ, अहमद खाँ और इसहाक खाँ करते थे।

लाद युवती थी, अपूर्व रूपवती ! उसका यौवन भादों की गङ्गा के समान उमड़ रहा था। रूप-माधुरी में तारुण्य की मदिरा पीकर वह उन्मत्त थी। शेर खाँ बहुत पहले से उसके यहाँ आता-जाता था। बाबर के चुनार-विजय के पूर्व से ही उसका यहाँ आना बना था। उसके पीछे चुनार दुर्ग को हस्तगत कर आगे बढ़ने की महत्वाकांक्षा तो थी ही, लाद की मौन निमन्त्रण देती हुई बाँकी चितवन भी थी जिससे खिचकर वह रोहितास्व और सहसराम से चुनार आता। शीघ्र ही बाबर और ताज खाँ दोनों मर गये। बाबर की मृत्यु से शेर खाँ की सामरिक शक्ति को बढ़ने का अवसर मिला और ताज खाँ की मृत्यु ने उसमें एक

महान् आकांक्षा जगा दी। यदि चुनार दुर्ग उसे किसी प्रकार प्राप्त हो जाय तो वह सहज ही हुमायूँ की बढ़ती हुई शक्ति को रोक सकता है। दोआबे के मैदान में अफगानों का झण्डा फिर उसी मस्ती से लहरा सकता है। किन्तु यह सपना साकार कैसे होगा? बीच मे सुन्दरी लाद मलका जो है। क्या वह इस नकशे में कुछ रङ्ग भर सकती है?

शेर खाँ तड़प उठा। लाद की अनुनयभरी आँखें, अनुरागयुक्त चञ्चल पुतलियाँ, भावातुर स्पन्दन और उसकी मधुर बातें स्मरण हो आयीं। क्या वह भी यही चाहती है? हे भगवान! तब उत्तर भारत का राज्य मुगलों से छीनकर पुनः अफगानों की प्रतिष्ठा जमा देने में कोई अड़चन न होगी।

इस बार जब वह चुनार आया तो लाद ने उससे भेंट की थी। शेर खाँ का स्वप्न साकार होना चाहता था। उस विजयोत्सव की खुशी में चुनार का वह पर्वतीय प्रान्त बरसात के सजल मेघों के गर्जन से मुखरित हो रहा था।

भाद्रपद का महीना था। पानी जोरों से बरस रहा था। नदी-नाले उमड़ कर बह रहे थे। गङ्गा किले की ऊपरी दीवार और खिड़की तक आ लगी थीं। उनकी उत्ताल तरङ्गों से प्रताड़ित होकर भी किले की बुर्जियाँ अटल तपस्वी-सी निस्पन्द और अडिग खड़ी थीं।

उत्तर की ओर बगल के मैदान में शेर खाँ का खेमा था। चारो ओर घास के जुट्टे जम आये थे। पत्थरों के टुकड़ों और ऊबड़-खाबड़ टीलों से रास्ता बीहड़ हो गया था। रात के घने अन्धकार में बाहर निकलना भी कठिन था। वर्षा हो चुकी थी, किन्तु बादल अब भी गरज रहे थे। वायु तीव्र और शीतल थी जो वेग से बहती हुई छावनी की रावटियों के रस्सों को हिलाती, कनातों को झकझोरती और मशालों को संत्रस्त करती हुई आँधी की भाँति निकल जाती। कभी-कभी वन्य पशुओं की आवाज दूर पहाड़ पर सुनाई पड़ती।

शेर खाँ ने पर्दा हटाकर बाहर देखा। बिजली कौंधने पर किला आँखों में चमक उठता था। उसके दुर्गम अन्तःपुर में सौकुमार्य की वह पुतली अपनी दुग्ध-धवल कोमल शैया पर निद्राभिभूत हो पड़ी होगी। सहसा उसका ध्यान अपने बेटे जलाल खाँ पर दौड़ गया। वह भी तो किले के भीतर है। उसकी मुट्ठियाँ तन गयीं। भौंहों में बल पड़ा और कन्धे आप-से-आप हिल उठे। उसने हैदर को झकझोरते हुए कहा—"मियाँ सो रहे हो? अब दिल्ली दूर नहीं। उठो, सबेरा होना चाहता है।"

हैदर उसकी ओर चकित दृष्टि से देखता रह गया। शेर खाँ ने फिर कहा—"आज चुनार हमारी मुट्ठी में आ रहा है, कल समस्त हिन्दुस्तान भी आयेगा। बाबर की कब्र अकेली नहीं रह सकती। हुमायूँ! छोकरा!! ऐय्याश!!! शायद वह नहीं जानता कि रूप के चिलमन से लिपटी साकी के सामने भी शेर खाँ जाम नहीं, तलवार बढ़ाता है।... आह, कैसा भयानक तूफान है!"

हैदर ने धीरे से कुछ कहा, परन्तु उसके शब्द घन-गर्जन में विलीन हो गये। तूफान अपनी पराकाष्ठा पर पहुँचता जा रहा था। बिजली आसमान में इस प्रकार दौड़ रही थी मानो बादलों के काले हाथों से मुक्त होकर कहीं दूर भागना चाहती हो। चारों ओर अंधकार फैला था। हवा आसमान को चीरने के लिए दौड़ रही थी। रह-रह कर वृक्षों की डाल टूटने का भयानक शब्द सुनायी पड़ जाता था।

चुनार का किला पर्वत की भाँति अटल खड़ा था। ऐसे कितने ही तूफानों को उसने देखा था। हजार वर्षों के जीवन-काल में कितने उतार-चढ़ाव उसके सामने आये। उसने सबके आँसुओं को पोंछा था। सबके दुःख-दर्द को सुना था, परन्तु क्या उसके साथ रहने के लिए कोई भी तैयार हुआ? कितने आये, कितने गये; पर यह अटल दुर्ग टस से मस न हुआ! इसने जिन्दगी देखी, जवानी देखी, बुढ़ापा और मौत

देखी। इसकी दीवारों पर खून की छींटों के बीच प्रेम की लकीरें हैं, तो कहीं ईर्ष्या की दरारें। हृदय में असंख्य अभिलाषाओं का बोझ और अतृप्ति की आँधी दबाये यह दुर्ग हजार वर्षों से इसी भाँति निस्पन्द, नीरव और अडिग खड़ा है।

किले की उत्तरी दीवाल से गंगा की उत्ताल तरंगें टकरा रही थीं। घनघोर वर्षा के कारण नदी का पानी तेजी से बढ़ रहा था। उत्तरी मैदान पर अफगान सैनिकों का पड़ाव था। शेर खाँ की फौज अपने खेमें में विश्राम कर रही थी। चारों ओर निस्तब्ध रात्रि की अखण्डता में पशु पक्षियों की आवाजें कभी-कभी सुनायी पड़तीं। मशाल की लपटें रह-रहकर अपने उतार चढ़ाव में अंधकार–प्रकाश से आँख मिचौनी खेल रही थीं। कभी-कभी छावनी के घोड़ों की हिनहिनाहट का स्वर वातावरण की शान्दि भेदकर फैल जाता; फिर उसी प्रकार सन्नाटा छा जाता था।

सायंकालिक समारोह समाप्त हो चुका था। लश्कर में पहरेदार अपनी-अपनी जगहों पर मुस्तैद थे। सैनिक और उनके अधिकारी आराम से सो रहे थे। रात आधी बीत चुकी थी। सबकी आँखों में खुमारी छाई हुई थी। सभी स्वप्नों के खिलवाड़ में तल्लीन थे। पर शेर खाँ की आँखों में नींद कहाँ? वह कभी लापरवाही से लेट जाता, कभी इधर-उधर टहलने लगता, या खेमें के दरवाजे पर आकर रुक जाता। ध्यान उचटने पर हैदर से इधर-उधर की बातें करने लग जाता।

एकाएक खड़ाऊँ की खड़ाक्-खड़ाक् ध्वनि से वातावरण गूँज उठा। इस पदचाप में तूफान से भी तेजी और घन-गर्जन से भी अधिक गम्भीरता थी। स्वर पास आता जा रहा था। शेर खाँ चौंक कर उठ खड़ा हुआ। खेमें के दरवाजे पर आया। रेशमी परदे की ओट से उसने स्वर की दिशा में कान लगाये। बिजली की चमक में देखा, ताम्रवर्ण दीप्तानन कनक-

भूधराकार काषाय वस्त्रधारी एक तेजस्वी संन्यासी उसके खेमें की ओर बढ़ता आ रहा था। शेर खाँ के मानस-सागर में कल्पनाओं का ऊहापोह हिल्लोलित हो उठा। उसने स्पष्ट देखा, तूफानी झोंकों का उस संन्यासी पर कुछ भी असर न हो रहा था। उसके बायें हाथ में कमण्डल और दाहिने हाथ में चमकती धातु का एक त्रिशूल था। रात्रि के अँधेरे में ज्योतित बिजली के क्षणिक प्रकाश में त्रिशूल इस प्रकार प्रदीप्त हो रहा था मानो उसने अपनी मुट्ठियों में दामिनी जकड़ ली हो।

थोड़ी ही देर में संन्यासी शेर खाँ के खेमें तक आ पहुँचा। पहरेदार ने आगे बढ़कर उसका रास्ता रोका। उसने नम्रतापूर्वक पूछा—"आप यहाँ क्यों आये हैं? किससे मिलना चाहते हैं?"

"मैं तेरे सरदार से मिलने आया हूँ। खबर कर दे उसे कि एक संन्यासी उससे मिलने आया है, जा।"

"महाराज, रात काफी बीत चुकी है। सरदार आराम कर रहे हैं। क्या आप कल फजर तशरीफ नहीं ला सकते?"

"कल प्रातःकाल?" संन्यासी ने क्षण भर सोचते हुए कहा। "कदापि नहीं। बहता जल और रमता योगी का क्या ठिकाना? जानता हूँ कि वह जागता होगा। बादशाहत के भाग्य में कुत्ते की नींद और चींटी की भूख लिखी जाती है।"

"जो हुक्म"—पहरेदार बोला। उसका हृदय चंचल हो उठा था। मन ही मन बोला—"महाराज, सरदार को आपके आने की इत्तला जाकर देता हूँ। न जाने क्यों आपकी आज्ञा टालने को जी नहीं चाहता।" फिर पूछा—"क्या आपको सामने के पहरेदारों ने नहीं रोका?"

"पहरेदार"—वे मुझे नहीं रोक सकते। कोई नहीं रोक सकता मुझे। मैं जो चाहता हूँ, वही करता हूँ। रूप की साक्षात दीपशिखा रानी पिंगला जब मुझे न रोक सकी, उसका अप्रतिम सौन्दर्य-जाल मुझे

नहीं बाँध सका, यमराज के बन्धन मुझे नहीं जकड़ सके, जब किले की मजबूत दीवारें मेरे रास्ते नहीं बन्द कर पातीं, जब मोह का प्रबल ऊफान उतर चुका है तो इन पहरेदारों के रोकने से मैं रुक सकता हूँ ?" कुछ ठहरकर धीरे-धीरे कहने लगा—"मैं यहाँ का राजा हूँ। यह स्थान क्या, सारा विश्व मेरी मुट्ठी में है। रूप, मृत्यु, माया, लोभ और मोह मेरे पैरों तले कुचल चुके हैं। फिर किसकी शक्ति है जो मुझे आगे बढ़ने से रोक दे ? तू अन्दर जाकर खबर करता है या मैं...।"

संन्यासी के नेत्रों से निकलते ज्योति-स्फुलिंगों से वह साधारण असंस्कृत सिपाही भयभीत हो उठा। बरसाती रात्रि की उस शीतल वायु-लहरी में भी उसका शरीर स्वेद-सिक्त हो उठा। किले के बारे में सुनी हुई हजारों कहानियाँ याद हो गयीं। एक साथ मन में हजारों भूत और प्रेतों की छायाएँ किलकारी मारती, दौड़ती, अँगड़ाई लेकर देह तोड़तीं और अट्टहास करती नाच उठीं। क्या यह भी उन्हीं में से कोई मायावी प्रेत है, जिन या शैतान ? वह काँप उठा।

"ठहरिये महराज, मैं आपके साथ चलता हूँ। लेकिन इसे, अपने हाथ के त्रिशूल को, आप यहीं रख दीजिए। छावनी के अन्दर इसे ले जाने का हुक्म नहीं।"

"त्रिशूल ! यह कैसे अलग हो सकता है ? यही तो मेरे हाथ-पाँव हैं।"

"मैं मजबूर हूँ महाराज। फौज के आईन में रात को हथियार लेकर छावनी में आना मना है। आप अपना फैसला बदल दें तो बेहतर, नहीं..."

"तो मैं लौट जाऊँ, यही न ?" योगी ने त्रिशूल की ओर गम्भीरता से देखा। हाथ ऊँचा कर त्रिशूल को ऊपर उठा लिया और तेजी से सामने जमीन की ओर फेंक दिया। देखते-देखते त्रिशूल का दण्ड चमक कर पृथ्वी में धँस गया। फिर धीरे से बोले—"सिपाही, तुम

अपना कर्त्तव्य पालन करो। मैं अपना निर्णय नहीं टाल सकता। अतः वापस जाता हूँ। यदि आत्मा ने किसी अन्य स्थान की दौड़ नहीं लगायी तो तेरे सरदार से फिर कभी मिलूँगा।"

योगी का निर्णय अटल था। पहरेदार ने काफी समझाया, योगी के पैर विपरीत दिशा में बढ़ने लगे। अचानक सन्तरी साश्चर्य चीख उठा। जमीन में धँसा हुआ त्रिशूल अपने आप बाहर निकल आया। पृथ्वी से निकल कर वायु में तैरता हुआ वह धीरे-धीरे योगी के पीछे-पीछे चलने लगा। सन्तरी के विस्मय-विस्फरित नेत्र खुले रह गये। सोचा, दौड़कर इस कौतूहलपूर्ण दृश्य की सूचना शेर खाँ को दे-दे। वह पीछे मुड़ने ही वाला था कि एकाएक एक आवाज वातावरण में गूँज उठी। बिजली की चमक में सन्तरी ने देखा, सरदार स्वयं योगी के सामने खड़े थे। कह रहे थे—"वापस चलिये महाराज। मैं ही शेर खाँ हूँ। इस लश्कर का सरदार, सहसराम का एक छोटा जागीरदार और हज़रते पाक का नाचीज़ गुलाम...।"

संन्यासी की दृष्टि चारो ओर फैली। देखा, लगभग चार हाथ का एक ऊँचा विशालकाय पुरुष उनके समक्ष खड़ा था। चौड़ा मस्तक, बड़े-बड़े नेत्र और प्रशश्त वक्षस्थल जो धरती समा लेने की शक्ति की घोषणा सुना रहा था। शेर खाँ उस समय निद्रा वस्त्र में था। वर्षा की तीव्र बौछार से उसके शरीर पर पड़ी ढाके की मलमल का कुरता शरीर से चिपट गया था जिसके भीतर उसका लौह शरीर झाँक रहा था।

शेर खाँ की उम्र का अनुमान लगाना कठिन था। उसके कंधे वृषभ जैसे, पुट्ठे माँसल और आँखें चमकने वाली थीं। शरीर की त्वचा पर सौकुमार्य और दृढ़ता एक साथ दिखायी पड़ती थी। अँगुलियाँ लम्बी और नसें तनी थीं। कान बड़े-बड़े और सामने फैले थे। लम्बी नाक के बगल में आँखों के नीचे से एक लकीर-सी बन गयी थी जो

उसकी प्रौढ़ावस्था के सूचक थे, किन्तु राँगे-सी गठी देह में जवानी का जोश लहरा रहा था।

स्वयं शेर खाँ को सामने खड़े देख योगिराज मुस्कुरा उठे। उन्होंने त्रिशूल के तीनों फल शेर खाँ के सीने पर टिका दिये। योगिराज ने गौर से उसकी ओर देखा। शेर खाँ जड़वत् शान्त खड़ा रहा। वह तनिक भी भयभीत न हुआ।

पहरेदार मूर्च्छित हो जाना चाहता था। यह दृश्य देखकर वह चीख उठा था। अन्य सैनिक जाग गये। लश्कर में खलबली-सी मच गयी। कर्मचारी बाहर निकले। सभी ने यह दृश्य देखा। युद्ध-भूमि में मौत के घाट पर खड़े होकर, प्राणों को हथेलियों पर लेकर जिन्दगी से खेल खेलने वाला शेर खाँ एक साधारण संन्यासी के त्रिशूल को अपने सीने पर रखने के लिए तैयार था। योगिराज के हाथ के हलके झटके से त्रिशूल शेर खाँ के वक्ष-स्थल को भेद सकता था। किसी को पास आने की हिम्मत न हुई।

"तुम्हीं शेर खाँ हो ?"

"जी हाँ ! मैं ही आपका नाचीज बन्दा शेर खाँ हूँ। आपकी खिदमत में हाजिर हूँ। अन्दर तशरीफ ले चलिये।"

योगी ने त्रिशूल उसके सीने से हटा लिया। धीरे से बोले—"तूने बहुत देर कर दी खान। मेरे पास समय बहुत कम है और अब तो समय बीत भी चुका..."

"महाराज !"

"परन्तु यदि तू यहाँ तक आ गया है तो मैं तुझे दो बातें बतला ही देता हूँ। तेरी श्रद्धा देखकर तुझे निराश करने को जी नहीं चाहता। तू रास्ते पर चलने वाला है और मैं रास्ता दिखलाने वाला। हिन्दुस्तान के होने वाले बहादुर सम्राट् ! यदि तू यश चाहता है, संसार में नाम रौशन करना चाहता है तो गऊ-ब्राह्मण का सम्मान करना—

विद्वानों और कलाकारों की सदैव प्रतिष्ठा करना। हिन्दू धर्म की प्रतिष्ठा किये बिना तू इस देश में शासन-शक्ति के बल पर सफल नहीं हो सकता। सुना है, तूने शेर मार डाला है और इस उपलक्ष्य में तुझे शेर खाँ की उपाधि मिली है। किन्तु यदि तुम बादशाह बनना चाहते हो तो..."

"सिर-माथे पर...गुलाम तैयार है...कहिये।"

"जैसा करेगा वैसा पायेगा। परमात्मा सबका रक्षक है। अब मैं जा रहा हूँ—" कहते हुए योगिराज ने पैर बढ़ा दिये। शेर खाँ उनके चरणों पर झुक गया। सहसा आकाश में घोर गर्जन हुआ। साधु तेजी से आगे बढ़ गये।

शेर खाँ मन्दगति और उद्भ्रान्त चित् से खेमे में वापस लौटा। उसने कपड़े बदले। इधर-उधर देखा, पर हैदर दिखायी न पड़ा। सोचा, चलकर थोड़ी देर आराम कर ले, पर इच्छा न थी। रात बीतती जा रही थी।

टहलते हुए शेर खाँ खिड़की के पास आकर रुका। रह-रहकर बिजली की चमक में चुनार का वह विशाल सुदृढ़ दुर्ग किसी मायावी दानव की विराट रचना-सा झलक उठता था। किले की ऊपरी बुर्जी पर मशालें जल रही थीं।

"उफ्, कब सुबह होगी?"—शेर खाँ स्वतः बड़बड़ा उठा। आँखों के सामने लाद मलका की मनोहर मूर्त्ति उपस्थित हो गयी। उसके खूबसूरत चेहरे पर अब भी वैसी ही हसीन मुस्कुराहट थी जैसी उसने आज शाम को देखी थी। वह जानता था कि मलका रात की नींद चैन से नहीं गुजार सकती। कल्पना के पट पर मलका का चित्र और भी स्पष्ट हो गया। शेर खाँ अब अपने को न सम्हाल सका। दोनों हाथ उसने उस चित्र की ओर बढ़ा दिये। भावावेश में अपलक दृष्टि से वह उसकी ओर देखता रहा। अचानक वह चौंक उठा। मलका का चित्र आँखों के सामने से गायब था और हाथ किले की सीध में फैले हुए थे।

चुनार का किला! उत्तर भारत का सर्व सुदृढ़ गढ़! मलका से निकाह कर लेने के बाद वह उसकी मुट्ठी में होगा। किले पर अधिकार होते ही उसका मार्ग सर्वदा के लिए साफ हो जायगा। सौ हुमायूँ भी उसके सामने टिकने की हिम्मत नहीं कर सकेंगे।

शेर खाँ टहलता हुआ अपने पलङ्ग के समीप आया। हल्की-सी अँगड़ाई ली और बैठ गया। खेमे के दूसरी ओर दरवाजे पर एक सफेद रेशमी परदा पड़ा था। हवा के झोंको से रह-रहकर वह काँप उठता। शेर खाँ की दृष्टि उन रेशमी लहरों पर टिक गयी। मन विचारों की गुत्थी में उलझ गया।

एकाएक वह चौंक उठा। खेमे के दरवाजे पर लगे परदे पर सहसा एक छाया-मूर्त्ति स्पष्ट होती जा रही थी। शेर खाँ चौकन्ना होकर सीधा बैठ गया।

उसने देखा, आकृति काली और भयानक थी। उसका मुँह पहचानना कठिन था। सिर पर पगड़ी बँधी थी। शरीर पर पूरे वस्त्र, किन्तु थोड़ी देर ध्यान से देखते ही वह छाया स्थूल शरीर में परिवर्तित होने लगी। आकृति एक अफगान सरदार के रूप में परिवर्तित हो गयी जिसके कन्धे, बाहुओं और छाती से रक्त गिर रहा था। उसकी आँखें भट्ठी-सी जल रही थीं। चेहरा भयानक और श्रीहीन था। देखने में वह मुर्दा-सा लगता था।

"कौन हो तुम?"—शेरखाँ चीख उठा। परदे पर हल्का कम्पन हुआ।

बाहर साँय-साँय ध्वनि उत्पन्न करती हुई हवा वेग से चल रही थी। खेमें के मशाल की ज्योति कभी तेज होती, तो कभी धीमी हो जाती जिसकी धुँधली आभा में उसके अपनी ओर बढ़ते आने से शेर खाँ दहल उठा।

आँखें फाड़कर उसने उस छाया-पुरुष को देखा। ऐसा मालूम पड़ रहा था कि उसकी निस्तेज आँखें शेर खाँ पर टिकी थीं। उसका चेहरा

एकदम पीला था। सिर इस प्रकार हिल रहा था मानो अभी धड़ से अलग हो जायगा। मुँह बिलकुल सूख गया और होंठ रह-रह कर बन्द हो जाते। सिर पर बाल दिखाई न पड़ते; यहाँ तक कि पुतलियों और भौंह के बाल भी साफ थे। शेर खाँ उसकी भयानकता देखकर चीख उठा।

अचानक एक धीमा स्वर खेमें में गूँज उठा—"पहचानते नहीं। मैं हूँ ताज खाँ!"—कहकर उसने एक गूढ़ दृष्टि शेर खाँ पर डाली। ऐसा लगा जैसे उसकी आँखों में ईर्ष्या, क्रोध, घृणा और प्रतिशोध की तीव्र आग जल रही थी; किन्तु उसका शरीर काँप रहा था। वह अत्यन्त दुर्बल और शक्तिहीन था। उसमें आक्रमण की शक्ति न थी। उसका रूप जितना ही भयावह था, शरीर उतना ही चीण।

शेर खाँ घबराकर हकलाता हुआ बोला,—"ताज खाँ! लाद मलका का मरहूम शौहर ताज खाँ? तुम तो कभी के मर चुके हो।"—उसके ओंठ एक बार काँप उठे। उसने छत की ओर देखा। बोला—"या खुदा! मैं यह क्या देख रहा हूँ? जो मेरे सामने है, क्या वह सच है?"

"हाँ सच है"—आकृति के ओंठ खुले। परदे पर पुनः एक कम्पन हुआ—"मैं मरहूम ताज खाँ की रूह हूँ। आज की रात मैं तुमसे पहली और आखिरी बार मिलने आया हूँ। शेर खाँ, मैं तुम्हारी होने वाली शादी पर तुमको मुबारकबाद देता हूँ। पता नहीं, फिर तुमसे मुलाकात हो सकेगी या नहीं। कल तुम लाद मलका से निगाह पढ़ा लोगे। वह खूबसूरत परी कल तुम्हारी हो जायगी जो कभी मेरी थी। तुम कल उसके शौहर हो जाओगे जिसका शौहर कभी मैं था। शेर खाँ, तुम किस्मत के धनी हो। खुदा, वाकई, तुम पर मेहरबान है। कौन जानता था कि सहसराम के मामूली जागीरदार का लड़का फरीद हिन्दुस्तान की बादशाहत पाने का ख्वाब देखने लगेगा...।" कह कर

वह एक क्षण साँस लेने के लिए रुक गया जैसे वह काफी थका हो और बोलने में भी उसे कष्ट होता हो।

शेर खाँ चुपचाप उसकी ओर देखता रह गया। वह बोलने का प्रयास करके भी कुछ कह न सका। क्या यह सचमुच लाद का पिछला शौहर है। उस लाद का जो कल मेरी अंकशायिनी होगी। आह! एक मुक्त रमणी का यौवन-दान जिसका रस दूसरा पुरुष पहले ही ले चुका है और अब वह जूठे पर गिर रहा है। क्षण भर के लिए उसका दिल छोटा और उदास हो गया। उसे अपने पर क्षोभ और ग्लानि हुई। वह कितना नीचे उतर गया था! क्या वह इस प्रेत का रकीब है? परन्तु वह तत्काल सँभला। कौन कहता है? शेर खाँ लाद पर कभी नहीं गिरा। उसे तो चुनार चाहिये। बिना चुनार गढ़ प्राप्त किये उसका रास्ता अवरुद्ध है। चुनार दुर्ग हाथ में करके ही वह उत्तर भारत में अपना प्रभुत्व जमा सकता है। और यह किला विधवा लाद मलका के हाथ है। किला लेने के लिए उसे भी प्राप्त करना आवश्यक है। दूसरे ही क्षण उसका मन फिर उसी उत्साह से भर उठा।

"तुम्हारा बाप हसन कितना खुशकिस्मत है शेर खाँ। उसने तुम्हारी परवरिश का जरा भी ख्याल न किया, परन्तु तुम उसका नाम रोशन करोगे। मैं कितना अभागा हूँ जो अपने ही बेटे के हाथों मारा गया। अपनी प्यारी बेगम को मैं जरा भी सुख न दे सका। काश! प्यारी लाद मलका को एक बेटा हो गया होता और मुझे शादी करके अपनी मौत बुला लेने का मौका न मिलता।"

फिर कुछ ठहर कर बोला—"शेर खाँ, मैं तुम्हारी खुशकिस्मत पर तुमसे जलता नहीं। तुम्हें एक राज़ की बात बतलाने आया हूँ। आज के बाद मैं तुम्हारे सामने कभी न आ सकूँगा। जानते हो क्यों? यह वही जगह है जहाँ पहली दफा मैंने लाद मलका का बोसा लिया था। कल सूरज की रोशनी जमीन पर पड़ने के साथ मलका तुम्हारे पास होगी।

तुम उसे उसी तरह प्यार करोगे जैसे मैं किया करता था। मैं यह कभी देख नहीं सकूँगा। अपनी आँखों में मैं वह अँगारे नहीं पैदा करना चाहता जिनमें तुम्हें जला देने की ताकत हो। जो होना है खुदा उसे किये बिना नहीं रहेगा। मलका तुम्हारे दिल में ही नहीं, मुट्ठी में भी है। इसके पहले कि बदकिस्मती मुझे यह नज़ारा दिखलाये, मैं यहाँ से कहीं दूर चला जाना चाहता हूँ; लेकिन जाने के पहले अपना तजुर्बा और जिन्दगी का राज़ तुम्हें बदला देना चाहता हूँ कि किसी औरत पर यकीन न करना। उसके सामने अपना कोई राज़ जाहिर न करना। तुम उसे प्यार करना। बड़ी नेक दिल है वह; लेकिन तुम प्यार करना एक मर्द की तरह उस औरत को। अब मैं जा रहा हूँ शेर खाँ। मैंने तुमको सिर्फ जबानी ही मुबारकबाद दिया। कुछ दे नहीं सका। और दूँ भी क्या? तुम तो मेरी मजबूरियों से वाकिफ हो। यहाँ तक कि मैं तुम्हारे करीब भी नहीं आ सकता। सब कुछ तो खो चुका हूँ। जो कुछ अमानत बाकी है, वह भी किसी के सीने में है, जो कुछ ही घंटों में तुम्हारी मुट्ठी में होगी। खुदा हाफिज शेर खाँ! अगर यह जमीन इसी तरह कायम रही तो फिर कभी मुलाकात करूँगा।"

एकाएक तेजी से परदा फड़फड़ा उठा। आकाश चीख उठा और छाया अदृश्य हो गयी। पलकों ने पुतलियों को ढँक लिया था। केवल रूह की आवाज शेर खाँ के कानों में गूँज रही थी। विश्वास नहीं हो रहा था कि वह जो कुछ देख चुका था, सुन चुका था—स्वप्न था या सत्य! स्वप्न और सत्य के बीच कितना निकट सम्बन्ध था! केवल कुछ क्षणों का फासला!

किन्तु यह फासला भी मानो अनन्त था। इसी स्वप्न और सत्य के पलने में तो जिन्दगी झूलती है। उसके बन्धन टूटते ही जीवन मिट्टी में मिल जाता है। जो आज स्वप्न है, कल सत्य हो सकता है। जो आज सत्य है, कल कहानी बन जायगा।

कौन जानता था कि सूर-कबीले का एक साधारण व्यक्ति हसन अपने समय के सबसे महिमामय पुरुष शेर खाँ को पैदा करेगा। कौन जानता था कि बचपन में अपने पिता और विमाता से तिरस्कृत फरीद जौनपुर के जागीरदार जमाल खाँ की दया पर पलकर शेर खाँ बन जायगा। यह सब किसी समय स्वप्न था जो धीरे-धीरे सत्य हो गया था।

सहसा शेर खाँ को अपने जीवन की एक घटना का स्मरण हो आया। आँखें बंद किये वह विचारों के आकाश में उड़ता जा रहा था। कितनी विचित्र घटना थी वह! एक सत्य घटना जो आज स्वप्नों की दुनिया तक ही सीमित है। जौनपुर जीत लेने के बाद आगरे में विजय की खुशी मे मुगल सम्राट बाबर द्वारा दावत दी गयी। उस दावत में सम्मिलित होने का अवसर उसे भी मिला था।

उस समय वह बिहार के अफगान सरदार बहार खाँ लोहानी की रियासत में एक साधारण सरदार था। संसार में उसने नया स्वप्न देखना शुरू कर दिया था। अब भी उसके कानों में बाबर के वह शब्द गूँज रहे हैं जब उसने अपने प्रधान सरदार तरदी बेग की ओर घूरकर उसकी ओर संकेत करते कहा था—"मिर्ज़ा, यह जवान किस शान से गोश्त काट कर खा रहा है। मालूम होता है, यह किसी दिन जरूर बादशाह होगा।"

तरदी बेग ने नम्रता से सिर झुकाकर कहा था—"जिसपर आलमपनाह की मेहरबान निगाह पड़ जाय...।"

बाबर तरदी बेग के साथ आगे बढ़ गया था और स्तब्ध फरीद उन्हें अपलक देखता रह गया। भले उस बात को तरदी बेग और मुगल उमरा भूल गये हों, भारत में तैमूर का वंशधर और स्वर्गीय बाबर का उत्तराधिकारी हुमायूँ भी उस एक दिन की दावत में कही गयी अपने पिता की उक्ति को विस्मृत कर चुका हो, किन्तु फरीद ने उस एक बात को बड़े यत्न से सँजो कर अपनी छाती के निगूढ़ तल

में छिपा कर रखा है। बाबर की कही हुई बात झूठी नहीं हो सकती। उसे सत्य कर दिखाने का काम मेरा है। आह! वह बादशाह हो जायगा। कौन बचा रह गया है जो उसका मुकाबला कर सके? उसने मन ही मन अपने प्रतिद्वन्द्वियों को गिना—हुमायूँ, गुजरात का सुलतान बहादुरशाह, बङ्गाल का नुशरतशाह! वह इन्हें अवश्य अपने मार्ग से हटाकर अपना पथ प्रशस्त करेगा।

शेर खाँ विचारों की लहरों के उतार-चढ़ाव पर काफी ऊँचा उठ चुका था। अचानक किसी वस्तु के गिरने की आहट ने उसकी निद्रा में बाधा दी। वह चौंककर उठ बैठा। पीछे मुड़कर देखा—हैदर खड़ा था।

"हैदर! तुम कहाँ चले गये थे? मैं उस फकीर से मिल कर आया तो तुम न मिले"—शेर खाँ ने अपने नग्न सिर पर हाथ फेरते हुए पूछा।

"हुजूर! इत्तला दिये बिना जाने के लिए मैं माफी चाहता हूँ। बात यह थी कि आप उस हिन्दू फकीर से जब मुलाकात करने चले गये थे तो मैं भी आप ही के साथ बाहर निकला था। मैंने सोचा, चलकर एक बार सिपाहियों पर नजर डाल लूँ। मुझे खौफ था कि कहीं सभी सिपाही सो न जाँय, जिससे कोई मुश्किल आ टपके। लेकिन ज्यादातर सिपाही जाग रहे हैं।"

"यह तुमने बड़ा अच्छा किया। इसका ख्याल रखना निहायत जरूरी था। वरना आज जश्न में होश खोकर यह खेमा हुमायूँ की लश्कर की तरह पड़ा है। काफी देर लगी तुमको। बैठ जाओ, थक गये होगे।"

"मेहरबानी परवरदिगार की! दरअसल मैं करीब एक घड़ी पहले ही हुजूर के कदमों में हाजिर हो गया था, लेकिन बन्दानेवाज खयालों में इतने मशगूल थे कि मैंने बीच में छेड़ना ठीक नहीं समझा।"

"ओह ! तो उस समय तुम यहाँ मौजूद थे ? हैदर, क्या तुमने रेशम के परदे पर कुछ देखा था और कुछ अजीब-सी आवाजें सुनी थीं ?"

"रेशम के परदे पर !...आवाजें !" हैदर ठुड्डी पर हाथ रखकर कुछ क्षण तक सोचता रहा। फिर धीरे से बोला—"माफी चाहता हूँ सरकार ! मैंने कुछ समय पहले रेशम के परदे पर एक छिपकिली देखी थी और कभी-कभी सियारों की आवाजें सुनायी पड़ जाती थीं...।"

सहसा दरवान के प्रवेश करने से हैदर आगे कुछ न कह सका। दरवान ने झुकते हुए शेर खाँ को सलाम किया और नम्रता से बोला—"साहबे आलम, आपसे मिलने के लिए किले से एक बाँदी आयी है। अन्दर आने का हुक्म चाहती है।"

"भेज दो"—शेर खाँ बोला। सैनिक वापस लौटा और थोड़ी देर में एक बाँदी खेमे में उपस्थित थी। उसने अदब से झुककर शेर खाँ को सलाम किया। इसी समय भोर के तीन बजे का गजर बजा।

"कहो, कोई खुशखबरी लाई हो ?"—शेर खाँ ने पूछा।

"परवरदिगार, मलका ने मुझे इसलिये यहाँ भेजा है कि वह जानना चाहती हैं कि क्या हुजूर की कदम-बोसी की किस्मत किले के बाग की बादे-शबा पा सकती है ?"

"जरूर !"—शेर खाँ ने प्रसन्नता से कहा—"मलका से कहना कि हम किले के बाग में जरूर तशरीफ लायेंगे। हमें उनसे वहाँ मिलकर खुशी होगी। हम उनसे मुलाकात करने को बेकरार हैं।"

बाँदी ने झुककर फर्शी सलाम किया और शीघ्रता से वापस लौट गयी। उसके जाने के बाद शेर खाँ मुस्कुराया और फिर खिलखिलाकर हँस पड़ा। उसे अत्यधिक प्रसन्न देखकर हैदर भी मुस्कुराये बिना नहीं रह सका।

"सबेरा होने ही वाला है"—नम्रता से हैदर बोला—"अब

तो तनहाई छोड़ने का समय हो गया है। आपको मलका से मुलाकात करने भी जाना है।"

"मैं अब सोना चाहता हूँ हैदर"—शेर खाँ ने जम्हाई लेते हुए कहा। हैदर आश्चर्य से शेर खाँ की ओर देखने लगा। शेर खाँ ने हैदर के मनोभावों को समझ लिया। मुस्कुरा पड़ा। धीरे-से बोला—हैदर, तुम अनुभवी तो अवश्य हो, किन्तु कभी-कभी चूक जाते हो। याद रखो, किसी औरत से उसके बतलाये समय और जगह में नहीं मिलना चाहिये। यदि मुझमें ताकत होगी तो मलका खुद यहाँ तक खिंची चली आयेगी। शेर खाँ मुहब्बत की भीख नहीं माँगता, लेकिन खैरात जरूर करता है...।"

शेर खाँ की बातें सुनकर हैदर की आँखें खुली रह गयीं। वह गम्भीरता से उसकी ओर देखता रह गया। शेर खाँ टहलता हुआ खिड़की के पास आया। आसमान की ओर आँखें उठाईं। तूफान शान्त हो चुका था। बादल तेजी से इधर-उधर भागे जा रहे थे। हवा की तेजी काफी कम हो चुकी थी। दूर से नदी के जल-प्रवाह का स्वर अनवरत गम्भीर घोष करता हुआ सुनायी पड़ रहा था।

अकस्मात घोड़े की टापों से वातावरण गूँज उठा। शेर खाँ की भौहें खिंच गयीं। धीरे-से फुसफुसाया—"यह कौन आ रहा है? कुछ जानी-पहचानी-सी आवाज है। क्या फारूख आ रहा है?"

टापों की आवाज पास आती गयी। थोड़ी ही देर में एक नौजवान सवार शेर खाँ के खेमें के सामने रुका। एक क्षण भी विलम्ब किये बिना उसने खेमें में प्रवेश किया। सिर नीचे झुकाया और शीघ्रता-से बोला—"सरदार बहादुर जिन्दाबाद!"

"क्या खबर लाये हो फारुख? खैरियत तो है?"

"माफी चाहता हूँ, सरदार। खबर बहुत बुरी है। हुमायूँ धीरे-

धीरे इसी ओर बढ़ रहा है। कुछ ही दिनों में वह यहाँ तक पहुँच जायगा"—हाँफते हुए सवार ने कहा।

"आने दो इस तूफान को। हम इसका मुकाबला करने को तैयार हैं"—शेर खाँ ने लापरवाही से कहा—"हमें इसी मौके का तो इन्तजार था। और जानते हो! यह जिन्दगी ही उस जहाज की तरह है जो हजारों जिम्मेदारियाँ लादे तूफानी समुद्र से लड़ता, लहरों से टकराता आखिर अपनी मंजिल पर पहुँच ही जाता है। यहाँ तो जब से आँखें खुलीं, तूफान का हाहाकार ही देखा। और फिर मर्द की जिन्दगी क्या...?

शेर खाँ ने मुस्कुराते हुए अपने शयनागार में प्रवेश किया।

बाहर मुर्गे ने बाँग दी। सैनिकों में चहल-कदमी प्रारम्भ हो गयी। खेमा समुद्र की लहरों के गर्जन-स्वर-सा मुखरित हो उठा।

२

प्रेम में भी दाँव-पेंच ?

ज़री के रेशमी वस्त्र प्रतीक्षा के भार से बोझिल हो चुके थे। आठ बज चुका था, किन्तु शेर खाँ अभी तक किले के बाग में नहीं आया था। यौवन और रूप की अनिंद्य पुतली, चुनार दुर्ग की एकमात्र स्वामिनी उसकी प्रतीक्षा करते-करते आतुर हो चुकी थी। उसके प्रेमाकुल मन में नाना प्रकार के विचार उथल-पुथल मचा रहे थे।

हो सकता है, शेर खाँ उससे निकाह पढ़ने से इन्कार कर दे। परन्तु इसका क्या कारण हो सकता है? वह युवती है, सुन्दरी है, आकर्षक है। शेर खाँ खूबसूरती को प्यार करता है।

सहसा वह चिहुँक उठी। न जाने कब एक बार किसी ने उससे कहा था कि शेर खाँ पर हूरों के आसमानी नूर का भी असर नहीं पड़ पाता। सौन्दर्य के जाल में फँसने के लिए उसके पास समय कहाँ? वह तो प्रतिपल राजनीति के पाँसे फेंकने में व्यस्त रहता है। तो क्या लाद के मनमोहक रूप का उसपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा?

यह नहीं हो सकता। यह असम्भव है कि चाँद हँसे और धरती पर उसकी चाँदनी न छिटके। और यदि वह पागल न हो तो? इससे क्या होता है? शेर खाँ उसको यों ही नहीं छोड़ सकता। उसके पास अपार धन है, सुदृढ़ किला है। शेर खाँ को इन सबकी जरूरत पड़ेगी। वह आगे बढ़ना चाहता है। उसे मेरे सामने आना ही होगा।

सहसा उसका ध्यान खिंचा। तब क्या वह उसके धन से ही प्रेम करता है? उससे उसे कोई रुचि नहीं? यह कल्पना करते ही मलका

सिहर उठी। क्या शेर खाँ को किला और खजाना सौंप देना ठीक होगा ? नहीं! नहीं! अपना हाथ इस तरह कटा लेना उचित नहीं। फिर अपने देवरों से छुटकारा पाने का भी तो कोई अन्य मार्ग दिखायी नहीं पड़ता। उनके शिकञ्जों में रहकर कब तक कफस के परिन्दे की भाँति पड़ी रहेगी ? जिन्दगी की शान पाने के लिए उसका शेर खाँ से निकाह कर लेना जरूरी है। वह अपनी मुहब्बत से शेर खाँ को जीत लेगी।

मलका यह सोचकर मुस्कुरा पड़ी। उसकी आँखें चमकने लगीं। शेर खाँ बहादुर है, धोखेबाज नहीं। वह उसे धोखा नहीं दे सकता। हो सकता है, सुबह उसे कोई काम आ पड़ा हो। पहले वायदे पर न पहुँचने से उसपर सन्देह करना ठीक नहीं। उससे मुलाकात कर लेना लाद ने जरूरी समझा।

"हुश्ना! जाओ नीचे। देखो, सरदार अभी तक आये क्यों नहीं ? मेरा मन न जाने क्यों घबरा रहा है"—उसने तत्काल बाँदी को बुलवा कर नीचे अफगानों की छावनी में शेर खाँ का समाचार लाने का आदेश किया।

"अभी गयी"—मुँह लगी बाँदी ने उत्तर दिया। मन में कहा—'जब आँख किसी से लग जाती है तो ऐसा ही होता है।' किन्तु लाद ने न सुना। वह अपने भावी शौहर को दिये जाने वाले भेंट के प्रबन्ध में लग गयी। शान्तिपूर्वक सारी व्यवस्था करने का आदेश दिया। पालकी उसने महल के फाटक पर भेज दी। फिर शृङ्गार-घर में जाकर उसने शीघ्रता से कपड़े बदले, बालों में कंघी की, आँखों में काजल की पतली रेखाएँ खींचीं और एक बार दर्पण के सम्मुख जाकर अपना रूप देखा। शीशे के भीतर सौन्दर्य मुस्कुरा रहा था। उसके उभरे उरोज विप्लवी हो रहे थे। आँखों में नशा छा रहा था। लाद ने एक अँगड़ाई ली। शरीर के रोम-रोम में एक लहर-सी दौड़ गयी।

भाँति-भाँति से सुसज्जित होकर और आभूषण धारण कर उसने

बुर्का उठा लिया। ओढ़े या नहीं ? न ओढ़ने पर लोग क्या कहेंगे ? क्या समझेंगे ? फबतियाँ कसेंगे और बेशरम बतायेंगे। किन्तु ओढ़ लेने से इससे भी अधिक हानि की आशङ्का है। यह मुखड़ा शायद वह निर्मोही देख न सके और वापस चला जाय। तब इसे न पहनूँ! ठीक है, रज़िया ने कब पर्दा किया था ? और पर्दा भी किससे ? उसने बुर्का उठाकर फेंक दिया। कुशल अहेरी की भाँति शिकार को सामने पाते ही अपना वार करने का निश्चय कर वह शृंगार-कक्ष से बाहर निकल आयी।

"कहाँ तशरीफ ले जा रही हो बहन ?" किसी के शब्द कानों में गूँज उठे। मुड़कर देखा, उसका भाई खड़ा था।

पहले सोचा, इधर-उधर घूमने का बहाना बना दूँ। परन्तु इससे लाभ क्या ? यह बात तो छिप नहीं सकती कि लाद शेर खाँ से मुलाकात करने गयी थी। साफ-साफ कहना भी उचित नहीं जान पड़ा। आश्चर्य है, इतनी बड़ी जागीर की स्वामिनी अपने प्रेमी से मिलने जाय। अभी तक यही सुना गया है कि प्रेमी अपनी प्रेमिका के पास दौड़ता है, प्यासा कूएँ के पास जाता है, कूआँ प्यासे के पास नहीं। मलका अजीब सङ्कट में पड़ गयी। भाई से शेर खाँ की मुलाकात की बात स्पष्ट कह देने से, सम्भव था, वह मलका के चरित्र पर कुछ सन्देह करे। लेकिन वह अपने मन की बातें किससे कहे ? किसे अपना दिल दिखाये ? कोई भी तो नहीं है उसका। एक क्षण के लिए मलका को ऐसा प्रतीत हुआ मानो वह इस विशाल संसार में असहाय है; असम्बल, अकेली और निराधार ! कोई उसका साथी नहीं, कोई अपना नहीं।

मलका ने आँखे चुराते हुए हसन की ओर देखा।

हसन बहिन के मनोभावों को समझ गया। उसकी हालत वह अच्छी तरह जानता था। मलका की दशा उस नदी के समान थी जिससे समुद्र अभी कोसों दूर हो। हसन ने गौर से उसकी ओर देखा।

एकाएक गम्भीर हो गया। धीरे-से पूछा --"तो अपने देवरों को यह किला सौंपने के लिए तुम तैयार हो ?"

"मैं आपके कहने का मतलब नहीं समझी, भाईजान ?" चकित होते हुए मलका ने पूछा—"किले का सौंपना कैसा ?"

"मैं जानता था बहन"—दृढ़तापूर्वक हसन बोला। उसने इधर-उधर गौर से देखा—"जानती हो, तुम्हारे निकाह की क्या शर्तें तुम्हारे देवरों ने शेर खाँ के सामने रखी हैं ? किले पर कब्जा वे करेंगे, और शेर खाँ को खजाने का एक भाग, कुछ हिस्सा, दे दिया जायगा।"

शर्त सुनते ही मलका का हृदय रो उठा। अपने देवरों के प्रति उसके हृदय में घृणा की लहरें उठने लगीं। जो अपनी ओर से उसके शरीर का शेर खाँ के हाथों सौदा कर रहे थे। तब उसका खरीदार शेरखाँ ! क्या वह भी मलका के खजाने से ही प्रेम करता है ? यदि यह सच हो तो उसके हाथ खजाना ही लगेगा। उसकी आँखों के सामने पहली मुहब्बत का शबाब नाच गया। देखते-देखते पलकों से दो मोती टपक पड़े।

हसन कहता जा रहा था---"सब्र रखो बहन। तुम अब भी सब कुछ कर सकती हो। यह सब तुम्हारी अँगुलियों पर नाच सकते हैं। तुम शेर खाँ और अपने देवरों से कह दो कि किला और खजाना तुम उनको देना चाहती हो। फिर देखना दूध और पानी अलग हो जायगा।

"आप ठीक कहते हैं भाईजान"—मलका ने दृढ़ता से कहा—"मैं ऐसा ही करूँगी।"

हसन मुस्कुरा उठा। उसने आगे बढ़कर बहिन के हाथ चूमे।

"खुशकिस्मती है हमारी कि मेरी नेक सलाह तुम्हें पसन्द आयी"—हसन बोला—"लेकिन जल्दी करो। काम बहुत ज्यादा है और समय बहुत कम। मेरे खयाल से तुम अभी जाकर शेर खाँ से मुलाकात कर लो।"

"वहीं जा रही हूँ। वापस आकर आपसे फिर मुलाकात कर लूँगी।"

"मैं तो शायद तुम्हारे आने तक वापस लौट जाऊँगा। कुछ जरूरी काम आ पड़ा है। फिर कभी मुलाकात करूँगा। यदि मेरे बताये तरीके से तुमने काम लिया तो खुदा की दुआ से तुमको जरूर कामयाबी हासिल होगी। यहाँ हम लोगों का ज्यादा ठहरना ठीक नहीं। मैं चलूँ। खुदा हाफिज !"

"खुदा हाफिज"—बेगम ने सुख-दुख, आशा-निराशा और उत्साह तथा ग्लानि के द्वन्द में पड़कर उत्तर दिया।

धीरे-धीरे वह आगे बढ़ी। सीढ़ियों को पार किया। बाहर आयी और पालकी में बैठ गयी।

कहारों ने पालकी पर एक रेशमी परदा डाल दिया।

कुछ सैनिकों और दासियों के साथ बेगम थोड़ी ही देर में शेर खाँ के खेमे तक पहुँच गयीं। रास्ते के दोनों ओर परदे लगा दिये गये थे। बेगम ने खेमे के अन्दर प्रवेश किया। शेरखाँ ने बड़ी ही प्रसन्नता से मलका का स्वागत् किया।

लाद ने शेर खाँ की ओर देखा। उसकी नजरें लाज से झुक गयीं। उसे ऐसा मालूम पड़ने लगा मानो कोई शक्ति उसे चुम्बक की भाँति अपने पास खींचती जा रही हो। उसका मन कहीं और था, शरीर रोमाञ्चित और कण्टकित। शेर खाँ के सामने जाकर उसका सुकोमल शरीर ढीला पड़ता जा रहा था।

उसकी खामोशी देखकर शेर खाँ चिन्तित हो उठा। एक ओर मलका के आने की प्रसन्नता थी तो दूसरी ओर उसके मुरझाये चेहरे को देख दुःख भी। वह जानता था कि लाद उसके किले के बाग में न पहुँचने से उदास है।

उसने गौर से मलका की ओर देखा। एकाएक वह विचारों से दब-सा उठा। उसका पैंतालिस साल का तजुर्बा गलत नहीं हो सकता !

उसने मलका के चेहरे को गौर से पढ़ा। उसपर प्रेम की थकान के चिन्ह नहीं थे, वरन् जिन्दगी के ऊफान का जोश झलक रहा था।

तो क्या मलका यह सोचती है कि शेर खाँ उसके खजाने और चुनार किले पर कब्जा करने के लिए उससे निकाह कर रहा है? जरूर! अगर लाद एक मामूली औरत होती तो शेर खाँ उससे कभी शादी नहीं करता। और अगर उसका खयाल ऐसा है भी तो क्या बुरा है! उसने गौर से सोचा। उसका चेहरा सुर्ख हो गया। आँखें मिंच गयीं। वह मलका का किला और खजाना जरूर लेना चाहता है, पर साथ ही मलका से प्रेम भी करता है। लेकिन प्रेम और धन का सम्बन्ध भी क्या? दोनों अपनी जगह पर हैं। सहसा शेर खाँ की आँखें चमक उठीं। वह मलका से मुहब्बत करता है तो क्या यह जरूरी है कि वह उससे शादी भी करे! शेर खाँ के हृदय में तूफान उठ खड़ा हुआ। विचारों की प्रबल धारा बहने लगी जिसके दो किनारे थे। एक ओर प्रेम था तो दूसरी ओर शादी और धन। परन्तु जल्दी-बाजी में किसी निर्णय पर पहुँच जाना शेर खाँ के सिद्धान्त के विपरीत था।

चेहरा वह शीशा है जिसमें मनुष्य के दिल की परछाहीं साफ देखी जा सकती है। शेर खाँ मलका के आन्तरिक भावों को उसके चेहरे से ही भली भाँति समझ गया। उसने गम्भीरतापूर्वक कहा—"आज मैं अपने वायदे के मुताबिक तुम्हारे पास तशरीफ न ला सका। वाकई इसके लिए मुझे काफी रंज है। बात यह थी कि आज बड़े सबेरे ही तुम्हारे देवर मीर दाद, मीर अहमद और मीर इसहाक साहबान तशरीफ लाये थे। उन्होंने मुझे बातों में फँसा लिया और तुम्हारे साथ होने वाली भेंट का समय बिगाड़ दिया।"

शेर खाँ ने मलका की ओर मार्मिक दृष्टि डाली। वह कुछ कहने

ही वाली थी कि शेर खाँ बोल उठा। वह अपनी बात खत्म किये बिना उसे बोलने का अवसर नहीं देना चाहता था। उसने कहना जारी रखा—"मलका, तुम जानती हो, मैं तुम्हें, केवल तुम्हें अपनी मुहब्बत के दामन में समेटने आया हूँ। लेकिन मुझे यह जानकर काफी रंज हुआ कि कुछ लोगों के दिल में मेरे लिए गन्दे खयालात पैदा हो गये हैं। वे सोचते हैं कि मैं तुमसे किला और खजाना पाने के लिए ही शादी कर रहा हूँ। उनका यह खयाल......।"

मलका चौंक उठी। क्या कहते हैं! यह मेरा खजाना और किला लेने के लिए ही मुझसे ब्याह कर रहे हैं? क्या यह सच है? या खुदा! उसका मन तर्कों के जाल बुनने लगा। अब उसका मन अस्थिर हो चला था। उधर शेर खाँ कहता जा रहा था—"लोग समझते हैं कि मैं यह सब अपने ऐशो-आराम के लिए हड़पना चाहता हूँ। मेरे पास इतना खजाना है कि मैं पूरी जिन्दगी गुलछर्रे उड़ा सकता हूँ। लेकिन मेरा खयाल ऐसा नहीं! मुझे अपने को ही नहीं, वरन् अपने भाइयों को भी देखना है। किसे परवाह है बेचारे उन अफगान भाइयों की, जिनकी सत्ता हुमायूँ के हाथों नेस्तनाबूद होती जा रही है। किसी ने मुगलों से टक्कर लेने की भी सोचा है? यदि तुमने भी यही निश्चय किया है तो कोष का उचित प्रबन्ध करके मेरे साथ चलो। मुझे तुम्हारी कोई भी चीज नहीं चाहिये। मुमकिन है, तुम्हें हिन्दुस्तान की मलका बनाने का ख्वाब मैं पूरा न कर सकूँगा।

शेर खाँ ने देखा कि लाद की बड़ी-बड़ी रतनार आँखें उस पर एकटक गड़ी हुई थीं। उसका चेहरा शीशे की तरह धुल चुका था। दिलों की बातें खत्म हुईं। लेकिन एक राजनैतिक दाँव अभी बाकी था। शेर खाँ पूर्ववत् मुद्रा में बोला—"किले को लेकर मैं करूँगा भी क्या? चार दिनों तक उसमें जश्न मनाया जा सकता है क्योंकि हुमायूँ का

चन्द दिनों में ही यहाँ हमला होने वाला है। उसके आते ही सब कुछ हवा की तरह हाथ से निकल जायगा।"

शेर खाँ की इस बात का मलका पर गहरा प्रभाव पड़ा। उसके मन में यह दृढ़ विश्वास हो गया कि शेर खाँ उससे ही मुहब्बत करता है, किले से नहीं, उसके धन से नहीं। शेर खाँ की ओर से उसका हृदय साफ हो गया।

स्त्री का हृदय पर्वत की भाँति कठोर और अडिग है तो मक्खन की भाँति कोमल और द्रवणशील भी। सन्देह और खतरे की आशंका से वह जब एक ओर सिंहनी का रूप धारण कर लेती है तो दूसरी ओर प्रेम और स्नेह के एक हलके पुलकावेग से वह पालतू कुत्ता तक बन जाती है। लाद ने शेर खाँ की बातों में केवल अपने लिए समर्पण का भाव देखा था जिसमें उसके धन के लिए स्पृहा न थी। किले के लिए लोभ न था। अब उसे निश्चय ही खान की आँखों में सच्चाई और निष्कपटता की ज्योति जलती दिखायी दी। उसने प्रेम और श्रद्धा से सिर झुका लिया। हृदय उमंग से भर गया। शरीर के रोम-रोम तार की भाँति बज उठे।

लेकिन अभी उसका मार्ग साफ कहाँ! तीनों देवर त्रिकण्टक की भाँति रास्ता घेरे बैठे थे। उनका क्या हो? उसे तो अभी मीर अहमद, दाद और इसहाक से निपटना था। उनके विचारों को जाने बिना वह आगे कदम बढ़ाये भी तो कैसे? पता नहीं, ये स्वार्थी बन्धु क्या करें? बिना पेंदी के लोटों का भरोसा क्या?

वह कुछ देर तक उधेड़-बुन में पड़ी रही। उसे चिन्तित देखकर खान ने पूछा—"क्या सोच रही हो मलका? कोई बात......।"

"कुछ नहीं। आप चिन्ता न करें"—वह धीरे-से बोली। उसके दाँतों की स्वच्छ पंक्ति चमेली की कलियों की तरह चमक उठीं जिसमें एक मादक सुवास का अनुभव कर शेर खाँ के नस-नस सजग हो उठे।

लाद वास्तव में सुन्दरी है—शेर खाँ ने सोचा और उसके अंग-प्रत्यंग पर एक उड़ती दृष्टि डाली। इस दृष्टि में राजनीतिज्ञ की परीक्षात्मक विवेचना नहीं, एक सच्चे प्रेमी की भावातुर उत्कंठा थी। शेर खाँ कुछ काल के लिए अपने को भूल गया। वह मानो अल्हड़ युवक हो और लाद किशोरी। चंचल हो उसने हाथ बढ़ा दिये। लाद ने उन्हें अपनी आँखों से लगा लिया। खिड़की के बाहर वातायन मस्ती से भर उठा। सृष्टि ने एक नयी साँस ली। संसार बदल गया।

"अब इन कदमों में ही...मेरी इज्जत, मेरी आबरू...तुम्हारे हाथों!"—कहकर लाद ने ऐसी मार्मिक दृष्टि से शेर खाँ की ओर देखा जिनमें जन्म-जन्म का विश्वाश अखण्ड दीप की भाँति प्रज्वलित था। उस दीप-शिखा से एक तीव्र किरण निकलकर शेर खाँ के हृदय में प्रविष्ट हो गयी। उसने देखा—सुवर्ण की वह सुकोमल लतिका लाद उसके चरणों पर पड़ी थी। शेर खाँ ने उसे उठाकर अपने बाहुओं में भर लिया—आज से तुम मेरी हुई, और मैं तुम्हारा। हमारा विवाह भी आज ही हो जाना चाहिये।"

"मैं तैयार हूँ।"—कहकर लाद झपट कर कमरे से बाहर चली गयी। कह तो दिया उसने, परन्तु अहमद, दाद और इसहाक से निपटना था। उनके विचारों को जाने बिना वह आगे कदम बढ़ाये भी तो कैसे?

मीर दाद महल के फाटक पर ही उपस्थित था। उसने दुर्ग-स्वामिनी की ओर इस प्रकार देखा मानो उसका एक बहुत बड़ा रहस्य जान गया हो। शीघ्रता से पूछा—"मुलाकात हुई शेर खाँ से?"

"हाँ, मिल आयी"—छोटा उत्तर मिला।

दाद को संक्षिप्त उत्तर से सन्तोष न हुआ। वह कुछ और जानना चाहता था। कुछ और सुनना चाहता था—किले के बारे में, खजाने के विषय में। गम्भीरता से पूछा—"क्या शेर खाँ को किला सौंपने के लिए आप तैयार हैं?"

मीर दाद का यह प्रश्न सुनकर मलका चौंक उठी। दाद के मन में किला शेर खाँ को सौंपने का सन्देह क्यों पैदा हो गया। सारा नकशा स्पष्ट हो चुका था। मलका दृढ़तापूर्वक बोली—"जी नहीं! शीघ्र ही हम किला और खजाना आप लोगों को सौंप कर यहाँ से दूर चले जायँगे। वह अकेले हुमायूँ से मुकाबला नहीं कर सकेंगे। आप तीनों बहादुर हैं। मिलकर इसकी हिफाजत कर सकते हैं।"

यह क्या? हाँड़ी में हाथ डालते ही धन के बदले बिच्छू! मीर दाद तड़प उठा। उसकी समस्त प्रसन्नता क्षण भर में ही काफूर हो गयी। दिल बैठने लगा। भय और निराशा की लहरों में दबा वह सहसा कुछ बोल न सका। चुपचाप अपने मृत भाई की विधवा और किले की स्वामिनी को इस प्रकार अपने भावी पति के साथ अकेले चले जाते और दुर्ग, कोष तथा उन तीनों भाइयों को जल्लाद हुमायूँ के हाथ शिकार होने के लिए छोड़ जाने की बात सुनते ही उसका सारा आनन्द किरकिरा हो गया। हँसी उड़ गयी और चेहरा फक् हो गया, निर्जीव और निस्तेज।

उसे ऐसा प्रतीत हुआ मानो मौत उसके सिर पर मँडरा रही हो। मुखमण्डल पर घबराहट की रेखाएँ झलकने लगीं। उसने घबराकर मलका से विदा ली और बैठक की ओर भागा।

मीर अहमद और मीर इसहाक—दोनो भाई किले के मरदाने बैठक में बैठे नाश्ता कर रहे थे। कभी-कभी कमरे में रुक-रुककर हँसी का उच्च स्वर गूँज उठता।

सहसा घबड़ाये हुए मीर दाद ने बैठक में प्रवेश किया। उसके उड़ते चेहरे को देखते ही दोनो भाई चौंक उठे।

"क्या बात है दाद भाई?"—इसहाक ने पूछा।

"आप इतने घबराये से क्यों लगते हैं भाई जान?"—अहमद ने इसहाक का समर्थन किया।

दाद ने एक लम्बी साँस ली। वह पास के गद्दे पर बैठ गया। निराश रोगी-सा जिसे बचने की कोई आशा नहीं रह गयी हो! धीरे से बोला—"मैं अभी मलका से मिलकर आ रहा हूँ। आज सवेरे वह शेर खाँ से मुलाकात करने गयी थीं।"

इसहाक और अहमद मीर दाद का संवाद सुनकर चौंक उठे—उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि उनके रहते मलका को क्यों कर शेर खाँ से मुलाकात करने की आवश्यकता आ पड़ी?

अहमद इस बात से विशेष चिन्तित-सा दिखाई पड़ा। मलका की आड़ में वह किले व खजाने पर अधिकार करने का स्वप्न देख रहा था। मलका और शेर खाँ की मुलाकात ने उसके मन में सन्देह का बीज बो दिया। इस बीज में विष पड़ चुका था।

अहमद ने अपने सिर और दाढ़ी के बालों पर हाथ फेरा। उठ खड़ा हुआ। इधर-उधर टहलने लगा। कभी कुछ सोचने लगता और एकटक दीवार की ओर देखता हुआ रुक जाता।

"मलका शेर खाँ को किला और खजाना देना क्यों चाहती हैं?" अहमद ने शीघ्रता से पूछा।

मीर दाद ने अहमद के क्रोध से जलते चेहरे पर दृष्टि डाली। वह मुस्कुरा उठा। कुछ कहने जा ही रहा था कि इसहाक उबल पड़ा—"अगर ऐसा हो गया तो ठीक न होगा।"

"जर-जमीन हमारी ही मुट्ठी में रहेगी"—दाद ने दृढ़ता से कहा—"लेकिन उस ताज के पहनने से फायदा क्या जिसमें काँटे ही काँटे हों।"

"काँटे?"—अहमद विस्मय से भर उठा।

"हुमायूँ के चुनार पहुँचने के पहले ही शेर खाँ मलका के साथ यहाँ से चला जायगा।"

कमरे में गहरी निस्तब्धता छा गयी, इतनी कि उनके हृदयों के

स्पन्दन की ध्वनि दूसरे के हृदय को सुनायी पड़ने लगी। वे भयभीत हो गये थे। सब अपने-अपने विचारों में उलझे हुए थे। हुमायूँ के आक्रमण से चुनार किले की रक्षा करने की शक्ति उनमें से किसी में नहीं थी।

उन्हें अच्छी तरह याद था, किस प्रकार एक बार मुगलों ने उस किले को जीत लिया था। तब उनका बादशाह बाबर था। हुमायूँ भी साथ आया था। घुड़सवार मुगल सिपाहियों ने अपने तोपखाने की मदद से घण्टे भर में किला फतह कर लिया। मुगलों के पास जैसा तोपखाना है, अफगानों के पास कहाँ! यदि कुछ शक्ति एकत्र हो भी सकती है तो वह केवल शेर खाँ के भरोसे। वरना, हम तीनों से क्या होने का!

"तब क्या कहते हो?" दाद ने पूछा।

"मैं तो यही समझता हूँ कि शेर खाँ को कुछ दिनों तक यहीं रखा जाय। उसे न जाने दिया जाय। वह यहाँ रहेगा तो किले की रक्षा तो करेगा ही, हम सब...।"—अहमद ने कहा।

"इतने बुज़दिल न बनो। अपनी रक्षा हम स्वयं कर लेंगे और यदि इस आत्म-रक्षा में सफल न हो सकेंगे तो डर क्या? हमारी तलवारें हमारे पास है। जो गति बादशाह इब्राहीम लोदी की हुई थी, वही हमारी भी होगी। युद्ध में लड़कर मरने से बढ़कर सिपाही के लिए गौरव की और क्या बात हो सकती है?"—इसहाक बोला।

"फिर भी एहतियातन...मैंने कहा था।"

"ठीक है। यही निश्चय रहा। शेर खाँ को कुछ दिनों यहीं रोका जाय। परन्तु यह तभी हो सकता है जब मलका यहाँ रुकें। बेहतर है कि उसे ही यहाँ रोका जाय।"

"बेहतर!"

अन्ततः शेर खाँ को मलका के साथ जाने के पक्ष में कोई नहीं रहा।

कल तक सभी इस बात पर विचार कर रहे थे कि किस प्रकार किले और खजाने को अपनी मुट्ठी में रखा जाय। किले का स्वामी शेर खाँ

को बनाना उन्हें कदापि पसन्द न था। पर हुमायूँ के आक्रमण की बातें सुनते ही पासा पलट गया। आज तीनों भाई इसी समस्या को सुलझाने में तल्लीन हो गये कि किस प्रकार शर्त्तें पलट दी जायँ। शेर खाँ का सहारा उनके लिए आवश्यक था।

देश के अन्य अफगान सरदार मौत के घाट उतारे जा चुके थे। केवल शेर खाँ ही एक ऐसा वीर शेष था जो अफगानों को आश्रय देता हुआ मुगलों से लोहा ले सकता था। दिन-दिन उसकी बढ़ती हुई सामरिक शक्ति अफगानों के लिए सन्तोषदायिनी बन चुकी थी।

अहमद भविष्य की योजनाओं पर सूक्ष्मता से विचार कर रहा था। शेर खाँ को किले और खजाने का लोभ देकर उसे सुगमता से रोका जा सकता है। मुगलों के हटते ही शेर खाँ को रास्ता दिखाना कोई कठिन बात न होगी। उनके बीच लाद जो है।

"वसूलन किले का मालिक वही होना चाहिये जिसका निकाह लाद के साथ हो ?" इसहाक ने पूछा।

"शेर खाँ के पास एक बड़ी फौज है। सारे सिपाही तो गङ्गा-पार हैं। नीचे तो मुश्किल से दो-चार हजार होंगे। ऐसे समय में उसके सिवाय और कोई हमारी मदद नहीं कर सकता।"

अहमद दाद की बातों पर कुछ देर तक विचार करता रहा। गद्दे पर बैठते हुए उसने चिन्तित मुद्रा में कहा—"हमें शेर खाँ की शर्त्तों के परिवर्त्तन की सूचना दे देनी चाहिये।"

सबके विचारों को पक्ष में पाकर अहमद ने शेर खाँ को पत्र भेजवाया जिसमें उसने शेर खाँ के किले में शीघ्र आने का नम्रतापूर्वक और आदर सहित नियन्त्रण दिया।

दोपहर हो चुका था। फिर भी किसी को भोजन करने की इच्छा न थी। शेर खाँ को अच्छी तरह फाँसे बिना उन्हें चैन कहाँ ? जितनी

जल्दी शेर खाँ की मलका से शादी हो जाय उतना ही अच्छा है। पता नहीं हुमायूँ कब आ धमके।

अहमद की आज्ञा से किले में गुप्त रूप से विवाह का प्रबन्ध किया जाने लगा। शेर खाँ के नयी शर्तों के मानते ही उसका मलका के साथ निकाह कर देने की योजना बना ली गयी थी।

बेगम लाद को शेर खाँ के आगमन की सूचना भेजवा दी गयी। निकाह की रस्में पूरी करने के लिए काजी और मौलवियों को बुलवा लिया गया। लगभग दो घण्टे में समस्त व्यवस्था पूर्ण हो गयी।

अँगुलियों के इशारे पर किला सजा दिया गया। अब केवल शेर खाँ के आगमन की प्रतीक्षा थी।

लगभग तीन घण्टे बाद अपने लाव-लश्कर के साथ बड़ी सज-धज से शेर खाँ ने किले में प्रवेश किया। उसके दीप्तिमान् मुख पर ओज चमक रहा था। ऐसा प्रतीत होता मानो वह काफी व्यस्त हो।

मीर दाद, इसहाक और अहमद ने हर्ष के साथ उसका स्वागत् किया। किले के रक्षक सिपाहियों तथा गुलामों ने गगनभेदी जय-जयकार किया। दाद शेर खाँ को किले के एक सुसज्जित कमरे में लिवा ले गया। कमरा गंगा-तट की ओर था। यह इतने ऊँचे पर था मानों आकाश में बना हो। कमरे की खिड़कियों से कोसों दूर तक के गावों का दृश्य दिखाई पड़ता। नीचे किले को करधनी की भाँति लपेटती हुई गंगा बहती जा रही थीं। शेर खाँ ने एक बार उड़ती आँखों से कमरे की सजावट देखी। वास्तव में ऐश्वर्य और विलास का वह एकान्त कक्ष था। जब सब यथास्थान बैठ गये तो शेर खाँ ने पूछा—"निकाह के बारे में आपने क्या फैसला किया है?"

"हम अभी तैयार हैं। लेकिन निकाह से पूर्व आप से कुछ बातें अर्ज कर देना हम जरूरी समझते हैं"—अहमद ने भूमिका बाँधी।

शेर खाँ उसकी बातें इस प्रकार सुन रहा था मानो वह कुछ नहीं जानता। वह बिलकुल सरल और उनकी योजनाओं से अबोध हो।

मीर अहमद अपनी वार्त्ता समाप्त होने तक शेर खाँ को बोलने का मौका नहीं देना चाहता था। वह उसकी घुमावदार बातों से अपने मस्तिष्क को कदापि न सुलझा पाता। उसने कहना जारी रखा—"...अगर किले और खजाने को सम्हालने की जिम्मेदारी की मंजूरी आप दें तो बड़ी मेहरबानी होती।"

"उफ! बड़ा मुश्किल सवाल है। समझ में नहीं आता कि आप लोगों को क्या जवाब दूँ?"—शेर खाँ गम्भीरता से बोला। उसने चारों ओर लापरवाही से देखा। हाथों की अँगुलियाँ दबायीं और उस राजनैतिक दाँव की प्रतीक्षा करने लगा जिसके सामने तीनों मात होने वाले थे।

अन्त में वह सुनहला अवसर आ गया। मीर अहमद गम्भीरता से कह रहा था—"...आपके अलावा कौन अफगानों की हिफाजत कर सकता है?"

माशा अल्लाह! वाकई यह एक लाजवाब मौका है! पुतलियाँ नचाते हुए शेर खाँ प्रसन्नता से बोला—"भला ऐसे मौके पर शेर खाँ पीछे हट सकता है? अपनी तलवार की शान बढ़ाने के लिए मैं मुगलों को ढूँढ़ रहा हूँ। किले की हिफाजत करने का जिम्मा मैं लेता हूँ। मुगलों को खाली हाथ लौटना पड़ेगा!"

"शुक्र खुदा का, अब हमें कोई डर नहीं"—तीनों प्रसन्नता से उछल पड़े। अहमद ने मुदित मुद्रा से शेर खाँ को एक दूसरे कमरे में चलने का संकेत किया।

इस गुप्त वार्ता के बाद सभी बैठक से बाहर निकले। उपस्थित दरबारियों ने आगे बढ़कर शेर खाँ का अभिवादन किया। आपस में कुछ देर तक इधर-उधर की बातें करने के बाद सभी भीतर की ओर

मुड़े। दीवारों पर सुगन्धित फूलों की मालाएँ झूल रही थीं। वातावरण आनन्द में बिभोर हो गया था।

तीन लम्बे चौड़े दालानों को पार करने के बाद शेर खाँ अपने साथियों के साथ उस निश्चित कमरे में पहुँचा जहाँ उसके विवाह का प्रबन्ध किया गया था। कृत्रिम प्रकाश से कमरा जगमगा रहा था। चारों ओर आकर्षक दृश्य बिखर गया था। काले सागौन के चमकीले जंगलों में कमरे के चारों ओर चौंसठ आदमकद स्वच्छ शीशे लगे थे जिनसे वह शीशमहल जादू का लोक लग रहा था। धूप-धूम कमरे को सुगन्धित कर रहा था।

शेर खाँ ने जौनपुर में शर्की सुलतानों का किला और उनका विलास देखा था। जौनपुर किले के भीतर सुखमय जीवन के जिन गुप्त विहारों के दृश्य उसने देखे थे, उनकी सानी कहाँ! फिर भी उसके दिल ने चुपचाप स्वीकार कर लिया कि चुनार दुर्ग का अधिपति कम शौकीन और विलसी न था। ताज खाँ के समय में संगृहीत शृंगार-प्रसाधन और मनोरंजन के उपादान अब भी ज्यों के त्यों दिखायी पड़ते थे।

आयताकार कमरे में चारों ओर नीले रंग के मखमली गद्दे बिछे थे जिन पर उच्चवर्गीय सामन्त सरदार और अन्य प्रतिष्ठित अधिकारी बैठे थे। सभी ने उठकर शेर खाँ का स्वागत किया। मीर दाद ने आगे बढ़कर शेर खाँ को विशिष्ट रूप से बने नक्काशीदार हरे रंग के मखमली गद्दे पर बैठाया। अन्य उपस्थित व्यक्ति निश्चित स्थानों में बैठ गये। सहसा शहनाई और ढोलों के मधुर-स्वर प्रवाह से वातावरण निनादित हो उठा। ईरानी सुन्दरी दासियों का आगमन प्रारम्भ हुआ। कामदार रेशमी कपड़ों से ढँके थाल शेर खाँ के समक्ष रखे जाने लगे।

थोड़ी देर में दासियों और सहेलियों से घिरी बेगम लाद तारों के के बीच विहँसते चाँद के टुकड़े-सी उस कमरे में प्रविष्ट हुई। शेर खाँ

अतिरिक्त सभी उठ खड़े हुए। ऐसा प्रतीत होता मानो सघन-सजल बादलों में अचानक दामिनी थिरक उठी हो।

काजी के संकेत पर सहेलियों ने मलका को शेर खाँ के बगल में बैठाया। सबकी आँखें शेर खाँ और लाद पर टिकी हुई थीं। किसी ने ध्यान दिया, किन्तु यदि देखता तो समझ लेता कि शेर खाँ की निगाहें किले की दीवार पर टिकी उसकी मजबूती आँक रही थीं।

समय बीतता जा रहा था। वैवाहिक क्रिया चलती रही। अन्त में मौलवी ने उठकर शेर खाँ के हाथ में लाद का हाथ पकड़ा दिया। शेर खाँ मुस्कुरा उठा। दबे स्वर में बोला—"अब तुम मेरी हो गयी हो।"

लाद ने कुछ कहा नहीं। केवल एक बार दबी नज़र उठाकर तिरछी चितवन से देखा जिनकी मौन भाषा ने शेर खाँ को भलीभाँति अपनी हृदय-निधि सौंपते हुए कहा—"मैं तो तुम्हारी उसी दिन हो चुकी थी जिस दिन पहले-पहल देखा था। आज तुम मेरे हुए। अब मेरी इज्जत तुम्हारे हाथों है। अब तक मैं मलका थी, आज मैं दासी बनी।" शेर खाँ ने उसकी मूक भाषा सुन ली और एक सच्चे प्रेमी की भाँति सिर झुका लिया। लाद पुलकित हो उठी।

शाम हो चुकी थी। समय अपनी दौड़ में व्यस्त था। थोड़ी ही देर में चुनारगढ़ इस प्रकार जगमगाने लगा मानों संसाररूपी समुद्र का वह एक लघु प्रकाश स्तम्भ हो।

३

शेर धोखा नहीं देता

"......और इन चार घण्टों में हम कर ही क्या सकते हैं ?"—चिन्तित मुद्रा में अहमद ने पूछा।

शेर खाँ ने उसकी बात का कोई उत्तर नहीं दिया। मीर अहमद कुछ अधिक चिन्तित हो उठा। आतुर हो शीघ्रता से पूछा—"आखिर आपने मुगलों से मुकाबला करने का क्या निश्चय किया है ?" उसके चेहरे पर घबराहट के लक्षण स्पष्ट दिखलायी देने लगे थे।

शेर खाँ ने अहमद की ओर घूर कर देखा। राजनीतिक विषयों में किसी का हस्तक्षेप उसे किञ्चित पसन्द न था। लापरवाही से उत्तर दिया—"मुझे जो भी फैसला करना था, आज से बीस दिन पहले ही, शादी के दिन कर चुका। अब करने का समय है, कहने का नहीं।"

"मुगलों की तायदाद ज्यादा है।"

"हम भी अकेले नहीं हैं।"

"आप क्या किले में ही रहेंगे ?"

"जी नहीं, आपके साथ मैं मुकाबले पर चलूँगा।"

"मैं !! मैं क्यों जाऊँगा ?" अहमद के चेहरे पर पसीने की बूँदें छलक आयीं। वह शेर खाँ के साथ रण-स्थल में जाने को कदापि तैयार न था। युद्ध-भूमि में स्वयं न जाकर शेर खाँ को वह भेजना अवश्य चाहता था। इसमें भी एक रहस्य था। अहमद की आन्तरिक कामना

थी कि शेर खाँ की मृत्यु से उसे किले का आधिपत्य प्राप्त हो सकता था। उसने दृढ़तापूर्वक कहा—"सरदार साहब, मैं किले के बाहर जाने के लिए कत्तई तैयार नहीं। यह काम तो किले के मालिक का है।"

"ठीक! तब यह काम मेरा है"—शेर खाँ हँसता हुआ बोला। उसका चेहरा क्रोध से जल रहा था। गङ्गा-पार फैले फौजी पड़ाव पर दृष्टि डालते हुए उसने गम्भीरता से कहा—"अपने कामों को ठीक तरीके से पूरा करना मैंने अच्छी तरह सीखा है।" यद्यपि उसके कथन का अर्थ किसी ने न समझा, परन्तु वास्तव में जीत शेर खाँ की ही हुई।

दोपहर का समय था। चारों ओर तेज धूप और वेगशील वायु बह रही थी। शेर खाँ अपने कक्ष में हैदर की प्रतीक्षा में बैठा था। अहमद अपनी योजनाओं की असफलता देख भीतर ही भीतर तड़प रहा था।

थोड़ी देर रुकने के बाद खाली हाथ अहमद वापस चला गया। शेर खाँ अपने विचारों में तल्लीन था। सहसा हैदर ने कक्ष में प्रवेश किया। अभिवादन करके शीघ्रता से बोला—"सरदार, हुमायूँ ने अपना रास्ता नहीं बदला। वह चुनार की ओर बढ़े आ रहे हैं।"

"ठीक है, बढ़ने दो। नदी पार पड़ी फौज को पूरब की ओर बढ़ने को कहो। मुझे किले के बाहर निकल जाना जरूरी है। तुम यहीं रहोगे।"

"जो हुक्म"—हैदर ने सिर झुकाते हुए कहा। स्वामी की आज्ञा का पालन करने के लिए वह शीघ्रता से कमरे के बाहर निकल गया। किन्तु कुछ ही क्षणों के बाद वह फिर कमरे में वापस आया। तेजी से चलने के कारण वह हाँफ रहा था। शीघ्रतापूर्वक बोला—"माफी चाहता हूँ सरकार। क्या आपने मोर्चाबन्दी करने का हुक्म दिया है?"

"नहीं तो"—शेर खाँ साश्चर्य बोला।

"मीर अहमद साहब ने शाहजादे जलाल खाँ को मुकाबला करने के लिए फौज के साथ भेज दिया है।"

"जलाल को ? उसे फौरन मेरे पास भेज दो। तुम गङ्गा-पार जल्दी जाने की कोशिश करो। घबराने की कोई बात नहीं है। अभी समय काफी है। मैं किले के अन्दर का मामला समझता हूँ"—शेर खाँ ने उठते हुए कहा—"यहाँ कदम-कदम पर दाँव-पेंच!"

हैदर अविलम्ब कमरे के बाहर निकल गया। शेर खाँ ने कपड़े बदले। वह बाहर जाने ही वाला था कि बेगम के आने की सूचना मिली। इसके पहले कि वह बेगम के आगमन का कारण सोच पाता, लाद स्वयं उसके कमरे में आ चुकी थी।

"बेसमय आने के लिए माफी चाहती हूँ"—उसने मुँह से परदा हटाते हुए कहा।

"माफी, तुम्हें ?" शेर खाँ की आँखें चञ्चल हो उठीं। लाद ने उसका ध्यान पल भर के लिए खींच लिया। उसने पत्नी की ओर प्रेमपूर्ण दृष्टि से देखते हुए कहा—"हुक्म ?...लेकिन पहले तशरीफ तो रखो। कैसे आना हुआ ?"

लाद की आँखों में क्षण भर के लिए चञ्चलता छा गयी। शेर खाँ को अपनी ही ओर ताकते देखकर उसका नारी हृदय सहज गति से आनन्दित हो उठा। कमरे में शेर खाँ अकेला था। पास ही गद्दे पर बैठते हुए उसने कहा—"जनाब मीर अहमद कह रहे थे कि आप किला मुगलों को सौंपने के लिए तैयार हैं।"

"मीर अहमद साहब! बड़े नेक आदमी हैं वह। लगता है कि उन्हें किले का बहुत ख्याल है"—शेर खाँ ने तलवार की मूँठ पर हाथ फेरते हुए कुछ ऐसी लापरवाही से कहा जिसका अभिप्राय लाद न जान सकी। वह चकित हो उसकी ओर देखती रह गयी। शेर खाँ ताड़ गया कि लाद उसके उत्तर से सन्तुष्ट नहीं। किन्तु इस बीच उसने पत्नी को

सन्तुष्ट करने का मार्ग निकाल लिया था। वह यह जानता था कि प्रत्येक व्यक्ति उसी कार्य को अच्छा समझता है जिसमें उसका लाभ होता हो। दूसरों का लाभ करनेवाला ही महान् समझा जाता है। अतः उसके लिए अपने कार्यों को मलका के लाभ की दिशा में दिखाना अनिवार्य हो गया।

पत्नी पति में सौन्दर्य, यौवन, ऐश्वर्य आदि के साथ उसका पौरुष भी देखना चाहती है। अपने स्वभाव और रुचि के अनुसार अलग-अलग स्त्रियों में उनकी कामना अलग-अलग ढंग से व्यक्त होती है। लाद युवती थी, सुन्दरी भी; किन्तु वह केवल विलास की पुतलीमात्र न थी। शेर खाँ से विवाह करने के उद्देश्य के पीछे यौवन का आमोद और भोग की अभिलाषा कम, पराजित अफगान गौरव की सुरक्षा की भावना ही अधिक बलवती थी। वह शेर खाँ के पौरुष की कथाएँ सुन चुकी थी। उसके शेर से लड़ जाने की बात भी जान चुकी थी। अनेक युद्धों में जाकर सफलतापूर्वक जखमी होकर विजय-श्री लेकर लौटने वाले इस सिपाही की गौरव-गाथा वह अपने पूर्व पति के ही जीवन-काल में सुनती रही थी। उसकी कामनाएँ पति में केवल योद्धा का ही नहीं, जाति और मुल्क के एक प्रधान नेता का रूप भी देखना चाहती थीं। शेर खाँ को पति रूप में पाकर उसका हृदय महत्वाकांक्षी हो उठा था। उसमें उसका भी गौरव था। इस कल्पना से पुलकित होकर बोली—"अफगानों का सेहरा अब आप ही के सिर है।"

शेर खाँ जानता था। इसकी तैयारी भी वह आरम्भ कर चुका था। किन्तु युवती पत्नी के सुन्दर मुख से यह बात सुनकर उसकी छाती फूल उठी। उसकी आँखें चमकने लगीं। उसने लाद का हाथ पकड़ उसकी अँगूठी के हीरे का स्पर्श करते हुए कहा—"मैं मुगलों को जीते-जी किला नहीं सौंप सकता।"

लाद फूल उठी। उसका हृदय इस वीर पुरुष के सम्मुख झुक गया। उसने प्रेम से विह्वल हो पति की ओर देखा। उस चितवन से शेर खाँ क्षण भर के लिए चञ्चल हो उठा। भावातुर स्वर में बोला—"मुगलों से डट कर मुकाबला करूँगा। भले ही जान क्यों न चली जाय, लेकिन शान तो रह जायगी।"

जान चली जाय! नहीं-नहीं! लाद का कोमल हृदय भीतर ही भीतर काँप कर तड़प उठा। जैसे कानों में बारूद फटने की आवाज़ सुनायी पड़ी हो। वह छाती थाम कर बैठ गयी। जान ही चली जायगी तो क्या रह जायगा। फिर वही वैधव्य, वही सूनापन, वही दुर्भाग्यपूर्ण अँधेरी-रातें और निराशापूर्ण दिन। सौभाग्य बड़ी मुश्किलों से उसपर प्रसन्न हो पाया है। इस निधि को वह किसी प्रकार हाथ से छोड़ना नहीं चाहती। शेर खाँ-सा पति अलभ्य है। उसका नारीत्व धन्य हो गया है।

किन्तु अपनी दुर्बलता वह प्रकट भी नहीं करना चाहती। प्रेम का विकल समुद्र भीतर-ही-भीतर तरङ्गें मार रहा था जिसके प्रहारों से उसके हृदय-तट की मर्यादा किसी प्रकार बच रही थी। सहसा अपनी सारी भावुकता को राजनीति के परदे में छिपाती हुई बोली—"तोबा-तोबा! यह क्या कहते हैं। हमें आपकी बड़ी जरूरत है। देश को आपके जान की जरूरत है। फिर मरने की अपेक्षा जीकर हम ज्यादा हित कर सकते हैं, जाति का, देश का और..."

क्या कहे लाद! जिस बात को वह छिपाना चाहती थी, वह अनायास ही प्रकट हो गयी। उसकी चातुरी भी छिपी न रह सकी। हाय री कोमलता, तू आकर स्त्री के हृदय में ही क्यों बैठी रह गयी? उसकी आँखें एक अनोखी मादकता से भर उठीं। बड़ी-बड़ी पलकों पर न जाने कौन-सी बात देखी कि शेर खाँ ने उसे उठकर पकड़ लिया और उसके अतृप्त प्रेमाकुल अधरों पर अपने प्रेम की मुहर लगाकर आलिंगन-पाश

में बाँधकर कहा—"मुझे अपनी परवाह नहीं। मर कर भी तुम्हारे किले की रक्षा करूँगा।"

"हरगिज़ नहीं। आप सलामत रहें। हमें ऐसे सैकड़ों किले मिलेंगे। मुझे किला नहीं चाहिये। आपकी छाया में मैं अपने दिन सुख से कहीं भी काट सकती हूँ।"

आह ! हृदय की सोई भावुकता, जाग मत। निर्धन, आश्रयरहित, घर से निष्कासित, प्रताड़ित, अपमानित और निरुद्देश्य भटकने वाले फरीद के पास था ही क्या ? उसने जिस कठोर परिश्रम और साधना से दिन बिताये हैं, उसे एक सिपाही के भीषण संघर्ष के अतिरिक्त कहा क्या जा सकता है ? किन्तु उस संघर्ष में भी एक शान्ति थी, एक तृप्ति। जौनपुर में एक दिन अपने नव-यौवन के प्रभात में उसने एक ऐसी ही सुन्दरी की बातों पर रीझकर अपना प्रेम उस पर निछावर कर दिया था। जलाल उसी का बेटा था। आज फिर उसी के स्वर में यह बात उठाकर लाद ने शेर खाँ के सामने उसके सिपाही-जीवन का दृश्य लाकर खड़ा कर दिया। अब वह अफगानों का सरदार नहीं, युद्धों में लड़ने वाला महारथी नहीं, मुल्क का भाग्य-निर्णय करने वाले कूटनीतिज्ञ की खोपड़ी और तलवारों से टक्कर लेने वाला सामन्त नहीं रह गया था; रह गया था केवल एक साधारण सिपाही, जिसके पास केवल प्रेमी हृदय और अतृप्त तलवार रहती है। उसने लाद की आँखों में पैठकर देखा। समर्पण और विश्वास का समुद्र उन्हें बहा ले गया।

उसकी भावुकता तब उड़ गयी जब उसे अपने एकान्त कक्ष में लाद के अकेले चले आने की बात याद आयी। मानो वह खो-सा गया था। चट सम्हल कर बोला—"लेकिन लोग क्या कहेंगे ? क्या सोचेंगे ?"

"कुछ भी सोचें। उन्हें कहने दें।"

"तो क्या इस किले पर मुगलों का अधिकार हो जाने दें ?"

"हैं !! नहीं-नहीं"—लाद चौंक पड़ी। उसने कभी स्वप्न में भी

किले पर मुगलों के अधिपत्य हो जाने की बात नहीं सोची थी। घबराकर बोली—"कुछ तो करना ही होगा।"

शेर खाँ कुछ कहने जा रहा था कि किसी के आने की आवाज सुनायी पड़ी। वे सम्हल कर अपनी जगहों पर जा बैठे। बातें समाप्त भी न हो पाई थीं कि पहरेदार ने जलाल के आगमन की सूचना देकर उसके भीतर आने की स्वीकृति माँगी।

"आने दो"—शेर खाँ बोला और उसकी प्रतीक्षा करने लगा। लाद उठकर बाहर जा रही थी कि शेर खाँ ने उसे रोक लिया—"बैठो, अभी न जाओ।"

लाद रुक गयी। सावधानी से बैठकर उसने एक कागज उठा लिया और चुपचाप उसे पढ़ने लगी।

शेर खाँ ने अपना लोहे का टोप पहन लिया। वह कुछ कहने वाला था कि सहसा जलाल खाँ ने प्रवेश किया। वह फौजी पोशाक में अत्यन्त व्यस्त दिखायी पड़ रहा था।

जलाल खाँ शेर खाँ का मँझला बेटा था। उसका डील-डौल अपने पिता की ही तरह था। वह उसके यौवन और जौनपुर में गुजरे स्मरणीय दिनों की स्मृति था। उसकी अवस्था लगभग बीस-बाईस वर्ष की थी। शेर खाँ के साथ अथवा उसकी अनुपस्थिति में जलाल प्रायः घुड़सवार सेना का नेतृत्व करता था।

शेर खाँ की आज्ञा से हैदर ने जलाल को वापस लौटने के लिए कह दिया था। जलाल उस समय शीघ्रता से मुगलों का रास्ता रोकने के उद्देश्य से आगे बढ़कर मोर्चा बनाने जा रहा था। पिता की आज्ञा पाते ही वह तुरन्त वापस लौट आया।

पिता के इस आदेश पर उसे आश्चर्य हो रहा था। उसने शीघ्रता से पूछा—"माफी चाहता हूँ। क्या हुजूर ने मुझे आगे न बढ़ने...हैदर कह रहा था...।"

"हाँ जलाल, मेरा हुक्म है। फौरन् फौज के साथ किले में आ जाओ।"

जलाल अविलम्ब आज्ञा का पालन करने चला गया। शेर खाँ अब लाद की ओर पलटा। धीरे से उसके कानों में कुछ कहा। मलका का मुख दीप्तिमान हो उठा। मुस्कान की रेखाओं में बँधकर कोमल शब्द लड़खड़ा उठे—"मैं और किस पर विश्वास कर सकती हूँ? अच्छा, अब चलूँ। फिर मुलाकात होगी। खुदा हाफिज।"

"खुदा हाफिज।"

बेगम वेग से निकल गयी। शेर खाँ दरवाजे से कुछ देर तक उसे देखता रहा। जब वह लुप्त हो गयी तो वह खुद भी उठा और लम्बे डग भरते हुए किले की दूसरी मंजिल में जा पहुँचा।

घुमावदार मार्ग से होकर शेर खाँ ऊपरी बुर्ज पर रुक गया। उसने चारो ओर एक सतर्क दृष्टि दौड़ायी।

पश्चिम की ओर विन्ध्याचल पर्वत गर्व से सिर उठाये खड़ा था। वृक्षों के परदे से आगे पृथ्वी ढँक गयी थी। पक्षियों का दल अपने कलरव से पास ही उगे बरगद वृक्ष की विशाल डालों और पत्तों को मुखरित कर रहा था। किले का पश्चिमी फाटक बन्द किया जा चुका था। बाहर पूर्ण शान्ति छायी थी। सड़क पर सैनिकों का चिन्ह भी न था। ऐसा प्रतीत होता मानों कुछ समय पहले यहाँ भूँडोल आया था जिससे वे समस्त सैनिक पृथ्वी के अंक में विलीन हो गये हों।

सहसा दूर से सैनिकों की पदध्वनि सुनायी पड़ने लगी। शेर खाँ चौंक उठा। क्या मुगलों की फौज बिलकुल समीप आ गयी है? पर ध्वनि भिन्न दिशा से आ रही थी। शेर खाँ ने दायीं ओर दृष्टि दौड़ायी। मुस्कुरा उठा। उसने देखा कि गंगा-पार उसकी सेना पूर्व की ओर बढ़ रही है। फौज-संचालन का कार्य हैदर कर रहा था।

कुछ ही देर में शेर खाँ चुनार से काफी दूर होगा। चुनार का

बन्द किला हुमायूँ के लिए केवल कला का एक नमूना मात्र हो सकेगा। देर कर दी हुमायूँ ने। शेर खाँ चुनार किला अपनी मुट्ठी में कर चुका था। हुमायूँ भले ही सोचे कि शेर खाँ उसके आगमन की खबर सुनकर भाग रहा है, पर उसे यह पता न था कि उसके लिए बिहार और रोहताश्वगढ़ अपने अधिकार में करने के लिए कितना शुभ मुहूर्त था जब कि चुनार गढ़ और उसकी स्वामिनी की सुरक्षा शाही मुगल सैनिकों द्वारा किला घेर लेने के नाम पर हो रही हो।

शेर खाँ के नेत्रों के समक्ष बिहार और रोहताश्व किले का चित्र उपस्थित हो गया। बिहार का जागीरदार जमाल खाँ अभी छोकरा था। शेर खाँ के एक नखपट में उसका व्यक्तित्व दबोचा जा सकता था।

हुमायूँ के लिए मार्ग स्वतन्त्र कर दिया गया था। सभी सैनिक किले के अन्दर थे। बाहर कँकरीली-पथरीली जमीन और वृक्षों के समूह हिन्दुस्तान के नये विदेशी बादशाह के स्वागत-रोदन में तल्लीन थे। दो-तीन माह तक मुगलों के विश्राम की अच्छी व्यवस्था थी। चुनार-विजेता बाबर का पुत्र चुनार जीतने आ रहा था या खोने?

शेर खाँ शीघ्रता से अपनी बैठक में आया। उसने अपने वस्त्र बदले और आवश्यक वस्तुएँ साथ लीं। किले का प्रमुख द्वार बन्द किया जा चुका था। अतः उसने उसे पुनः खुलवाना ठीक न समझा।

चुनार किले के निचले भाग से उत्तर की ओर एक सुरंग जाती है। यह सुरंग किले से होकर गंगा किनारे तक पहुँचती थी। वहीं से इस सुरंग का दूसरा मार्ग पुनः प्रारम्भ हो जाता जो गंगा के नीचे से होकर किसी अन्य पूर्वी गढ़ से सम्बन्धित था। यह सुरंग काफी नीचे थी, फिर भी उसके निर्माण की यह सबसे बड़ी विशेषता थी कि प्रारम्भ से अन्त तक रास्ते में मन्द प्रकाश रहता था। वर्ष में एक बार इस गरंसु की मरम्मत और सफाई की जाती थी।

शेर खाँ ने शीघ्रता से सीढ़ियाँ, दालान और गलियारा पार किया। थोड़ी ही देर में वह सुरंग के प्रमुख द्वार पर उपस्थित था। उसने आगे बढ़कर दरवाजा खोला। अन्दर प्रवेश करना ही चाहता था कि किसी के आगमन की आहट से वह ठहर गया। दृष्टि घुमायी। देखा—मीर अहमद खड़ा था। उसकी परिवर्तित मुद्रा देखकर शेर खाँ को आश्चर्य हुआ। बिखरे बाल, लाल आँखें, दहकता चेहरा और हाथ में एक नंगी कटार देखकर शेर खाँ चौंक उठा।

"तो तुम जा रहे हो?"—अहमद ने एकटक देखते हुए कहा।

"तुम...आप !! मैं जा रहा हूँ।"

"मैं विदा करने आया हूँ।"—मीर की आँखें भयानक हो उठीं।

क्षण-भर में शेर खाँ सब कुछ समझ गया। राज्य-लिप्सा ने अहमद को उन्मत्त बना दिया था। तीव्र दृष्टि डालते हुए वह व्यङ्ग शब्दों में बोला—"ताज्जुब हो रहा है! मैं तुम्हें पहली और आखिरी बार विदा देने आया हूँ।"

अहमद की बातें शेर खाँ को व्यर्थ प्रतीत हुयीं। उसके मुँह से शराब की गन्ध आ रही थी। शेर खाँ इस प्रकार अपना समय नष्ट नहीं करना चाहता था। अहमद जब शब्दों के बल पर अपनी इच्छा पूर्ति न कर सका तो उसने कटार का सहारा लिया। अपनी कायरता का वह नग्न और व्यर्थ प्रदर्शन कर रहा था।

देखते-देखते अहमद शेर खाँ के पास आ गया। कटार शेर खाँ के वक्षस्थल की ओर बढ़ने लगी।

"यह क्या बेवकूफी है?"—शेर खाँ गुर्राया। अहमद के हाथ काँपें। तत्क्षण उसने अपने को सँभाला। ओठों पर कटु मुस्कान लाते हुए बोला—"शेर खाँ, यह बेवकूफी नहीं अक्लमन्दी है। तुम्हारी मौत अब आ गयी है।"

शेर खाँ की दृष्टि बगल में लटकती तलवार पर जा पड़ी। जी में

आया, तत्काल अहमद के दो टुकड़े कर दे। परन्तु ऐसा करना उसने उचित नहीं समझा। ऐसी परिस्थिति में उसका व्याकुल होना स्वाभाविक ही था। युद्ध के बादल सिर पर मँडरा रहे थे। ऐसी स्थिति में उसने पूरब की ओर जाने की खबर उड़ायी थी। लाद भी जाने वाली थी। तब वह क्षुब्ध कैसे न हो? उसका भड़क उठना स्वाभाविक ही था।

शेर खाँ ने इस उत्तेजना से स्वयं क्रुद्ध न होकर शान्तिपूर्वक कार्य करना ही ठीक समझा। सरलतापूर्वक पूछा—"मीर साहब, आप यह न सोचिये कि मैं आप लोगों को मौत के मुँह ढकेल कर भाग रहा हूँ। दरअसल मैं आप लोगों की हिफाजत के लिए मौत को गले लगाने जा रहा हूँ।"

"लेकिन यह मुमकिन कैसे है?"—अहमद चीख उठा—"जब आप यहाँ नहीं रहेंगे तो कौन किले की और हमारी हिफ़ाज़त करेगा?"

"मीर साहब, सब्र कीजिये। खुदा पर भरोसा रखिये। शेर धोखा नहीं देता। आप यह क्यों भूल जाते हैं कि इसी किले में मेरा प्यारा नौजवान बेटा जलाल है।"

यह सुनते ही अहमद मानो आसमान से गिरा। उसने साश्चर्य पूछा—"क्या आप अकेले जा रहे हैं?"

"हाँ!"

अहमद की पलकें झुक गयीं। मुट्ठियों में जकड़ी कटार छूट कर दूर जा गिरी। शेर खाँ मुस्कुरा उठा। इसके पहले कि अहमद कुछ कह पाता, वह सुरङ्ग में प्रविष्ट हो चुका था।

अहमद पीछे खड़ा-खड़ा निर्निमेष दृष्टि से उसकी ओर उस मन्द प्रकाश में तब तक ताकता रहा जब तक शेर खाँ की हल्की छाया भी दिखायी पड़ती रही। तब वह लज्जित और कुण्ठित होकर लौट पड़ा।

४

जलाल खाँ खतरे में फँस गया

कातिक का महीना था। जाड़ा अभी आरम्भ न हुआ था। हवा में एक अनोखी मादकता थी जिसका अनुभव कर चुनार दुर्ग के भीतर रहने वाले युवक-युवतियों के हृदय उठती हुई पीड़ा और विवशता से से मन-ही-मन क्रन्दन कर उठते। विवशता इसलिए थी कि हुमायूँ ने एक भारी फौज लेकर किला घेर लिया था, परन्तु मुगल न तो लड़ते और न कहीं दूसरी जगह जाते।

शेर खाँ अपने साथियों सहित बिहार चला गया था। वहाँ से वह शक्ति-संग्रह कर मुगलों को मात देने की योजना बना रहा था। भीतर किले के प्रबन्ध और उसके निवासियों की सुरक्षा के लिए अपने पुत्र जलाल को वह छोड़ गया था। अफगान सेना भी भीतर पड़ी अपने सूबेदार की कर्त्तव्य-परायणता की पुष्टि कर रही थी।

शाम का समय था। सूर्य किले के सामने पश्चिम ओर डूब रहे थे। जलाल खाँ किले के सर्वोच्च कमरे में गङ्गा की ओर खुलने वाली खिड़की पर खड़ा था। यह कमरा किले का सुन्दरतम कक्ष और ताज खाँ का विलास-स्थल था। दीवारों पर चारो ओर आदमकद शीशे लगे थे जिनमें एक मनुष्य के शत-शत प्रतिबिम्ब उपस्थित हो दर्शक को अवाक् कर देते। कमरे की छत की सजावट देखते ही बनती। पत्थरों पर खुदी पच्चीकारी का उत्कृष्ट नमूना था जिसमें रङ्ग-बिरंगे रत्नों ने चार चाँद लगा दिये थे। खिड़की से आस-पास कोसों तक का

दृश्य दिखायी पड़ता। मानो समस्त संसार पाँव तले आ गया हो। लोगों का कहना था, यदि यती का भी तप भङ्ग करना हो, कठोर पतिव्रता को भी विलासिनी बनाना हो तो उसे एक रात इस कमरे में रख दो। जलाल सोच रहा था, पतन की सीढ़ी ऊपर जाती है अथवा नीचे।

शरद् ऋतु यौवन पर था। पवन शीतलता के भार से बोझिल था। उसकी शिथिल चाल में कामिनियों के कुञ्चित केशों से निकलने वाली सुगंध की भाँति एक विचित्र मादकता थी। सन्ध्या के शान्त आँचल में चुनार दुर्ग के आस-पास के प्रदेश में विहंगों का दल कलरव करता एक-एक कर छिपता जा रहा था।

दुर्ग चारो ओर से मुगल सैनिकों द्वारा घेर लिया जा चुका था। शेर खाँ किले के बाहर कहीं दूर था। अफगान सैनिक किले में ही अपने स्थानों पर तैनात थे। नीचे किले के बाहर, दुर्गचरण की विस्तृत भूमि पर चारों ओर अगणित कनात लगे हुए थे। मुगल सैनिक अपने कार्यों में व्यस्त थे। रोज की अपेक्षा आज उनमें अधिक चुस्ती थी।

दुर्ग के ऊपरी कमरे के कोने में खुली खिड़की पर से खड़ा-खड़ा जलाल खाँ एकटक नीचे मुगल सैनिकों को देख रहा था। उसके पिता शेर खाँ को किले से बाहर गये लगभग चार मास बीत रहे थे। किले का फाटक चारों ओर से बिलकुल बन्द था। बाहर से भीतर आवागमन के सभी साधन अवरुद्ध थे।

जलाल ने हल्की-सी अँगड़ाई ली। वह रोज इसी प्रकार सन्ध्या समय यहाँ आ खड़ा होता और शत्रु के पड़ाव की ओर देखता; कुछ सोचता। कभी मन में आता कि वह अचानक आक्रमण करके मुगलों की शक्ति छिन्न-भिन्न कर दे; परन्तु पिता के आदेश के विपरीत कार्य करना जलाल उचित न समझता। न जाने कब तक मुगल इसी

प्रकार किले को घेरे रहेंगे ? आश्चर्य तो यह था कि न तो मुगल हमला करते और न किले पर अधिकार करने का प्रयास। ऐसा प्रतीत होता मानों किले के चारों ओर फैली पहाड़ी भूमि पर कुछ राहगीरों ने आमोद-प्रमोद के लिए पड़ाव डाल दिया हो।

सहसा कमरे के दरवाजे खुलने का स्वर सुनकर जलाल पलटा। उसकी विमाता तथा दुर्ग-स्वामिनी हज़रत लाद मलका ने कमरे में पैर बढ़ाया। जलाल ने गम्भीर मुद्रा को सरल बनाने की चेष्टा कर मलका का अभिवादन किया।

मलका ने गौर से जलाल की ओर देखा। यौवन की अल्हड़ता गम्भीरता में बदल चुकी थी। उत्तरदायित्व का भाव जलाल के चेहरे से टपक रहा था। उसे देखते ही पल भर में उसकी कठोर परायणता, अनुशासन, सैनिक जीवन और सच्चाई आप ही व्यक्त हो जाती। लम्बी-बड़ी आँखों से निष्कपटता झाँकती रहती। मलका को देखकर वह कुछ विनयी और संकोचशील हो गया था जैसा प्राय: सुन्दरियों के सम्मुख अचानक पड़ जाने पर युवकों में पाया जाता है; जलाल ने एक बार मलका की ओर देखा और उसके असाधारण सौन्दर्य-राशि से प्रभावित हो दूसरी ओर देखने लगा।

उसकी दृष्टि में कुछ नवीनता थी, फिर भी पलकें झुकी हुई थीं। उसके वस्त्र अस्त-व्यस्त थे। घुँघराले केश बिखरे हुए थे। अपने पिता की ही भाँति वह भी गौर वर्ण का लम्बा और सुगठित युवक था। जीवन के पथ पर यौवन और सौन्दर्य का अद्भुत मिलाप हो गया था।

जलाल ने पलकें नीची होने के कारण तो नहीं देखा, किन्तु सहसा मलका के अधरों पर मुस्कान की एक हलकी रेखा दौड़ पड़ी। पूछा—"किस फिक्र में उलझे हो ?"

जलाल की अवनत दृष्टि ऊपर उठी। उन आँखों की गहराई में यौवन की चंचलता और एक आतुर जिज्ञासा छलक रही थी।

लाद भीतर पर्दा न करती थी। वह जलाल के सामने मुँह खोले खड़ी थी। उसके शरीर पर सोने के तारों से बीने रेशमी वस्त्र थे। पाँव में कामदार नुकीली जूतियाँ चमक रही थीं। उसके भरे और गठीले रूप को देखकर उसकी वास्तविक अवस्था का अनुमान लगाना कठिन था।

जलाल ने पुनः गवाक्ष से मुगल खेमों की ओर दृष्टि डाली। भर्राये स्वर में बोला—"हमारी हालत किसी कैदी से कम नहीं। अब्बा हुजूर को गये करीब चार माह हो रहे हैं। तब से उनकी कोई खबर नहीं मिली। इधर दुश्मन हटने का नाम तक नहीं लेते।"

उसके स्वर में चिन्ता, उदासी और हार्दिक वेदना की गूँज थी। सुनकर मलका स्वयं भी चिन्तित हो उठी। यद्यपि शेर खाँ के चले जाने के बाद से वह भी कम उदास और चिन्तातुर न थी, फिर भी उसकी बातों और शक्ति का भरोसा कर वह अपने मन के उमड़ते भावों को बलपूर्वक दबा लेती। जब दिल घबराने लगता तब यह सोचकर कि शेर खाँ का लड़का जलाल तो अभी किले में सिपाहियों के साथ पड़ा ही है, वह सन्तोष कर लेती। किन्तु इस सन्तोष का आधार भी आज उसे सरकता-सा प्रतीत हुआ जब उसने इस सुन्दर युवक को उदास पाया। उसे बहलाने के लिए मुस्कुराने का प्रयास करती हुई बोली—"मैं सोचती हूँ तुम्हें मुगलों से मुकाबला करना चाहिए।"

जलाल खाँ चुप-चाप खड़ा रहा। बात यह थी कि किले में रसद समाप्त हो रही थी। केवल तीन-चार रोज और किसी प्रकार व्यतीत किये जा सकते थे। ऐसी दशा में भुखमरी से मुक्ति पाने का केवल एक ही उपाय था कि मुगलों से युद्ध-भूमि में जूझ कर उनसे अपना मार्ग निष्कंटक कर लिया जाय। मलका ने ध्यान से जलाल की ओर देखा। ऐसा लगा जैसे जलाल मलका के विचारों से सहमत नहीं था। वह जानता था कि पिता के निर्देशन के विपरीत कार्य करने पर

लेने के देने पड़ सकते हैं। उसने सरलता से उत्तर दिया—"अब्बा-जान के हुक्म के खिलाफ काम करना बेजा है। अब तो तीन दिनों तक के ही लिए किले में रसद बची है। इस बीच कोई कदम उठाने के लिए हमें अच्छी तरह सोच-समझ लेना चाहिए।"

"मैं सोच चुकी हूँ"—मलका दृढ़तापूर्वक बोली—"कल शाम तक मुगलों की कब्रें तैयार हो जायेंगी। यदि तुम हिम्मत न कर सको तो मैं उतरूँ। इस किले की रक्षा के लिए मैंने शस्त्र धारण करने की सोच लिया है।"

इस स्त्री के हृदय में इतना साहस! क्षण-भर के लिए जलाल की आँखें विस्मय से फट पड़ीं। वह प्रशंसा भरी दृष्टि से लाद की ओर ताकने लगा। वास्तव में वह लाद को एक विलासिनी रमणी ही समझता आया था, जिसके जीवन का उद्देश्य ऐश्वर्य और सुखोपभोग ही वह समझा करता। अपने पूर्व पति की मृत्यु के तीन वर्षों बाद अचानक शेर खाँ से पुनर्विवाह करने की बात सुनकर सभी स्तम्भित थे। क्या शेर खाँ इस उम्र में ऐय्याश हो गया है अथवा लाद ही जवानी में पागल है! जमाना चाहे जो समझे, किन्तु जलाल का पूर्ण विश्वास था कि उसके पिता विलासी कदापि नहीं हो सकते। इस प्रौढ़ावस्था में जब वह जीवन के अमूल्य सुखों के उपभोग का काल समाप्त कर संध्या बेला की ओर बढ़ रहे थे, एक सुन्दरी युवती से विवाह का उद्देश्य विलास कभी नहीं हो सकता। अवश्य ही इस कार्य के पीछे अफगान शक्ति को सुदृढ़ कर उत्तर भारत के प्रमुख गढ़ चुनार को हस्तगत कर लेने का उद्देश्य निहित है।

जलाल पिता का अटल भक्त पुत्र था। उसे अपने पिता पर श्रद्धा बढ़ने लगी। वह जितना ही शेर खाँ के प्रति सहानुभूतिपूर्वक सोचता, लाद के प्रति, जो अब उसकी विमाता थी, उसकी धारणा भी बद्धमूल होती जा रही थी। उसे विश्वास हो गया कि यह रमणी स्वेच्छाचारिणी

और पूर्ण स्वतंत्र है। मनमाना आमोद-प्रमोद और विलासमय जीवन-यापन ही उसका लक्ष्य है। इस विचार से वह लाद को केवल एक रूपवती साधारण युवती मानता आया था। आज अचानक उसकी वीर वाणी सुनकर जलाल सहसा सँभला। उसे अपने विचारों में सन्देह होने लगा। लाद के प्रति अपनी गलत धारणा के लिए वह मन-ही-मन अपने को धिक्कारने लगा। जब उसने दृष्टि उठाकर इस महिमामयी नारी की ओर देखा तो सहसा दोनों की आँखें टकरायीं। जलाल लज्जा से संकुचित हो उठा। उसने मुँह दूसरी ओर घुमा लिया।

उसने बहुत चाहा, किन्तु दबा चोर प्रकट हो ही गया। लाद युवती थी और जलाल की उम्र से अधिक बड़ी भी न थी। शायद ही वह जलाल से पाँच-सात वर्ष बड़ी हो। इसलिए वह इस युवक से, जिस दिन से वह इस किले में रहने लगा था, काफी रात गये और एकान्त में भी बातें करने में न हिचकती। उसकी इस निर्भीकता और बड़ी-बड़ी फैली आँखों के मूक भाव में जलाल को न जाने किस सन्देश का आभास-सा मिला जिससे उसका भावुक हृदय विचलित होने लगा। तब क्या यह सौन्दर्य की पुतली उसके प्रति आकृष्ट है?

दूसरे ही क्षण जलाल का मन भीतर ही भीतर कट मरा। छिः वह क्या सोच रहा है? उसे क्या करना है? पिता ने कितने उत्तरदायित्व का कार्य उसे सौंपा है। पता नहीं किन तूफानों की झोंक में वह अपने भाग्य की परीक्षा करते होंगे और मैं यहाँ इस एकान्त कमरे में प्रणय-लीला रचूँ। छिः! उसका हृदय उसके हीन भावों की भर्त्सना करने लगा।

मलका की बातें सुनकर जलाल चौंक उठा। उसे अपने कानों पर सन्देह होने लगा। क्या मलका स्त्री होकर शत्रु से युद्ध करेगी? यह तो उसके पिता के विचारों के विपरीत कार्य है। जलाल उधेड़-बुन में उलझ गया। उसे सोचते देखकर मलका स्वतः बोल उठी—"मैं अपनी चाल में जरूर कामयाब होऊँगी। कल वह शाम होगी जब हुमायूँ की पलकें

मेरी अँगुलियों के नीचे होंगी और उसके सामने मुगल सिपाही सुला दिये जायँगे।"

अब्बा के उसूलों के खिलाफ गैरखानदानी काम!—जलाल विस्मित हो उठा। क्षण-भर में सारी परिस्थिति स्पष्ट हो गयी। मलका की अधीरता ने उसे चिन्तित कर दिया। उसके इशारे पर कोई कार्य करने को वह कदापि तैयार न था। वह जानता था कि मलका के मस्तिष्क में केवल चुनार दुर्ग है जब कि उसके पिता के हृदय में भारत का सिंहासन।

जलाल को अपने उद्देश्य का विरोधी पाकर मलका खिन्न हो उठी। उसके चेहरे का रंग बदलने लगा। जलाल भावपूर्ण शब्दों में बोला—"औरतों की आड़ से झूठी मुहब्बत में बँधे दुश्मन को मारने से अच्छा है कि हम भूखों मर जायँ।"

"कहना आसान है जलाल"—मलका चीख पड़ी। उसके स्वर में व्यंग भरा था। उसने फिर उसी तीखेपन से कहा—"अगर मैं जानती कि मुगल इस तरह हमें पंगु बना देंगे तो तुम्हारे अब्बाजान को कदापि किले के बाहर न जाने देती।"

"आप बिला वजह परीशान हैं। यह सोचना मेरा काम है।"

"तुम्हारा! तुम्हें मेहर से फुर्सत मिले तब तो..." कहकर मलका ने ऐसी मार्मिक दृष्टि से जलाल की ओर देखा कि वह काँप उठा।

"मेहर! उससे मेरा क्या रिश्ता?"—कहने को तो वह कह गया किन्तु उसे ऐसा लगा जैसे वह खुद ही पकड़ा गया और अपनी चोरी का इजहार कर रहा हो।

"रिश्ता? यह तो उसके वालिद मीर अहमद साहब से पूछो जो उससे तुम्हारा निकाह करने का फैसला कर चुके हैं।"

मलका ने मुस्कुराकर जलाल की ओर देखा। वह चुपचाप खिड़की की ओर देख रहा था।

मीर साहब! मेहरबानू! जलाल खाँ की समझ में कुछ न आ रहा था। मलका की बातें उसके लिए पहेली स्वरूप थीं। मेहर को वह तभी से देखता चला आ रहा है जब से वह चुनार आने लगा था। परन्तु उसके साथ अपने विवाह सम्बन्ध की बातें सुनकर वह कुछ विस्मित-सा हो उठा। कुछ कहने जा रहा था कि कमरे में एक लौंडी के प्रवेश से सहसा रुक गया।

दासी के बायें हाथ में एक लम्बा घुमावदार छड़ था जिसके ऊपरी मुड़े भाग पर मशाल जल रहा था। नम्रता से उसने मलका और जलाल को सलाम किया और कमरे के फानूस की मोमबत्तियों को जलाकर वह कमरे से बाहर चली गयी।

प्रकाश की सीमा में अंधकार लुप्त हो गया। बाहर आकाश में भी दिन-भर शासन करने के बाद दिनकर ने प्रकाश फैलाने का भार निशिकर के हाथों दे दिया था। प्रकृति अमृत-वर्षा करने लगी। थिरकता पवन सौन्दर्य-शैय्या पर नैश प्रसूनों की सुरभि से क्रीड़ा करने लगा था।

मलका के नेत्रों के समक्ष सूरज की किरणों वाला चाँद था—कठोर हृदय वाला, देखने में मधुर। उसे यह वातावरण पसन्द न आया। ऐसे समय में यह वार्त्तालाप कितना असङ्गत था। जलाल के चिन्तित मुखमण्डल को देख उसे कुछ क्लेश हुआ। मन्दगति से आगे बढ़ी। अपना दायाँ हाथ उसने जलाल के कन्धे पर रख दिया। जलाल नशा खाये व्यक्ति-सा लड़खड़ा उठा। वह चौंका जब लाद ने मधुर कण्ठ से कहा—"मैं जा रही हूँ जलाल।"

जलाल की दृष्टि ऊपर उठी। बादलों के बीच चाँद की रेखाओं में रति की-सी मुस्कान देखकर वह चौंक उठा। मलका ने अपनी मुख चुम्बन करती लटों को किनारे हटाया। बोली—"आज रात मैं तुम्हारे फैसले की प्रतीक्षा करूँगी।"

*

जलाल कुछ कह न सका। कभी मलका की ओर देखता, कभी कमरे की फर्श की ओर। उसे अपने असहाय हृदय पर तरस आ रही थी। लाचार था। क्या करता? उसका जीवन भी क्या था? स्नेह से शून्य और आकर्षण विहीन रेगिस्तान-सा सूखा मरु-प्रदेश जिसमें झंझावात के झोकों का अनवरत ताण्डव होता रहता। शेर खाँ के अपने जीवन की कोई निश्चिन्तता न थी। अतः जलाल की जिन्दगी भी भाग्य-चक्र में बँधी नाच रही थी। माता के शैशव में ही मर जाने के कारण उसे प्रेम के माधुर्य का ज्ञान न था। उसने न जाना कि ममता क्या है? उसे जिन्दगी मिली थी और वह जी रहा था। प्रेम के दो शब्दों में जलाल को खरीदने की अटूट शक्ति थी।

मलका यह अच्छी तरह परख चुकी थी। जलाल के हृदय-कोष की कुञ्जी उसके हाथ आ गयी। प्रसन्नता से उसका मुख खिल रहा था। अपनी विजय पर उसे गर्व था। वह हर प्रकार से जलाल को अपने वश में करने के लिए उद्यत थी।

उसने अपने वस्त्र सँभाले और बाहर चली गयी। उसके जाते ही कमरा मानो श्री-हत हो गया। जलाल कुछ देर तक जाती हुई दुर्ग स्वामिनी विमाता की ओर देखता रहा। लाद बाहर खड़ी दासियों के साथ अपने कमरे की ओर चल पड़ी।

जलाल के लिए मलका एक पहेली बन चुकी थी। मलका के जाते ही वह पूर्व घटना-चक्रों पर विचार करने लगा। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि मेहर की बात उसे कैसे ज्ञात हो गयी? जिस रहस्य को उसने अपने हृदय के सबसे घने अन्तराल में प्रयत्नपूर्वक छिपा रखा है, जिसे वह अपने से भी छिपाता आया है, वह प्रकट कैसे हो गया? मेहर से उसकी घनिष्ठता का रहस्य जानता ही कौन है? तब क्या उसने ही बता दिया है? अथवा उसकी सहेलियों ने? हो सकता

है लाद ने ही कभी देखा हो। नहीं तो फिर मीर अहमद ने विवाह का निर्णय किस आधार पर कर लिया?

अभी दोपहर ही को तो मेहर उसके पास आयी थी। उसके रोम-रोम से प्रवाहित होने वाली रूप की धारा में जलाल डूब चुका था। रेशमी शलवार, गुलाबी चेहरे को चूमती लटें, बिजली-सी मुस्कान और छलकती आँखों ने जलाल के हृदय में तूफान उत्पन्न कर दिया था।

उसका आना जलाल न जान सका था। जान भी कैसे पाता? बाहर गये हुए पिता की चिन्ता में खोकर उसे अपने पीछे संसार का ज्ञान भूल चला था। मेहर आयी और सदा की भाँति उसके पीछे खड़ी हो गयी, निर्विकार, निस्पन्द और नीरव। जब जलाल बहुत देर तक न हिला-डुला तो उसने चञ्चलता-भरी शोखी से उसे झकझोर दिया था। कितनी आत्मीयता थी उस दृष्टि में, कितना माधुर्य था उस स्पर्श में। जलाल का मन मेहर की कहानी के पृष्ठ उलटने लगा।

लावण्य की यह सुकोमल अप्सरा पृथ्वी पर कैसे उतर आयी—आश्चर्य था!

करीब चार महीने हुए होंगे।

प्रथम बार वह अपने पिता, मीर अहमद की खोज में जलाल के पास आयी थी। नकारात्मक उत्तर पा तत्क्षण वापस लौट गयी। किन्तु जलाल अपने को न सँभाल सका। उसके पीछे दौड़ पड़ा। आँखों में प्यास उफन रहा था।

मेहर की खोज में वह बुर्ज तक आ पाया था कि किसी की आहट ने उसे आगे बढ़ने से रोक दिया। अन्धकार में आँखें गड़ा दीं। मेहर वहाँ उपस्थित थी। उसकी मनोकामना पूर्ण हो गयी। आनन्द-विभोर हो उठा था वह। सहसा मेहर उसके समीप आ गयी। पागलों की भाँति जलाल को झकझोरते हुए उसने कहा—"आप यहाँ क्यों आये हैं? जल्द वापस जाइये। आपकी जान का खतरा है।"

इसके पहले कि जलाल और कुछ पूछ पाता, एक विचित्र रहस्य का सृजन करती मेहर वहाँ से उठकर चली गयी। विचारों में उलझा जलाल किसी निष्कर्ष पर न पहुँच सका।

मलका के जाने के बाद वह उसकी कहानी की तमाम कड़ियों को सुलझाने का प्रयास कर रहा था कि सहसा मीर अहमद कमरे में आया। उसके पैर लड़खड़ा रहे थे। आँखें लाल थीं। दैत्य सदृश उसके विशाल शरीर को देखते हुए कोई उसे अधेड़ अवस्था का व्यक्ति नहीं कह सकता था।

जलाल मीर अहमद को बतला चुका था कि कोई उसके विरुद्ध षड्यन्त्र कर रहा था। उसने सोचा था कि जब मेहर इन बातों को जानती है तो उसका पिता इस रहस्य पर कुछ अधिक प्रकाश डाल सकेगा। परन्तु अहमद ने इन विषयों के प्रति अज्ञानता प्रकट की। यद्यपि उसने सूचना देनेवाले व्यक्ति का नाम जानने के लिए अत्यन्त आतुरता दिखायी, परन्तु जलाल मेहर का नाम मुँह पर न ला सका। क्यों, शायद वह स्वयं न जान पाया।

जलाल की विचार-ग्रस्त मुद्रा देखते ही अहमद ने शीघ्रता से पूछा—"कल की फिक्र अभी तक नहीं उतरी क्या?"

"फिक्र कैसी? तशरीफ रखिए"—जलाल ने ओठों पर कृत्रिम मुस्कुराहट लाते हुए कहा। अहमद के हाव-भाव को देखते हुए व्यंग-पूर्ण शब्दों में बोला—"मालूम होता है आपने आज कुछ ज्यादा पी ली है।"

"पीने-पिलाने का ही नाम जिन्दगी है"—अहमद ने लापरवाही से उत्तर दिया—"कहीं घूमने चलोगे?" उसने पूछा।

"किले के अन्दर क्या टहलना? सभी रास्ते तो बन्द हैं।"

"क्यों? सुरङ्ग किस दिन के लिए है?......"

"रात के वक्त ! नहीं-नहीं, इस समय नदी-किनारे जाना ठीक नहीं है। बाहर निकलना खतरे से खाली नहीं।"

पर अहमद इतनी सुगमता से जलाल को छोड़ देने वाला न था। उसने पुनः आग्रह किया। जलाल की बाहर घूमने की तनिक भी इच्छा न थी। उसने कोई बहाना बना देना आवश्यक समझा। बोला—"आप चले जाइये। सिर-दर्द की वजह से मैं माफी चाहता हूँ।"

जलाल का यह वार भी खाली गया। अहमद उसी लहज़े में शीघ्रता से बोला—'मियाँ, पहले ही क्यों न कहा कि सिर में दर्द है। मैं अभी तुम्हारे लिए दवा मँगवाता हूँ।"

"जी नहीं!" जलाल चौंक उठा। एक मुसीबत टली तो दूसरी आफत आ टपकी। अहमद की कड़ी मदिरा ग्रहण कर जलाल दो-तीन दिनों के लिए बेकार नहीं होना चाहता था। उसके सिर पर किले की रक्षा का पूरा भार था। मदिरा के प्रभाव से वह अवश्य ही संज्ञा-शून्य हो जाता और रात को मलका से युक्ति-संगत वार्त्तालाप न कर पाता। छलकती मौत के स्वाद से जलाल अनभिज्ञ ही रहना चाहता था।

"जरा-सी तो पी लो"—अहमद ने आग्रह किया।

"जी नहीं, मैंने जरूरत से ज्यादा पी ली है...।"

"अच्छा!"

"जी हाँ, नशे में दिमाग ठिकाने नहीं है।"

बात निशाने पर लगी। अहमद नहीं जानता था कि जलाल शराब नहीं पीता। उसे जलाल की बातों पर विश्वास हो गया। उधर जलाल को अपने शब्दों पर स्वयं विश्वास नहीं हो रहा था—आश्चर्य था।

"तब तो तुम सो जाओ"—अहमद फुर्ती से बोला। जलाल मन ही मन प्रसन्नता से मुस्कुरा उठा। सहसा उसका मस्तिष्क मीर अहमद के विरुद्ध सन्देह से भर गया। आज एक शराबी को होश में अपने साथी से अलग होने की बात नयी दीख पड़ी।

जलाल खाँ के नेत्रों के समक्ष उसके विरुद्ध होनेवाले षड़यन्त्र की रूप-रेखा स्पष्ट झलकने लगी। अहमद ने उसके साथ अपनी पुत्री के विवाह का झूठा प्रचार करके सुरक्षा की आड़ बना लिया था। कौन विश्वास करेगा कि अपने भावी दामाद की हत्या में अहमद का हाथ था।

जलाल खाँ ने उस समय अहमद को विदा कर देना उचित समझा। कृत्रिम अँगड़ाई लेते हुए कहा—"जी हाँ। अब मैं सोऊँगा। नशा तेज होता जा रहा है।"

"मैं जा रहा हूँ"—मुस्कुराते हुए अहमद बोला। उसकी आँखें अजीब तरह से चमक रही थीं। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि उसके वास्तविक नशे का स्थान अन्य किसी नशे ने ले लिया था।

आज की रात अहमद के भाग्योदय की रात थी। मलका लाद उसकी मुट्ठी में थी। वह जानता था कि मुगल बादशाह हुमायूँ की मलका बनने का स्वप्न देखने वाली लाद बेगम उसके पद-चुम्बनार्थ सदैव तत्पर रहेगी। नेत्रों के समक्ष वह दृश्य घूम गया जब कि वह किले का सर्वेसर्वा होगा; कोष उसकी मुट्ठी में होगा और मलका की साया उससे सैकड़ों कोस दूर होगी।

मलका के हटते ही शेर खाँ की ओर से उसका मार्ग साफ था; परन्तु अपनी योजना की पूर्ण सफलता के लिए उसे जलाल खाँ को अपने रास्ते से हटाना अनिवार्य था।

जलाल को नशे में मस्त समझ कर अहमद को मानो स्वर्ग मिला। उसने तीव्र दृष्टि से गद्दे पर लेटे जलाल की ओर देखा। धीरे से बोला—"आज हवा अच्छी चल रही है। मजा लेना हो तो खिड़की दरवाजा खुला रखना—चैन की नींद आयेगी।"

जलाल ने स्वीकृति स्वरूप सिर हिला दिया और अहमद फूला हुआ सीना तान कर कमरे से बाहर निकल गया।

———

५

क्या मलका भी विश्वासघातिनी है ?

"......किन्तु इसमें तुम्हारा लाभ ?"—मलका ने उत्सुकता से पूछा।

अहमद ने एक मार्मिक दृष्टि मलका पर डाली। फिर उसके नेत्र पत्थर के नक्काशीदार फूलदान पर टिक गये। उसने गम्भीरता से उत्तर दिया—"इन्सानियत दूसरों के ही फायदे की बात सोचती है।"

लाद चुप रही। अहमद का यह उत्तर सन्तोषप्रद नहीं था। आदमी के प्रत्येक कार्य के पीछे स्वयं उसका स्वार्थ अवश्य रहता है। लाद को सम्राट हुमायूँ की पटरानी बनाने वाला यह व्यक्ति अवश्य ही मुट्ठी में कुछ रखकर अँगुली से संकेत कर रहा है।

अहमद समझ रहा था कि उसके उत्तर से लाद को सन्तोष नहीं है। वह जानता था कि औरतों को थप्पड़ों से वश में नहीं किया जा सकता, परन्तु फुसला कर कुचला अवश्य जा सकता है।

"हमारे आपमें सिर्फ शरीर का अन्तर है—" दार्शनिकों की भाँति अहमद बोला। साँप का दाँत टूट चुका था, केवल उसे मुँह से बाहर करना था। अहमद ने उसी चातुरी से कहा—"कितना बड़ा फायदा है हमारा। हमारा कितना बड़ा सौभाग्य होगा जब लोग कहेंगे कि मैं मुल्क के बादशाह की बेगम का देवर हूँ।"

लाद के नेत्र चमक उठे।

रजनी का शैशव समाप्त हो चुका था। हवा में अधिक नमी आ

चुकी थी। लाद की आज्ञा से एक दासी ने कमरे की खिड़कियाँ बन्द कर दी।

यह कमरा उसका निजी बैठक था। चारों ओर संगमरमर और कीमती लकड़ियों की नकाशीदार छोटी-बड़ी चौकियों पर मखमल के गद्दे बिछे हुए थे। यह कमरा अन्तःपुर के मध्य में था। खिड़कियों और दरवाजों से प्रकाश एवं पवन बेरोक अन्दर प्रवेश कर सकता था पर उनका निर्माण इस प्रकार हुआ था कि कोई बाहरी व्यक्ति कमरे में उपस्थित व्यक्तियों को न देख सकता था और न उनकी बातें ही सुन सकता था। इस बैठक का प्रमुख द्वार दालान की ओर था जिसे पार करके दूसरे दालान के अंत में एक सँकरे मार्ग से किले के अन्य भागों में जाने का रास्ता था। इस सँकरे मार्ग के आगे एक कोने में चार सैनिक पहरा दिया करते थे।

रनिवास की रक्षा का भार दासियों पर था। हर कमरे से रेशमी रस्सियाँ बाहर लगे घंटे से सम्बन्धित थी। किसी विकट परिस्थिति में उसे खींचकर तत्काल सुरक्षा का प्रबन्ध किया जा सकता था। बैठक के प्रमुख द्वार की विपरीत दिशा में अगल-बगल दो अन्य छोटे दरवाजे थे, जिन पर रेशमी परदे पड़े हुए थे। एक दरवाजे से होकर मलका के शयन कक्ष तक पहुँचने का मार्ग था और दूसरे दरवाजे के अन्दर कई गुप्त मार्ग थे जो विशेषकर खजाने से सम्बन्धित थे।

बैठक के तीन कोनों में पत्थर के आकर्षक फूलदान रखे थे। एक ओर लड़की के ऊँचे स्तम्भ पर पत्थर का एक प्याला रखा था, जिसका ऊपरी सिरा ढँका हुआ था। उसके मध्य के छिद्रों से सुगन्धित धूप-धूम्र निकलता रहता था। बैठक की छत काफी ऊँची थी, जिसकी सतह पर कलात्मक खुदाई के काम किये हुए थे। दीवारों पर चारो ओर रंग-बिरंगे आकर्षक चित्र टँगे हुए थे, जिनके अगल-बगल हिरण और

बारह सिंहों की चमचमाती सींग और हाथी दाँत के कामदार चौखटों में आदमकद शीशे टँगे हुए थे।

लाद की अनुमति बिना कोई इस कक्ष में न आ-जा सकता था। किन्तु मीर अहमद का मलका के ऊपर इतना प्रभाव पड़ चुका था कि वह बिना रोक कभी भी अन्दर आ जाता। हाँ, शेर खाँ के लिए यह अनुमति अपवाद थी। वह अनेक अवसरों पर बेगम की अनुमति बिना भी उससे इस कमरे में मिल चुका था। परन्तु वह था कहाँ?

पहले तो लाद को अहमद की बातों पर विश्वास न हुआ, पर उसकी धूर्ततापूर्ण बातों से वह अपने को मुक्त न कर सकी। अहमद उसकी प्रत्येक शंका का समाधान करता जा रहा था।

वास्तव में मलका भी शेर खाँ की नीति से ऊब चुकी थी। शेर खाँ को गये लगभग चार माह व्यतीत हो रहे थे। उधर दुर्ग चारो ओर से मुगल सैनिकों द्वारा घिरा हुआ था।

मलका की परीक्षा विकट थी। अहमद समझाता जा रहा था—"भूख की नदी में प्रेम की नाव नहीं चल सकती बेगम। तीन दिनों बाद किले में अकाल पड़ने वाला है। सबकी आँखें आपकी ओर लगी हैं। आज रात आप इसका निर्णय कर लीजिए। सुबह होते ही मैं आपके पास फाटक खोलने की अनुमति लेने आऊँगा।"

"लेकिन जलाल खाँ?"—मलका ने सकुचाते हुए पूछा—"सारी सैन्य शक्ति तो उसी के हाथ है।"

"वह अभी छोकरा है"—अहमद ने लापरवाही से कहा।

"आपने उसे अपने रास्ते से हटाने की जो तरकीब सोची है, मेरे ख्याल से ठीक नहीं है।"

"बिलकुल ठीक है बेगम"—अहमद दृढ़तापूर्वक बोला—"कुचले साँप को जिन्दा छोड़ देना ठीक नहीं है।"

लाद की दृष्टि अहमद पर टिक गयी। उसकी दशा उस शेरनी की तरह थी जो पिंजड़े में बन्द होकर तमाशा दिखाने वाले बाजीगर के इशारों पर नाचती है। यद्यपि वह जलाल की हत्या के पक्ष में नहीं थी, पर तीन दिनों में किले की रसद समाप्त होने की कल्पना से वह सिहर उठती और तब उसका निर्णय क्षण-भर में बदल जाता।

"तो आपने जलाल के लिए क्या बन्दोबस्त किया है?"—बेगम ने गम्भीरता से पूछा।

"आज जलाल शराब के नशे में बेहोश है। तलवार को उसका गला कलम करने का अच्छा मौका है।"

"उसे मारने से क्या फायदा? हो सकता है कि हैदर गड़बड़ी करे। भण्डा फूट जाने पर लेने के देने पड़ जायेंगे।"

"कुछ नहीं होगा"—अहमद ने अपनी जाँघ पर हाथ पटकते हुए कहा—" आप जाकर उससे हैदर के नाम एक पत्र लिखवा लें कि वह सरदार शेर खाँ के पास जा रहा है। आज हम उससे हर काम करा सकते हैं।"

लाद को अहमद की योजना युक्ति-सङ्गत लगी। कुछ देर तक भावी कार्यक्रमों पर विचार करने के बाद अहमद उठ खड़ा हुआ। उसने मलका को मन्द स्वर में कुछ परामर्श दिया और बैठक से बाहर चला गया।

अहमद के जाते ही लाद विचारों के आकाश में चढ़ने-उतरने लगी। एक ओर उज्ज्वल भविष्य की मनोहर कल्पना थी तो दूसरी ओर जीवन की कठोर वास्तविकता। यह विश्वासघात जलाल के साथ न था—शेर खाँ के साथ था। पति के साथ विश्वासघात। छिः! ऐसा नहीं हो सकता। एक बार उसने शेर खाँ से प्रेम किया था। उसकेप्रेम के भँवर में वह डूब गयी। उसे अपना सर्वस्व भेंट कर दिया। एक समय था जब शेर खाँ उसकी हर साँस में था। उसे प्राप्त करने के लिए

उसने कितनी मिन्नतें मानी थीं। शेर खाँ मिल गया। समस्त उलझनें समाप्त हो गयीं। काँटे के हटते ही कली पृथ्वी की ओर झुक गयी। समस्त आकर्षण मिट्टी में जा मिला। आसमानी कल्पना न जाने किस तारे में विलीन हो गयी और उल्का के रूप मस्तिष्क के एक कोने में अस्तित्वहीन हो जा समायी।

शेर खाँ से उसे मिला क्या? कुछ नहीं। शेर खाँ से विवाह करके लाद ने जिस सुख की कल्पना की थी, वह उसे प्राप्त न हो सकी। मन की एकान्त अभिलाषा भीतर ही भीतर तड़प उठी। वह अभी तरुणी है, उसके मन में प्रेम का सिन्धु तरङ्गित होता रहता है, अपने प्रेमी से भी वह वैसी ही उत्कट कामना की आशा करती। किन्तु शेर खाँ से उसकी यह आशा फलीभूत न होती। शेर खाँ विवाहित था, उसकी पहिली बीबियाँ मौजूद तो थीं ही। उसकी अवस्था भी ढलती जा रही थी। अब वह अधेड़ हो चुका था। उसकी कामनाएँ मर-सी गयी थीं। कम-से-कम लाद यही समझती। उधर उसके दोनों बेटे आदिल और जलाल यौवन की लहरों में बहने लगे थे। वे दोनों भी विवाहित थे। उनकी बीबियाँ अपने सुनहले संसारों में मस्त थीं। लाद उन्हें देखती तो माँ होने से शान्ति का अनुभव करने के बदले एक अव्यक्त ईर्षा से जल उठती। न जाने क्यों उसका मन अशान्त हो उठता। उसकी सौतें कभी उसकी राह में बाधक न हुईं, फिर भी वह उनसे चिढ़ती। उसका विक्षुब्ध हृदय सबसे रुष्ट रहता। और इन सब असन्तोषों का मूल कारण था शेर खाँ जो उसकी धधकती आशाओं की मरुभूमि में बरसाती रात का मेघ बनकर छा नहीं पा रहा था। कभी-कभी रात के सूने अँधियारे में उसका नारीत्व मातृत्व पद के लिए तड़प उठता और तब वह अपनी असहायावस्था पर रो उठती। सब कुछ तो उसे दे दिया था, परन्तु उसकी प्यास, अमिट थी, बुझ न सकी। वह बहुत कुछ चाहता है जिसका शतांश लाद से सम्बन्धित था। शेर खाँ ढलती

उम्र का है। उसे किसी तरुणी के प्रेम की क्या चाह ? और यह जलाल-निरा बुद्धू है। जिस भौंरे में कली परखने की क्षमता नहीं वह काटों में ही टकराता रहेगा। सहसा मेहर की याद हो आयी और उसका नारी सुलभ हृदय जलाल के प्रति अधिक कठोर हो गया।

हुमायूँ की बेगम बनने का स्वप्न मलका के मस्तिष्क में उमड़ पड़ा था। वह मुल्क की साम्राज्ञी होगी। वैभव उसका पद-चुम्बन करेगा। सैकड़ों शेर उसके इशारों पर नाचेंगे—हजारों जलाल दिलों के दीपकों में उसके प्रेम का दीप जलायेंगे। लाद का मुख दीप्तिमान हो उठा। सहसा वह उठ खड़ी हुई। शीघ्रता से वस्त्र सँभाले। साथ में दो दासियाँ लेकर जनानखाने से बाहर निकली।

गलियारे को पार करके वह सीढ़ियों के समीप आयी। चारों ओर का वातावरण पूर्ण शान्त था। सैनिक अपने पहरे पर तैनात थे। सैनिकों का अभिवादन स्वीकार करती हुई वह ऊपरी मञ्जिल पर पहुँची।

कुछ ही क्षणों के बाद वह एक सुसज्जित कमरे में उपस्थित थी।

यह कमरा जलाल खाँ का आम बैठक था। दीवारों पर चारों ओर जङ्गली जानवरों के खाल टँगे हुए थे। बीच में पत्थर की एक सुन्दर चौकी थी जिस पर साधारण कपड़े का गद्दा पड़ा था।

लकड़ी की एक चौकी रखी थी जिस पर कुछ कागज फैले हुए थे। मलका ने दृष्टि दौड़ायी। देखा, जलाल खाँ का सहकारी कुछ लिखने में व्यस्त था। मलका को देखते ही वह उठ खड़ा हुआ। अभिवादन करते हुए बोला—"सरदार जलाल खाँ अन्दर हैं।"

"और भी कोई है ?"—दासी ने प्रश्न किया।

"जी हाँ, वजीर आज़म, हैदर खाँ साथ में हैं।"

मलका ने अपने आगमन की सूचना भेजवाना ठीक न समझा। वह जानती थी कि जलाल हैदर के साथ राजनीतिक वाद-विवाद में उलझा होगा। दूसरी बात यह भी थी कि जलाल की आन्तरिक चालों

का पता गुप्त रीति से लगाया जा सकता था। इसके पहले कि सहायक जलाल को सूचना देने के लिए जा पाता मलका ने संकेत द्वारा दासियों को रुकने की आज्ञा दी और बैठक के दूसरी ओर दरवाजे में प्रविष्ट हो गयीं।

एक सँकरे और खुले गलियारे से होकर वह जलाल खाँ के कमरे तक पहुँची। दरवाजे पर एक पारदर्शी रेशम का परदा पड़ा था। कमरे की दाईं दीवार की खिड़की के समीप जलाल खड़ा था। मलका दबे पाँव कमरे के अन्दर गयी और उसने लकड़ी के तख्तों पर नक्काशी की हुई उस कृत्रिम दीवार की आड़ ली जो एक प्रकार से कमरे को दो भागों में विभाजित कर रही थी।

"......आपका कहना ठीक है। मुगलों की चहल-पहल अकारण नहीं हो सकती"—हैदर के शब्द मलका को सुनाई पड़े।

जलाल और हैदर खिड़की की ओर मुँह किये बाहर कुछ देख रहे थे। मलका की ओर उनकी पीठ थी। मलका ने पास की खिड़की की सुराख से बाहर की ओर देखा। हैदर का कहना सत्य था। बाहर मैदान में मुगल सैनिक वेग से इधर-उधर आ-जा रहे थे। दो-तीन कनातें भी उखड़ी दिखायी पड़ीं। मलका वास्तविक परिस्थिति ज्ञात न कर सकीं। उस समय उस ओर ध्यान देना उसने आवश्यक न समझा। दूसरी ओर दृष्टि घुमाई।

यह कमरा जलाल खाँ का निजी कक्ष था। इसी कमरे के ऊपर वह कमरा था जहाँ कुछ घण्टों पूर्व उसने मलका और अहमद से वार्त्तालाप किया था। इस कमरे में कुल तीन खिड़कियाँ थीं जिनमें केवल एक खुली थी। खिड़की के पास ही किले की फसील थी जिस पर सैनिक तैनात थे। खिड़की में तीन पल्ले थे जिसमें एक पत्थर और शेष लोहे के बने थे। कक्ष की सजावट अत्यन्त साधारण थी।

कमरे का वातावरण शान्त था। मलका ने पीछे मुड़कर देखा।

पत्थर की एक मेज पर भोजन की खाली तश्तरियाँ और फलों के टुकड़े बिखरे थे। ऐसा प्रतीत होता था कि कुछ समय पहले ही जलाल ने भोजन किया है।

थोड़ी देर खिड़की के समीप रुकने के पश्चात् दोनों पलट पड़े। "हवा ठण्डी आ रही है"—कहते हुए हैदर ने खिड़की का एक पल्ला चिपका दिया।

"किले के अन्दर क्या हाल है ?" जलाल ने गम्भीरता से पूछा।

जलाल का यह प्रश्न सुनकर हैदर ने उसे इस प्रकार देखा मानो यह प्रश्न उससे कई बार पूछा जा चुका हो। उसने अपने सफेद बालों पर उँगलियाँ फेरीं और कुछ सोचने लगा। वास्तव में जलाल हैदर के इस उत्तर के अतिरिक्त और कुछ सुनना चाहता था कि—"किले के अन्दर रसद समाप्त होने वाली है और चारो ओर बेचैनी व्याप्त है।"

सहसा मलका चौंक उठी। जलाल पूछ रहा था—"मेहर का क्या हाल है खाँ ?"

"मेहर !" विस्मित हो हैदर ने जलाल की ओर देखा। आज पहली बार उसने जलाल के मुँह से मेहर का नाम सुना था। यद्यपि उसे मेहर के साथ जलाल की होने वाली शादी के विषय में फैले अफवाह का ज्ञान था, पर उस पर विश्वास न था। हैदर जानता था कि शेर खाँ की अनुपस्थिति में जलाल जीवन की इन समस्याओं में नहीं उलझ सकता। मेहर के विषय में जलाल का प्रश्न सुनते ही उसने उत्सुकता से पूछा—"क्या यह खबर ठीक है कि आपका उसके साथ निकाह होने वाला है ?"

"यह अफवाह है।"

अफवाह ! लाद विस्मित हो उठी। विवाह के झूठे समाचार फैलाने का रहस्य उसके और अहमद के बीच था। जलाल का शिकार करने के लिए इस अफवाह को आड़ बनाया गया था। अपनी चातुरी

का जाल इस प्रकार छिन्न-भिन्न होते देख जो झटका लगा उससे लाद तिलमिला उठी। अपने ही किले में इस साधारण नवयुवक द्वारा, जिसे वह सदैव एक लापरवाह और मूढ़ व्यक्ति समझा करती थी, पराजित होने की कल्पना से वह डावाँडोल हो उठी। किन्तु अवसर का ध्यान कर वह सँभल गयी। चुप-चाप सुनती रही। हैदर कह रहा था—"मेहर की शादी होगी। जलाल से नहीं जमाल से......"

"जमाल खाँ ?"

"जी हाँ, बिहार का सूबेदार !"

"यह क्या कह रहे हो मियाँ ?"

"ठीक कह रहा हूँ मालिक। यही होगा...लेकिन..."

"क्या ?"

"यदि आपको कत्ल..."

"तोबा ! मियाँ हैदर, मैं यह क्या सुन रहा हूँ ?"

हैदर ने धीरे से कुछ कहा। स्वर अति मन्द होने के कारण अत्यधिक सावधान रहने पर भी लाद उसे सुन न सकी।

हैदर की बातें सुनकर जलाल के मुखमण्डल पर गम्भीरता छा गयी। उसकी मुट्ठियाँ कसने लगीं और वह स्वतः फुसफुसा उठा—"मीर अहमद।"

"उसकी बेटी भी"—हैदर बोला।

"ठीक है—" जलाल दृढ़तापूर्वक बोला—"मैं अभी जाकर अम्मी हुजूर से मिलता हूँ। उनके अलावा इस समय कौन मेरा सहायक है ?"

जलाल की यह बात सुनकर लाद का रहा-सहा मानसिक सन्तुलन भी डगमगा उठा। उसे अपने कानों पर विश्वास न हो रहा था। क्या जलाल उसको अब भी अपना सबसे बड़ा सहायक मानता है ? उफ् ! कितना बड़ा विश्वासघात !

हैदर कुछ कह रहा था। लाद का ध्यान बँटा।

"माफी चाहता हूँ शाहजादे साहब—" हैदर ने जलाल की ओर सन्देहपूर्ण दृष्टि डालते हुए कहा—"कहीं मलकाए आलम का भी तो इसमें हाथ...।"

"क्या बकते हो हैदर खाँ—" जलाल चीख उठा।

लाद की दशा उस अपराधी की तरह हो गयी जो अदालत में अंतिम बार दण्ड देने वाले काजी की ओर दृष्टि डाल रहा हो। उसके पैर काँपने लगे। मुख पीला पड़ने लगा। पलकें बोझिल हो गयीं। हृदय की धड़कन इतनी तेज हो गयी कि उसे स्पष्ट सुनायी पड़ने लगा।

वास्तव में उसके षड्यन्त्रों का रहस्योद्घाटन प्रारम्भ हो चुका था। उसका अन्त क्या होगा? लाद उत्सुक हो उठी। उसने परदे के सुराख में आग लगा दी। देखा, जलाल एकटक हैदर की ओर देख रहा था। हैदर सिर नीचा किये विचारों की उलझनें सुलझा रहा था। जलाल को उद्विग्न देखा तो हैदर नम्रता से बोला—"शाहजादे साहयब, मैं अपनी बात वापस लेता हूँ।"

"तुम नहीं जानते हैदर"—जलाल ने समझाया—"बेगम मेरी असली माँ नहीं, फिर भी मुझे तहे दिल से प्यार करती है।"

आह! लाद का हृदय मूक भाषा में हाहाकार करता तड़प उठा। सिर चकराने लगा। सोचा, दौड़ पड़ें जलाल के पास। पर भावावेश में ऐसा करना उचित भी न था। पैर काँपते जा रहे थे। फिर भी उसने बल लगाकर अपने को संयत रखा। कुछ देर उसी भाँति चुप-चाप खड़ी रही। फिर दबे पाँव दरवाजे की ओर बढ़ी। जलाल कहता जा रहा था—"बेटे की बात माँ न सुनेगी तो कौन सुनेगा। मैं थोड़ी देर बाद उनसे मिलने जाऊँगा।"

क्षण-भर में लाद गलियारे में पहुँच गयी। उसने अपनी चादर सँभाली। दासियाँ उसे देखते ही उठ खड़ी हुईं। वह शीघ्रता से

आगे बढ़ती जा रही थी। उसकी अभूतपूर्व तेज चाल देखकर दासियाँ विस्मित हो उठीं।

थोड़ी देर में उसने जनानखाने में प्रवेश किया। द्वार पर खड़ी दासी ने झुककर सलाम किया।

सहसा लाद रुक गयी। उसने मन्द स्वर में दासी को आज्ञा दी—"मैं किसी से भी कल शाम तक नहीं मिलूँगी। मैं तनहाई चाहती हूँ।"

"जो हुक्म हुजूर—" दासी नम्रता से बोली और वह आगे बढ़ गयी।

———

६

यह किला है या सजीव नरक ?

अहमद जब तीसरी बार बेगम महल के प्रमुख द्वार से वापस लौटा तो उसकी आँखें रोष से जलने लगी थीं। भौंहें चढ़ी थीं और पलकों से चिनगारियाँ छूट रही थीं। चेहरा तमतमा उठा था। मन के आकाश में भादों के घुमड़ते मेघों की तरह विचार घूम रहे थे। वह अत्यन्त गम्भीर और कठोर हो गया था।

चाँद की डोली से रजनी ने पैर लटका दिये थे। रह-रहकर किसी पक्षी का स्वर वातावरण में गूँज उठता। शीतलता के भार से लदा पवन मंथर गति से बह रहा था।

अहमद ने शीघ्रता से अपने बैठक में प्रवेश किया। पगड़ी उतारी, मसनद पर लेट गया। उनके कानों में बेगम महल के प्रमुख सन्तरी के शब्द गूँज उठे—"मलका-ए-आलम का हुक्म है कि किसी को अन्दर जाने की इजाजत नहीं है।"

"जाकर कह दो, मीर अहमद आये हैं।"

"मलका-ए-आलम तनहाई में हैं। माफी चाहता हूँ।"

तनहाई ! तनहाई ! अहमद चीख उठा। बेचैनी से चहल-कदमी करने लगा। उसका मस्तिष्क तेजी से दौड़ रहा था। सवेरा होना चाहता है, मलका का पता नहीं है। हुमायूँ ! शेर खाँ ! जलाल ! चुनार दुर्ग ! कोष, सब उसके नेत्रों के समक्ष तैरने लगे।

सहसा वह झुँझला उठा। किसी भी निर्णय पर न पहुँच पा रहा था। बेगम की ओर से उसे पूर्ण निराशा हो गयी थी। जलाल ? वह तो शराब के नशे में बदहोश पड़ा होगा।

अहमद की दृष्टि अपनी तलवार पर पड़ी। "मैं अकेले सब कुछ करूँगा।"—वह स्वतः बड़बड़ा उठा। एक बार अपनी भयानक योजना का स्मरण कर वह सिहर उठा। हत्या !! उसके रोम-रोम में कम्पन होने लगा मानो अन्तर्जगत में कोई भीषण भूचाल आ गया हो। उसके चेहरे की लालिमा समाप्त होती जा रही थी। जीवन के वृक्ष में चरित्र का पतझड़ कब से प्रारम्भ हो गया था।

अहमद ने पगड़ी सिर पर रखी और तलवार बगल में लटकायी। उसके पैर स्वतः बढ़ने लगे। धीरे-से दरवाजा खोलकर बाहर निकला। ध्यानपूर्वक चारों ओर दृष्टि दौड़ायी। कोई भी न दीख पड़ा। दूर फसीलों पर पहरेदार नियुक्त थे।

रास्ता साफ देखकर अहमद ने शीघ्रता से पैर बढ़ाये। सहसा किसी का पदचाप सुनकर वह ठिठक गया। पगड़ी के सिरे को मुँह पर डाल दिया और सिर झुकाकर आगे बढ़ने लगा।

गलियारे की विपरीत दिशा से कोई व्यक्ति अहमद की ओर शीघ्रता से बढ़ता आ रहा था। अहमद ने आगन्तुक को कोई पहरेदार अथवा सैनिक समझा और दाँयीं ओर किले के दूसरे भाग में जाने के लिए मुड़ पड़ा।

वह आकृति बिलकुल पास आ गयी। अहमद ने अपनी चाल और तेज कर दी। सहसा एक परिचित स्वर उसके कानों में गूँज उठा। "भाई जान !" अहमद चौंक पड़ा। देखा मीर दाद अली उसकी ओर बढ़ता आ रहा था। वह रुक गया। उसके होठों से बरबस शब्द फूट उठे—"भाई दाद !"

"आदाब अर्ज है। इतनी रात गये कहाँ ?"—हाथ उठाते हुए दाद ने पूछा।

"बात यह है दाद भाई कि मैं..." अहमद लड़खड़ाया।

"कहिये, कहिये।"

"मैं...मैं जा रहा हूँ कि...मैं..."

"मैं जानता हूँ कि आप कहाँ जा रहे हैं।"—दाद तपाक् से बोला। उसने हाथ फैलाते हुए लापरवाही से कहा—"पर इतनी जल्दी क्या है ?"

अहमद किंकर्त्तव्यविमूढ़-सा दाद की ओर देखता रह गया।

"आप सोचते होंगे कि मुझे कैसे मालूम ?"—दाद बोला—"यह शाही तलवार और जलाल खाँ के कमरे की ओर जाना..."

"दाद, तुम यह क्या कह रहे हो ?"—अहमद आसमान से गिरा। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि मीर दाद को (उसके) षड्यन्त्रों का ज्ञान किस प्रकार हो गया। अवश्य ही कोई उसकी गतिविधि पर दृष्टि गड़ाये हुए है। सहसा उसे मलका का ध्यान आया। वह किसी से नहीं मिलना चाहती! कहीं यह रहस्यमय मौन ही तो नक्शे में रङ्ग नहीं भर रहा है ? अहमद का मन अनेक सन्देहों से भर गया। क्या उसका समस्त षड्यन्त्र खुलता जा रहा है ? इसके पहले कि किले में यह समाचार फैले, उसे अपना कार्य पूरा कर लेना था।

उसने गम्भीरता से दाद की ओर देखते हुए पूछा—"दाद, क्या सब कुछ तुम्हें पता लग गया है ?"

दाद ने सिर हिलाते हुए हामी भरी। ओठों पर स्वाभाविक मुस्कान लाते हुए उसने लापरवाही से उत्तर दिया—"मेरी नजरों से आज तक कौन-सी चीज छूटी है।"

"तुम्हारे अलावा यह बात किसे मालूम हो चुकी है ?"—अहमद ने बेचैनी से पूछा।

कुछ क्षणों तक दाद सोचता रहा। नकारात्मक ढङ्ग से सिर हिलाते हुए बोला—"जहाँ तक मेरा ख्याल है, इस बात को अभी तक कोई भी नहीं जानता। सभी तो सो रहे हैं।"

"ठीक है"—लम्बी साँस छोड़ते हुए अहमद ने कहा। अब उसके लिए यह आवश्यक हो गया कि इस षड्यन्त्र में वह दाद को भी शामिल कर ले। उसने हाथ मलते हुए पूछा—"तो क्या तुम मेरे साथ कदम बढ़ाने के लिए तैयार हो?"

"क्यों नहीं। इसीलिए तो मैं आपके पास जा रहा था।"

"मुझे तुमसे यही उम्मीद थी।"—अहमद प्रसन्नता से बोला।

दाद का सहयोग पाकर अहमद की बाछें खिल गयीं। साथ ही एक समस्या और उसके मस्तिक में चक्कर काटने लगी। दाद भी उसके साथ बराबर का हिस्सेदार रहेगा? एक म्यान में दो तलवारें कैसे रह सकती हैं। खैर, यह तो बाद की चीज है, समझ लिया जायगा—अहमद ने सोचा—जिसके हाथ में पतवार है उससे बचकर नाव कहाँ जा सकती है!

रात्रि का अन्तिम पहर साँसें गिन रहा था। सहसा अहमद के कानों में दूर से आता हुआ मुर्गे की बाँग का मन्द स्वर गूँज उठा और उसने मुँह से पगड़ी का पल्ला हटाते हुए पूछा—"क्या रात बीत गयी?"

"हाँ, सबेरा होने वाला है"—दाद इधर-उधर दृष्टि घुमाते हुए बोला—"आप देर क्यों कर रहे हैं चलिये"—आग्रह किया उसने।

"न जाने क्यों मेरे हाथ काँप रहे हैं।"

"सरदी काफी है—हमें अब देर नहीं करनी चाहिए।"

"मैं बूढ़ा हो गया हूँ दाद...तुम...तुम यह काम कर लो। मैं मलका से निबट लेता हूँ।"

"आप भी कैसी बात करते हैं भाईजान ! बुढ़ापा अभी आपसे कोसों दूर है।"

अहमद चकराया। चेहरे पर पसीने की बूँदें छलक आईं। कोई युक्ति काम न कर रही थी। उसने दृढ़ निश्चय कर लिया था कि जलाल की गर्दन दाद की ही तलवार से उतरे ताकि भविष्य में वह किसी प्रकार की गड़बड़ी न कर सके।

पाप दाद खाँ की महत्वाकांक्षा को सदैव दाबे रहेगी। वह कभी किसी पर अपना यह रहस्य प्रकट न होने देगा। साथ ही वह मेरी मुट्ठी में है क्योंकि मैं उसका यह रहस्य जानता रहूँगा। इसलिये मेरे विरुद्ध भी यह कदापि नहीं जा सकता।

सुबह होने तक उसे अपनी योजना पूरी कर लेनी थी। उसने दृढ़तापूर्वक कहा—"तुम जलाल के पास चले जाओ। वह अभी तक उसी प्रकार बेसुध पड़ा होगा।"

"लेकिन उसे...।"

"भाई दाद, अब बातें करने का समय नहीं"—अहमद बीच में बोल उठा। अचानक उसकी परिवर्त्तित मुद्रा देख दाद ने चुप रहना ही उचित समझा।

"तुम बगल की सीढ़ी से ऊपर चले जाओ। गलियारे के अन्त में जलाल का कमरा है। वहाँ वह आराम से सो रहा होगा। खिड़कियाँ दरवाजे, सभी खुले होंगे। उसकी छाती में पूरी तलवार घुसेड़ देना, दाद पूरी तलवार ! कहीं वह जी न जाये..."

"भाईजान..."

"कायर न बनो दाद। यह काम तुम्हें ही करना होगा। मलका को मैं किनारे लगा दूँगा। सबेरे की नई लाली ने अगर किले का नकशा न बदला तो सारी मेहनत बेकार हो जायगी...और हमारा दुर्भाग्य...।"

"लेकिन भाईजान..."

"यह काम का समय है दाद। उठा लो तलवार।...और हाँ, उसकी लाश नदी में जरूर फेंक देना।"

अहमद ने दाद की ओर घूर कर देखा जो पूर्ववत् अचल था—"जाओ दाद, खुदा हाफिज।"

किन्तु दाद फिर भी टस-से-मस न हुआ। अहमद के मुख-मण्डल पर मानो ज्वालोदधि की विषाक्त लहरों की उद्विग्नता नाच रही थी जिसे दाद चुपचाप एकटक देखता रहा। समझ में न आया कि वह क्या उत्तर दे? क्या करे? खून करेगा वह? नहीं-नहीं। धन के लिए... किले के लिए...एक निरपराध का गला काटना धोखा है, पाप है। कदाचित् इस अपराध का कोई प्रायश्चित नहीं। दोजख में भी जगह न मिलेगी। दाद को प्रतीत हुआ मानो अहमद के चेहरे पर सैकड़ों कीड़े बिलबिला रहे हों।

अहमद ने अपनी आज्ञा पूर्ण न होते देख दाद की ओर तीव्र दृष्टि डाली। उसका चेहरा लाल पड़ता गया। फिर उस पर सफेदी छा गयी। मुर्दे-सी आँखें दाद पर गड़ा दीं। अस्थिपंजर-सा डगमगाता हुआ वह आगे बढ़ा। दाद के कन्धों पर अपने पंजे जमाकर उसने तेजी से झकझोर दिया और भर्राए स्वर में बोला-"क्या तुमने इरादा बदल दिया है?"

"नहीं। मैं जाऊँगा, जरुर जाऊँगा"—दाद दृढ़तापूर्वक बोला। बायें हाथ से उसने अहमद का पञ्जा कन्धे से हटा दिया। ओठों पर जीभ फेरते हुए उसने गम्भीरता से कहा—"मैं अपने इरादे का पक्का हूँ। सरदार शेर खाँ मेरा इन्तजार कर रहे होंगे। उनके पास मेरा पहुँचना जरूरी है।..."

"दाद!..."

"आपने मुझे गलत समझा भाई जान। शायद आपको पता नहीं

कि हुमायूँ ने चुनार से डेरा कूच कर दिया है। सरदार शेर खाँ से उसकी सन्धि हो गयी है। यहाँ आने के पहले वह कुछ आवश्यक जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं। इसलिए अपना एक खास आदमी यहाँ भेजा है...”

“दाद !” अहमद मानो आसमान से गिरा। उसकी जबान लड़खड़ाने लगी। आँखों के सामने अँधेरा छाता जा रहा था। हाथ की अँगुलियाँ काठ की तरह कड़ी हो गयीं। तलवार का बोझ अधिक बढ़ता प्रतीत हुआ। कमर में दर्द-सा होने लगा।

दाद कहता जा रहा था—“...आपको भी साथ ले चलने का विचार किया था मैंने। किले में सभी सो रहे हैं। किले के फाटक पर खड़ा मैं मुगलों का जाना देख रहा था। अतः सरदार का सिपाही मुझको यह सूचना देकर चला गया। मै नहीं जानता था कि हमारे रास्ते इतने भिन्न हैं...”

“तुम मुझे बहका रहे हो दाद।”

“आप बहक रहे हैं भाई जान! बदल दीजिये अपना नापाक इरादा”—दाद ने समझाया—“सरदार शेर खाँ ने अफगानों की शान कायम रखी है। हमारी बहू-बेटियों की इज्जत उन्हीं की बदौलत पाक है। उसके ऐहसानों का बदला उसका जिगर चीर कर चुकाने का प्रयास वाकई कितना भयानक है। कालिख पुत जायगी हमारी कौम के मुँह पर। हम हमेशा के लिए बदनाम हो जायँगे। आज भले कोई न कहे, लेकिन तवारीख लिखने वाले यह जरूर लिखेंगे कि मीर अहमद और दाद ने अपने ही जाति-बंधु तथा सहायक सरदार शेर खाँ के पुत्र के रक्त से हाथ धोया। मित्र के रक्त से सने हमारे हाथ इस जिन्दगी में कौन कहे, कभी धुल नहीं सकते। चलिये उसके स्वागत के लिए जो...”

“जो हमें लूट रहा है।” अहमद गरज पड़ा—“मैं जाऊँ। तुम किस लिए हो ?”

"आप बुजुर्ग हैं। अनुभव की लाठी आपके हाथ है—दाद ने हाथ मलते हुए कहा। समय अधिक बीतता जा रहा था और उसे शीघ्रता से शेर खाँ के पास पहुँच जाना था, परन्तु अपने भाई को ठीक मार्ग पर ला देना उसके लिए अधिक महत्वपूर्ण कार्य था। यद्यपि उसे पूर्ण विश्वास हो चुका था कि अहमद अब कुछ न कर सकेगा क्योंकि उसके अनुभव के पैर लड़खड़ा गये हैं, आशाओं की नाव में छिद्र हो गया है, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि वह बुरी तरह झुँझला भी गया है। क्रोध सिर पर पाप बनकर नाच रहा था। उस समय कोई भी अमानवीय कृत्य कर देना अहमद के लिए कठिन नहीं था।

दाद ने सोचा शायद मेरे चले जाने से अहमद को शान्ति मिले। मैं ही तो उसकी झुँझलाहट का कारण हूँ। आग पानी ने मिलकर उसके हृदय-जगत में प्रलय मचा रखा है।

"भाईजान, अपने हाथ-पाँव काटना अक्लमन्दी नहीं है"—दाद ने गम्भीरतापूर्वक कहा और मंथर गति से आगे बढ़ गया। जलाल खाँ का खयाल मन में जाग उठा। वह अपने कमरे में सो रहा होगा। मुड़कर देखा अहमद के बगल चमचमाती तलवार लटक रही थी। सोचा थोड़ी देर और रुक जाऊँ पर कदम ठहर न सके।

"रुको दाद"—कड़कती आवाज आयी।

दाद रुक गया। घूम पड़ा। अहमद पीपल के पत्ते की तरह काँप रहा था।

दाद ने उसका रहस्य जान लिया है। वह सबसे कह देगा। अहमद तड़प उठा। क्या उसकी तकदीर में दो मौतें लिखी हैं! या खुदा! वह किसी को मुँह भी न दिखा सकेगा। उसकी आँखों में आँसू छलक आये मानो अपने स्वर्णिम भावनाओं के यज्ञ में अन्तिम आहुति देने के पश्चात् पुतलियाँ अवभृथ-स्नान कर रही हों। सहसा सफेदी लालिमा में समा गयी।

उसके हाथों में तलवार है—उसने सोचा—दाद की इतनी हिम्मत कि उसके सामने कंठ-ध्वनि सुरक्षित रख चला जाय और भविष्य में चुनार दुर्ग बेकसी का मजार बने !

"दाद, तुमने सब कुछ जान लिया—" तलवार की मूठ पर हाथ रखते हुए वह बड़बड़ाया ।

अब तक दाद सुन रहा था। अब देखने लगा चुपचाप। मीर अहमद ने तलवार फैला दी। दाद का हृदय काँप उठा। नम्रतापूर्वक बोला—"शान्त रहिए भाईजान। अपनी इज्जत-आबरू हमारे हाथ है। क्या आपको अपने सगे भाई पर भरोसा नहीं ?"

"था, पर अब न रहा। मेरा हाथ नंगा करके तुमने मुझे जलील किया है—" अहमद गरज उठा—"तुम्हारी जबान को हमेशा के लिए सही रास्ते पर लाये बिना मुझे चैन नहीं। मेरे मंजिल तक पहुँचने में तुम बाधक हो रहे हो।"

दाद के होश उड़ गये। भागने से निर्दोष जलाल मारा जाता है और रुकने से उसका अपना गला साफ होता है। इधर कूँआ उधर खाईं। वह क्या करे। दाद कुछ निश्चय न कर सका। क्षण-भर के लिए स्तब्ध खड़ा रह गया देखा—अहमद धीरे-धीरे पैर आगे बढ़ाता आ रहा था। तलवार की नोक दाद के वक्षस्थल की सीध में थी। अहमद अपना संकल्प दृढ़ कर चुका था।

दाद के नेत्रों के समक्ष अँधेरा छाने लगा। उसके शरीर के समस्त रोएँ खड़े हो गये। उसकी समझ में न आ रहा था कि वह क्या करे। तब से हम कर वह चीख उठा—"ठहरिए भाईजान ! अपना हाथ काटने से पहले सोच तो लीजिए।"

"सोच चुका हूँ दाद। घाव भरे हाथों से तो बेहाथ का ही अच्छा।"

"ठीक है। अगर एक भाई के खून से दूसरे भाई की तलवार पर पानी चढ़ सके तो क्या बुरा है ?"—ओठों पर कृत्रिम मुस्कान लाते

हुए दाद ने कहा। कितनी वेदना थी उसमें। मरना तो है ही एक दिन। शायद ताज खाँ के भाइयों के नसीब में ऐसी ही मौत लिखी है।

दाद समझने में असमर्थ था कि अहमद की तलवार उसके रक्त स्नान को क्यों व्याकुल हो रही है। हर समय उसने उसका साथ दिया था। हर मुसीबत में वह उसके आगे रहा। क्या अहमद यह समझता है कि वह बाद में उसकी बदनामी करेगा? छिः! कितना छिछला है उसका हृदय। काश वह सोच पाता कि लाठी पंजो पर ही टिक कर पूरे शरीर को सम्हाल पाती है।

"मैं तैयार हूँ। मरने से पहले यदि मैं जान पाता कि इसमें आपका क्या फायदा है तो शायद वहाँ आराम की नींद सो पाता।"

"अब समय नहीं रहा दाद"—तलवार की नोंक उसके वक्षस्थल से टिकाकर अहमद बोला।

"मेरे बाद किले का बन्दोबस्त?"

"मैं खुद कर लूँगा।"

"सोच लीजिये। आपके कदम डगमगा रहे हैं।"

"सोच चुका हूँ।"

"आपके हाथ क्यों काँप रहे हैं?"

"चुप रहो। उनमें फौलादी ताकत है।"

"आपकी पलकें झँपी जा रही हैं। चेहरा स्याह पड़ गया है। तलवार फिसलती जा रही है। गिर पड़ेंगे आप।"

"दाद! चुप रहो। मैं बहकने वाला आदमी नहीं"—कहते हुए अहमद ने तलवार अपनी ओर झटके से खींचा। दाद ने आँखें मींच लीं।

एक ही वार में दाद का सीना चाक होने वाला था कि वातावरण

में एक चीख गूँज उठी। कटे वृक्ष की तरह अहमद पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसकी आँखें बन्द हो गयीं। वह अन्तिम साँसें गिनने लगा।

आश्चर्य से दाद के नेत्र खुल गये। देखा, सामने भूमि पर पड़ा उसका भाई तड़प रहा है। उसकी पीठ में एक कटार घुसी है और चारों ओर भूमि पर रक्त बिखरा है। उसने विस्मयपूर्ण दृष्टि चारों ओर दौड़ायी, परन्तु कोई न दिखायी पड़ा। शीघ्रता से झुककर उसने अहमद की पीठ में घुसी कटार निकाल ली। एक हल्की-सी सिसकी के साथ अहमद का सिर एक ओर लुढ़क गया।

ऐसा प्रतीत होता था कि यह कटार किसी ने फेंक कर मारी है। कटार की मूँठ पर कुछ खुदा हुआ था। दाद गौर से उसकी लिखावट पढ़ने लगा—"यह तोहफा, मुहब्बत की हिफाजत के लिए—नूर-ए—हिन्द प्यारी बेगम लाद बेगम को—शेर खाँ।"

लाद बेगम की कटार! दाद के मस्तिष्क में एक साथ हजारों प्रश्न उमड़ पड़े। सभी घटनाओं की कड़ियाँ एक दूसरे से टूटने-जुड़ने लगीं।

सहसा किले के फाटक खुलने की चरचराहट का स्वर गूँज उठा। दाद की तन्द्रा टूटी। शेर खाँ किले में आ रहा था। दाद के हाथ में कटार और सामने भूमि पर पड़ी लाश! भय से काँप उठा वह।

उसने शीघ्रता से कटार कपड़े में छिपा लिया और अपने कमरे की ओर चला गया।

७

मेहर एक : प्रेमी तीन

प्रेम लाद के लिए बेसुध कर देने वाला वह दिव्य प्रवाह था जिसमें वह स्वयं को छोड़ देना और यौवन का मधुमय आनन्द लेना चाहती थी। उधर शेर खाँ प्रेम को महत्त्वाकांक्षाओं की राह का सबसे बड़ा व्यवधान, सबसे भयानक रोड़ा समझता था। इसलिए चुनार का किला अपने हाथ में कर लेने के बाद वह मलका से दूर-दूर रहने लगा। जिस समय लाद उसकी स्मृतियों में तल्लीन हो उसके युद्ध से लौटने और प्रेमाकुल हो अपने गले में उसके दोनों बाहुएँ डाल देने की कल्पना से आत्म-विभोर हो प्रतिपल उसकी पद-चापों की आहट में कान लगाये बैठी प्रतीक्षा करती, शेर खाँ किसी झाड़ी, पहाड़, वृक्ष या किसी अन्य खँडहर आदि में पड़ा दूसरे दिन के युद्ध की तैयारी की मन्त्रणा करता, अफगानों की शक्ति केन्द्रीभूत करने की चिन्ता में रात बिता देता।

हुमायूँ के लौट जाते ही शेर खाँ की कामनाएँ वेग से बढ़ने लगीं। जितनी शीघ्रता से वह अभियान कर समस्त उत्तर भारत पर छा जाना चाहता था, उतना ही वह लाद से दूर होता जा रहा था। लाद उसकी योजनाओं से ऊब चुकी थी।

मीर अहमद की अन्तिम क्रियाएँ समाप्त कर शेर खाँ पुनः राजनैतिक आकाश के तारों की गतिविधि देखने में उलझ गया। दुर्ग में अपने विरुद्ध किये गये षड्यन्त्रों पर उसने कोई ध्यान न दिया। जीवन

की धूप-छाँह से आँख-मिचौनी ही तो खेलता रहा था वह आज तक। अनुभव की कठोरता ने उसे अतिशय सहिष्णु और शान्त बना दिया था।

हुमायूँ चुनार छोड़कर आगरा लौट चुका था। शेर खाँ का मार्ग अब साफ था। उसके नेत्र गौड़ पर टिक गये। गौड़ एक समृद्ध प्रदेश था। उसपर अधिकार करके सुगमता से मुगलों को पराजित किया जा सकता है। पर यह कैसे होगा? चींटी का हाथी से मुकाबला!

शेर खाँ चिन्तित हो उठा—'कोई मेरे साथ कदम बढ़ाने को तैयार नहीं। अहमद मर चुका—'अलफिरारोमिनद्दुनिया' के सिद्धान्त को अपनाकर दाद मक्का की खानकाहों में घूम रहा है और इसहाक खजाने की लालच में जमीन-आसमान एक किये हैं। बेगम लाद? वह इतनी खिची-खिची क्यों है? क्या वह भी मेरा साथ न देगी? उसकी बातों में अब वह अपनापन नहीं रह गया। जबान की मिठास फीकी पड़ गयी है; प्रेममय छलकते नेत्र और यौवन का उभार न जाने किस चिन्ता में क्षीण हुए जा रहे हैं? है तो वह औरत ही। उसे तख्त, ताज के अलावा कुछ और चाहिये। पर मैं क्या करूँ? लाद को देखूँ या हिन्दुस्तान को? या अल्लाह! शेर खाँ ने सिर पकड़ लिया। चलूँ, लाद से भेंट करूँ। उसकी भी राय लेनी जरूरी है। आखिर है तो वह मेरी बीबी ही।'

शेर खाँ शीघ्रता से लाद के कमरे में पहुँचा। वह अभी शृङ्गार करके उठी थी। शेर खाँ एकटक उसका रूप निहारता रह गया। इधर जब से शेर खाँ बिहार से लौट आया था, लाद में मानो नया यौवन लौट आया था। वह नव-यौवना किशोरी-सी अपने को सजाती, पति को अपने सौन्दर्य-जाल में पकड़ने की चेष्टा करती, बातें करती तो उसमें लज्जा और चञ्चलता भर देती। मानो उसने नव-जीवन पाया हो। पति को देखकर सिर झुकाते हुए लाद ने आदाब किया।

"इंशाअल्लाह, आज तो तुम कयामत ढा रही हो।"

लाद लजा गयी। अपने रूप की प्रशंसा सुनकर उसका सीना फूल उठा। कुछ कह न सकी। सहसा वह चिन्तित हो उठी। वह रूप किस काम का जो शौहर का हृदय बाँध न सके। शेर खाँ बूढ़ा हो रहा है। बूढ़ा ही कहो। पैंतालीस-पचास वर्ष का पुरुष क्या युवा हो सकता है? उसपर हर समय लड़ाई की चिन्ता। उधर लाद तीस वर्ष की जवान सुन्दरी जिसका यौवन खिले फूल-सा बिखर रहा है।

"क्या सोच रही हो बेगम?"—शेर खाँ ने लाद की ठुड्डी अपने दाहिने हाथ की अँगुलियों से उठाते हुए पूछा।

"कुछ तो नहीं"—लाद की चेतना वापस लौटी। शीघ्रता से बोली—"आप खड़े क्यों हैं? तशरीफ रखिये।"

"ठीक है। हाँ, असली बात कहना तो मैं भूल ही गया। तुमने मेहर के बारे में कुछ सोचा? बेचारी अपने मरहूम वालिद की याद में रात-दिन रोती रहती है।"

"उसे बाहर भेज दिया जाय तो कैसा रहे? घूमने-फिरने से मन बहल जायगा। मेरे खयाल से जौनपुर..."

"जौनपुर?"—शेर खाँ ने सोचते हुए कहा—"है तो जगह माकूल। लेकिन उसके साथ जायगा कौन?"

"जलाल, जो उससे मुहब्बत..."

"क्या कहती हो बेगम। इश्क की लहरों में मैं उसे बहने नहीं देना चाहता। वही तो मेरा दाहिना हाथ है। मैं उसे आज बिहार के सूबेदार जमाल खाँ लोहानी के पास भेज रहा हूँ। पिछली बार जब मैं बिहार गया था तो वहाँ उससे बातें कर अपना रास्ता ठीक कर आया हूँ। अगर बिहार की ताकत हमारे साथ हो तो फिर क्या पूछना! गौड़ अपनी मुट्ठी में।"—कहते-कहते शेर खाँ की आँखें चमक उठीं।

सहसा उसके चेहरे पर चिन्ता की रेखाएँ खिंच गयीं। आखिरकार मेहर के साथ जौनपुर जायगा कौन? उसके चाचाओं के साथ उसे भेजना ठीक नहीं। न जाने कौन-सा जहर वे उसके कानों में घोल दें। औरत का मन गर्मी-सर्दी से शीघ्र प्रभावित होने वाले रेगिस्तान की तरह होता है जिसकी स्थिरता पर कदापि विश्वास नहीं किया जा सकता। मेहर लाद को अत्यन्त प्रिय है। वह उसके साथ दिन-रात रहती है। ऐसी दशा में मेहर का जीवन भी संयमित होना चाहिये। मेहर का अधिक दिनों तक लाद से दूर रहना भी ठीक नहीं। शून्य हृदय की ओर भावनाओं का चक्रवात उमड़ पड़ता है, कल्पनाओं की क्षणिक रश्मियाँ नेत्रों की शक्ति चुरा लेती हैं। तब मनुष्य मर्यादा की सीमा लाँघकर सदा के लिए भविष्य के दुःखमय कीचड़ में फँस जाता है। लाद भी मेहर के साथ जौनपुर जाय तो क्या हर्ज है? परन्तु चुनार से हटना लाद के लिए ठीक नहीं। इसहाक और दाद के भरोसे इस विशाल दुर्ग का प्रबन्ध सौंप देना मूर्खता होगी। सहसा आदिल का ख्याल आते ही शेर खाँ का चेहरा चमक उठा। वह यह काम बखूबी कर सकता है। वह जौनपुर जाकर मेहर की सुरक्षा तो रखेगा ही, साथ ही वहाँ के नवाब से प्राचीन सम्बन्ध को दृढ़ भी करेगा। आदिल विवाहित है। उसमें मेहर के प्रति आकर्षण की सम्भावना नहीं हो सकती। इस विषय पर भली-भाँति विचार करके शेर खाँ ने लाद की ओर देखते हुए गम्भीर शब्दों में कहा—"मेरी निगाह आदिल खाँ पर है। वह जौनपुर जा सकता है।"

"यह तो दोनों के लिए बुरा होगा। बेचारी मेहर उदास रहेगी और जलाल बेचैन"—हँसती चितवन से देखकर लाद बोली। कुछ और कहना चाहते हुए भी वह आगे कुछ न बोली। लाद जानती थी कि मेहर जलाल दोनों एक दूसरे को प्यार करते हैं, पर उसमें धुँधलापन है। उन्हें आसानी से मोड़ा जा सकता है। मेहर के भविष्य की

और लाद का मस्तिष्क घूम उठा। शेर खाँ का उत्तराधिकारी आदिल है। यदि उसके हृदय में मेहर को स्थान मिल गया तो उसका भविष्य सुखमय हो जायगा। जलाल का क्या भरोसा? उसका एक पैर आग में रहता है तो दूसरा तूफान में! मेहर का भविष्य इस प्रकार अनिश्चित छोड़ देना ठीक नहीं। उसका आदिल के नजदीक आना आवश्यक है। लाद ने एक बार सोचा कि शेर खाँ की बातों का समर्थन कर दे, पर उसने चुप रहना ही ठीक समझा। उसे विचार-मग्न देखकर शेर खाँ ने उसी स्वर में कहा—"जलाल को अपने साथ रखना मैं जरूरी समझता हूँ। वह अभी नादान है। चिकने घड़े पर पानी की तरह फिसल सकता है। उसे सँभालना अपना काम है।" फिर कनखी से देखते हुए शेर खाँ ने कहा—"आजकल तुम माँ-बेटों की खूब पटती है। जलाल भी तुम्हारी बड़ी तारीफ कर रहा था। तभी तो..."

"मैं तो सभी को प्यार करती हूँ।"

"मुझे भी?"—कहते हुए शेर खाँ ने लाद को अपनी बलिष्ठ भुजाओं में समेट लिया—"अब वह दिन दूर नहीं बेगम, जब तुम समूचे हिन्दुस्तान की मलका होगी।"

मलका के नेत्रों में प्रेमाश्रु भर आये। कल्पना का गौरवमय चित्र नेत्रों के समक्ष घूम उठा। धीरे से बोली—"मैं किस काबिल हूँ? आपके कदमों में जिन्दगी गुजार दूँ, यही मेरा सबसे बड़ा अरमान है।"

शेर खाँ ने प्रेमावेश में मलका का मुख चूम लिया। "अच्छा मैं अब जा रहा हूँ"—कहते हुए वह उठ खड़ा हुआ—"जलाल खाँ को दो-चार बातें बतलानी हैं ताकि वह जमाल से बात करने में चूक न जाय"—फिर रुककर बोला—"आदिल और मेहर को आज ही जौनपुर भेज दिया जाय। तुम उनका बन्दोबस्त कर दोगी?"

"जो हुक्म।"

"अच्छा तो मैं चलूँ। यह काम तुम्हारे जिम्मे रहा"—कहते हुए शेर खाँ ने मलका का हाथ चूम लिया और शीघ्रता से कदम बढ़ाता वह जलाल खाँ के कमरे की ओर चल पड़ा। बेटे को सारी योजना समझा कर उसने उसे बिदा किया। लगभग एक घड़ी पश्चात् जलाल खाँ किले के बाहर था। जलाल के चले जाने के बाद मेहर और आदिल को भी जौनपुर भेजने की व्यवस्था हो गयी। कुछ ही देर में दोनों दास-दासियों के साथ जौनपुर रवाना हो गये। उन्हें भेजकर शेर खाँ कुछ शान्ति का अनुभव कर पाया।

सर्पिणी की भाँति बलखाती ऊबड़-खाबड़, धूल-धूसरित सड़क पर एक छोटा-सा काफिला तेजी से बढ़ता जा रहा था। संन्ध्या हो चुकी थी। आकाश में उड़ते हुए पक्षी अपने घोंसलों की ओर भागे जा रहे थे। धीरे-धीरे सड़क की ढाल चढ़ती गयी। पर्वतीय प्रान्त की कठोर भूमि पर घोड़ों की टापों का स्वर गूँज उठा। चारो ओर मुखरित वातावरण था। पवन अपनी सहज चाल में कामिनियों के केश की भाँति लहरा रहा था। पहाड़ी के सिरे से दोनों ओर विस्तृत मैदान का दृश्य अत्यन्त लुभावना प्रतीत होता था। जहाँ-तहाँ ग्रामीणों के झोंपड़े, जिनके आस-पास चरती गाय-बकरियाँ, क्रीड़ा करते हुए बच्चे, सिर पर जल-कलश ले जाती रमणियाँ, प्रकृति वधू के सौन्दर्य प्रसाधन में अपना योगदान दे रहे थे। पश्चिम दिशा में आधा सूर्य पातालपुरी में प्रवेश कर चुका था और प्राची अर्धवृत्ताकार निशिकर के सरस विकास से सुखरित हो रही थी। प्रतीत होता था—सुमेरु पर्वत पर विचरते हुए ऐरावत के गले में घंटे लटक रहे हों।

घुड़सवारों का दल तेजी से बढ़ता जा रहा था। सबसे पीछे एक घोड़ा-गाड़ी थी जिसमें कुछ सामान लदा हुआ था।

थोड़ी देर में सभी मैदान में आ गये। और दाहिनी ओर मुड़ते हुए आगे बढ़े। एक सवार ने सिर घुमाकर कहा—"अरे भाई, तेजी से बढ़ो। अभी तीन कोस रास्ता बाकी है और रात होने को आ गयी।"

सभी ने चाल तेज कर दी। जो सवार सबसे आगे था वह न जाने किन विचारों में खोया हवा की तरह उड़ता जा रहा था। एकाएक उसने सिर घुमाकर देखा-उसका साथी बगल में आ गया था।

"किस सोच में हो मियाँ?"—उसने पूछा।

"कुछ तो नहीं"—संक्षिप्त उत्तर मिला।

"देखो बरखुरदार, तुम यह न सोचो कि मैं कुछ समझता ही नहीं। मैंने तुमको गोद में खिलाया है। आज बूढ़ा हो गया हूँ तो क्या? मेरा नाम हैदर है। एक आँख से अन्दर की चीज देखता हूँ और एक आँख से बाहर की। मेहर की याद सता रही है? क्यों?"

"मेहर? उससे मेरा क्या रिश्ता?"

"अब बहको मत मियाँ जलाल। मेरे बाल धूप में नहीं पके हैं।"

जलाल कुछ न बोला। उसके चेहरे पर लज्जा की रेखाएँ उभर आयीं। स्मृतियों के जाल में मन एक बार पुनः उलझ गया। नेत्रों के समक्ष मेहर का रूप थिरक उठा। रश्मियों में अवगुण्ठित वह परी अब चुनार से दूर होगी, जौनपुर में। वह मेरे रोम-रोम में समा चुकी है। खेल-खेल में कितनी बड़ी भूल हो गयी। मैं कदाचित् जीवन भर इसी प्रकार भटकता रहूँगा। काश! मैं उससे न मिलता। लेकिन अब करूँ क्या? पिता की आज्ञा भी नहीं टाली जा सकती। एक ओर प्रेम है तो दूसरी ओर कर्त्तव्य। प्रेम की वेदी पर कर्त्तव्य का बलिदान चरित्र-हीनता का सूचक है।

मेहर को जलाल ने कभी उपभोग्य और विलास की सामग्री न समझा। आदिल उसे यही समझता। वह उसके संकोची स्वभाव,

लज्जाशीलता तथा नारी-सुलभ मौन को व्यर्थ और फूहड़पन समझता। वह उसे गँवार, देहाती और फूहड़ युवती मानता जो शिष्ट जीवन के विनोदों से सर्वथा अनभिज्ञ थी। जब कभी वह उससे एकान्त में अपनी आन्तरिक अभिलाषा व्यक्त करता तो उसे ज्ञात होता मानों वह उसे भयभीत नेत्रों से उसी प्रकार देख रही हो और जैसे क्षुधित सिंह को भयाक्रान्त हिरणी देखे। उसे शराब पिये देखकर मेहर घृणा से नाक सिकोड़ लेती, भौंहें चढ़ा लेती या मुँह फेर लेती। आदिल इससे क्रुद्ध न होता, वह इसे उसकी मूर्खता मानकर हँसता हुआ चला जाता।

उधर जलाल उसे पूजा का दीप मानता जो जितना ही पवित्र है उतना ही स्वच्छ, सरल और सदुपयोगी ? वास्तव में आदिल की कामना में यौन-विलास और जलाल की अभिलाषा में प्रेम की तरंगें लहरतीं। जलाल की दृष्टि में मेहर की बुराइयाँ भी आकर्षण बन कर सामने आतीं। वह उसे देवी के रूप में देखता। सम्भवत: प्रणय-देवता प्रेमी की आँखों में भी कुछ परिवर्तन कर देता है, जिससे वह प्रणयिनी का हृदय अपने मनोनुकूल देखने लगता है।

जलाल किसी भी निर्णय पर न पहुँच पा रहा था। उसे रोमांच हो रहा था जैसे कामना-तरंगिणी में छोटी-छोटी लहरियाँ उठ रही हों। प्रकृति प्रलोभन से सजी थी; विश्व एक भ्रम बनकर जलाल के यौवन की उमंग में डूबता जा रहा था। सहसा हैदर ने खाँसते हुए कहा—"अब हम आ गये। एक कोस सफर और बाकी है।"

नगर की सीमा में प्रवेश करके सवारों ने अपनी चाल धीमी कर दी।

उस समय बिहार प्रान्त में लोहानी सत्ता की तूती बोल रही थी। वैभव कण-कण में बिखरा हुआ था। ऊँची अट्टालिकाएँ, रंग-बिरंगे घर नगर की शान में चार चाँद लगा रहे थे।

लोहानी वंश का तरुण सरदार जमाल खाँ अपने खास बैठक में चिन्तामग्न बैठा था। देश की राजनैतिक उथल-पुथल ने उसे बेचैन कर दिया था।

गोल चेहरा, छोटी मूँछे, घुँघराले केश और लम्बी नाक उसके विलासितापूर्ण जीवन की झलक दिखा रहे थे। उसके बड़े-बड़े नेत्र उन्माद से रक्तिम हो उठे थे। मदिरा की दूसरी प्याली होठों से लगाकर उसने कनखी से जलाल खाँ की ओर देखा जो किले की शान-शौकत और बैठक की भित्तियों पर किये नक्काशीदार काम, दीवारों पर आकर्षक चित्र और रूप में छलकती दासियों को देख इस कल्पना के समाधान में व्यस्त था कि वह पृथ्वी पर है या जन्नत में!

हाथी दाँत की एक तिपाई पर खाली प्याला रखते हुए उसने पुनः जलाल पर उड़ती नजर डाली जो एक कोने में दुबका बैठा था और विस्मित हो सोच रहा था कि क्या यह वही दरबार है जहाँ उसका पिता शेर खाँ नौकर था। जमाल मुट्ठी में आयेगा? जलाल सन्देह से भर उठा।

जमाल ने पास में खड़ी लौंडी को प्याला भरने का संकेत करते हुए धीरे से पूछा—"कैसे तशरीफ लाये मियाँ जलाल?"

"मेहरबानी है हुजूर की"—नम्रतापूर्वक जलाल बोला—"अब्बाजान ने आपकी खिदमत में भेजा है।"

"सरदार खान आये तो थे। करीब दो माह हुए। आज-कल तो वह..."

"चुनार में हैं।"—जलाल ने बात पूरी की।

चुनार! जमाल का हृदय चीख उठा। उसी सुदृढ़ गढ़ की चहार-दीवारी में ही तो उसका अरमान सड़ रहा है। उसकी आँखों के सामने उस कोमल कलिका का चित्र उपस्थित हो गया जिसकी याद में वह वर्षों

से जलहीन-मीन-सदृश छटपटा रहा है। याद आया, उसका नाम मेहर था। कानों में उसका मधुर स्वर गूँज उठा। गम्भीर अर्द्ध निशीथ के पूर्ण उज्ज्वल नक्षत्र बाल्य-काल की स्मृति के सदृश मानस पटल पर चमकने लगे। कल्पना के अनन्त पट पर जैसे अतीत की घटनाएँ स्वर्णिम अक्षरों में लिखी उसे दिखायी पड़ने लगीं—

तब से सात साल बीते। उसके जीवन-तट पर यौवन-तरंगे चढ़ रही थीं। एक दिन पिता के आग्रह पर वह मीर अहमद के साथ चुनार गया था। वहाँ उसने अपने प्रणय के पौधे को मेहर के साथ मिलकर अनेक क्रीड़ा-कुतूहलों के जल से सींचा। वह बोझिल हृदय लेकर वापस लौट आया और आशाओं का सिन्दूर भरे रजनी के उस प्रहर की प्रतीक्षा करने लगा जब मेहर उसकी हो जायगी।

लेकिन अब क्या होगा? अहमद मर गया। शेर खाँ ने उसकी आशाओं पर पानी फेर दिया। कुछ ही दिन पहले उसने सुना था कि मेहर की शादी शेर खाँ के बेटे जलाल से होने वाली है।

लोहानी सरदार का मन खिन्न हो उठा। उसके अरमानों की हत्या करने वाला युवक उसके सामने बैठा है। क्या सचमुच मेहर इसकी मुहब्बत में बँध चुकी है।

जमाल ने घृणा-पूर्ण दृष्टि जलाल पर डाली। फर्शी की नली मुंह से हटाते हुए पूछा—"तुम्हारी शादी कब हुई? मुझे तो खबर भी न दी तुम्हारे अब्बा ने।"

"मेरी शादी! किससे?"

"मेहर से।"

"वह तो हुजूर आपके लिए है। यही मरहूम मीर अहमद साहब की ख्वाहिश थी"—जलाल ने पिता द्वारा रटाये शब्दों को बड़े लहजे से प्रकट किया।

"झूठ, बिलकुल झूठ। इस अफवाह में कुछ न कुछ असलियत

जरूर है। ख्वाहिशों के वश में कुछ नहीं है। इन्सान सोचता कुछ है और होता है कुछ और ही"—फिर वह आगे झुकते हुए धीरे से बोला—"सच बताना, क्या मेहर की शादी अभी तक नहीं हुई?"

"यकीन रखें। मैं सच कह रहा हूँ।"

जमाल के नेत्रों में उन्माद का एक नशा छा गया। क्या अतीत की कल्पनाएँ सचमुच साकार हो जायगी? यदि सचमुच मेहर अभी तक कुँवारी है तो उसकी शादी मेरे ही साथ होगी। दुनिया की कोई ताकत उसे मुझसे नहीं छीन सकती। मेरे पास किस चीज की कमी है?

उसने जलाल की ओर एक प्याला अँगूरी बढ़ाते हुए लड़खड़ाते स्वर में पूछा—"अच्छा, यह तो बताओ कि तुम्हारे अब्बा क्यों चुप्पी साधे बैठे हैं? सब कुछ तो उन्हीं के हाथ में है।"

"बन्दगाने आली! आपका कहना निहायत वाजिब है, लेकिन—" गले के नीचे एक घूँट उतारकर जलाल आगे बोला—"आपके ऊपर आने वाली नई मुसीबत ने उन्हें परीशान कर रखा है। हमने आखिर आपका नमक खाया है। आपका साथ देना हमारा फर्ज है।"

जलाल की बातें सुनकर जमाल गद्‌गद् हो उठा। सहसा चिन्तित स्वर में उसने शीघ्रता से पूछा—"मेरे ऊपर कौन-सी आफत आने वाली है मियाँ?"

"बंगाल का बादशाह नुशरत शाह अपनी फौज के साथ इधर बढ़ रहा है।"

"अच्छा!" जमाल चौंक उठा। आगामी भय ने उसे झकझोर दिया। भयभीत स्वर में उसने पूछा—"सुना तो मैंने भी था। तो अब क्या इरादा है?"

"अगर आपकी मदद मिले तो..."

"मैं तैयार हूँ, लेकिन मेहर के बारे में—" कहते-कहते जमाल रुक गया। वह शेर खाँ को अच्छी तरह पहचानता था। कहीं ऐसा तो

नहीं है कि मेहर का लोभ दिखाकर वह बिहार के बूते पर बंगाल जीतना चाहता है? काम पूरा होने पर यदि उसने मुँह फेर लिया तो मैं कहीं का न रहूँगा। पहले मेहर से निकाह फिर युद्ध की बात-चीत! जमाल ने जलाल की ओर देखते हुए दृढ़ शब्दों में कहा—"अपने अब्बाजान से कहना कि जमाल सब कुछ करने के लिए तैयार है, बशर्त्ते मेहर के निकाह की रस्में पेश्तर अदा कर दी जाँय।"

"लेकिन इस समय...।"

"यह मेरा फैसला है—" जमाल बीच ही में बोल उठा। "मैं अपने भविष्य के बारे में खुद सोच सकता हूँ। अगर मेरी ख्वाहिश पूरी की गयी तो सरदार खान को यकीन दिलाना कि जमाल पीछे नहीं हटेगा।"

जलाल चिन्ता में उलझ गया। समझ में न आया कि क्या करे? कहीं मेहर हाथ से निकल तो न जायगी, यह सोचते ही वह सिहर उठा। नाना प्रकार की कल्पनाएँ करता सिर झुकाता उठ खड़ा हुआ। उसने कमरे की दीवारों पर टँगे लोहानी वंश के वीर पुरुषों और कुछ युद्धों के चित्रों पर उड़ती दृष्टि डाली और शीघ्रता से बाहर चला गया।

जलाल के जाते ही जमाल ने बाँदी से कहा—"तुम जाओ। मेवाड़ के सरदार बीरसिंह को भेज देना।"

सर्पिणी की भाँति बल खाती साकी मालिक को सलाम करती बाहर चली गयी।

जमाल गद्दे पर एक ओर लुढ़क गया। उसके चेहरे पर चिन्ता की रेखाएँ नाच रही थीं। शेर खाँ मेरा लाभ दिखाकर अपना काम बनाना चाहता है। उसे बङ्गाल चाहिये और मुझे मेहर। मुझे उसकी मदद करनी ही होगी। सहसा जमाल चौंक उठा। यदि बङ्गाल जीतने के बाद शेर खाँ ने धोखा दिया तो? यदि ऐसा हुआ तो मैं

नुशरत शाह से मिल जाऊँगा। फिर तो शेर खाँ को झुकना ही पड़ेगा। मैं उसे जड़ से बरबाद कर दूँगा।

भविष्य की योजनाओं को सुदृढ़ करके जमाल ने दरवाजे की ओर देखा। बीरसिंह आ रहा था। जमाल उठकर बैठ गया।

बीरसिंह ने जमाल को सलाम किया और वह उसके संकेत पर बैठ गया।

बीरसिंह की अवस्था चालीस वर्ष के लगभग थी। उसके लम्बे चेहरे पर ऊँचा साफा विचित्र लग रहा था। उसकी आँखें छोटी और बिल्ली की तरह तेज थीं। उसने हाथ मलते हुए कहा—"सरकार, आज कुछ चिन्तित दिखायी पड़ते हैं?"

"हाँ, एक नई परेशानी आ टपकी है"—कहते-कहते जमाल उठकर बैठ गया। "कल तुमको मैंने मेहर—चुनार के मरहूम मीर अहमद की लड़की—के बारे में कुछ बताया था न? उसकी शादी अभी तक नहीं हुई है। कुछ रुककर जमाल ने पूछा—"तुमने क्या कहा था, ख्याल है?"

"मैं अपनी बात पर अटल हूँ हुजूर! यदि वह अविवाहित है तो उसे आपके कदमों में ले आना ही पड़ेगा"—कहते-कहते बीरसिंह ने अपनी मूँछों पर हाथ फेरा और गर्वयुक्त शब्दों में फुसफुसा उठा—"मेरा नाम बीरसिंह है।" आगे झुकते हुए वह धीरे से बोला—"इसके लिए मुझे जो भी करना पड़े, पीछे न हटूँगा।"

"माशाअल्लाह! क्या जोश है तुम्हारी रगों में! तुम जरूर मेरा काम पूरा करोगे।"

"हम आपके शुक्र-गुज़ार हैं सरकार! जी-जान लड़ा देंगे। हिन्दुस्तानी रियासतों का कोई दरबार ऐसा नहीं, जहाँ मेरा आना-जाना न हो। इधर-उधर घूमने में ही तो जिन्दगी ढल गयी। यह मेरे बायें हाथ का खेल है"—कहते-कहते राजपूत सरदार रुक गया। शेर खाँ का

स्मरण आते ही उसके रोंगटे खड़े हो गये। इस रोड़े को कैसे हटाया जायगा ? यदि शेर खाँ को किसी प्रकार समाप्त कर दिया जाय तो झगड़े की जड़ नष्ट हो जायगी। वह अपने प्रति लापरवाह भी रहता है। बीरसिंह ने इधर-उधर गौर से देखा फिर फुसफुसाहट के स्वर में बोला—"अगर शेर खाँ को ही...।" जमाल खाँ ने उसकी ओर गूढ़ दृष्टि से देखा, किन्तु कुछ कहा नहीं। उसके हृदय की थाह न पाने के कारण बीरसिंह ने पुनः पूछा—"क्या ख्याल है आपका ?"

जमाल के नेत्रों में अब चमक आ गयी। उसने उत्सुकता से पूछा—"पर यह होगा कैसे ?"

"शेर खाँ जब गौड़ के लिए कूच करे, उसी समय, आखिरी पड़ाव पर उसका काम तमाम किया जा सकता है ताकि आपको गौड़ के बादशाह से सुलह कर वक्त के मुताबिक अपनी स्थिति सुदृढ़ करने में कोई कठिनाई न हो।"

"ठीक कहा। मेरे ख्याल से इस काम के लिए तुम्हीं..."

"बन्दा तैयार है सरकार।"

"शाबाश !" जमाल खाँ की आँखें एक विचित्र मादकता से नाच उठीं। लड़खड़ाते स्वर में बोला—"अगर तुमने अपना काम कर दिखाया तो जमाल खाँ भी तुम्हें मालामाल कर देगा।

बीरसिंह सिर झुकाता हुआ उठ खड़ा हुआ। जमाल खाँ का मदिरा के प्रभाव से घूर्णित मन उसके शरीर को और भी शिथिल बना कर न जाने किस कल्पना लोक में उड़ा ले गया।

८

जौनपुर में मस्ती बिकती है

जमाल खाँ लोहानी की शर्तें सुनकर शेर खाँ की भौंहें तन गयीं, परन्तु अपने स्वार्थ का स्मरण करके उसने चुप रहना ही उचित समझा। अब उसके सामने यह प्रश्न उपस्थित हो गया कि मेहर का विवाह जमाल से किया जाय या नहीं? गौड़ पर अधिकार होते ही उसकी आशाओं का सिंहद्वार खुल जायगा, परन्तु बिना बिहार की सहायता से गौड़-विजय भी सम्भव नहीं। बिहार का सहयोग प्राप्त करने के लिए जमाल खाँ लोहानी की इच्छा-पूर्त्ति करनी ही पड़ेगी। तो मेहर का जमाल से निकाह कर देना ही उचित होगा। इससे रास्ते का एक रोड़ा भी दूर हो जायगा और मेहर का भविष्य भी निश्चित हो जायगा।

शेर खाँ जानता था कि लाद इसका विरोध अवश्य करेगी, पर शेर खाँ की इस योजना का आशा के विपरीत उसने स्वागत किया। उसकी दृष्टि में भविष्य के काल्पनिक आनन्द की अपेक्षा निश्चित वर्त्तमान आनन्द कहीं अच्छा है। एक बार उसके जी में आया कि जलाल की चर्चा इस सन्दर्भ में करे, पर वह जान-बूझकर इस ओर से, उदासीन रही। रही आदिल की बात, उसकी ओर से भी लाद ने मुँह फेर लिया। उसका जीवन स्वयं अस्थिर है; साथ ही वह विवाहित और विलासी भी है। पता नहीं मेहर उसके साथ आनन्दपूर्ण जीवन बिता सकेगी या नहीं। जमाल खाँ लोहानी से ही मेहर का निकाह हो जाना अच्छा होगा। यही मरहूम अहमद की भी ख्वाहिश थी। ठीक है, जलाल और आदिल

को मेहर के रास्ते से हटा देना ही ठीक होगा। इर प्रकार से आगा-पीछा सोचकर लाद ने कनखी से शौहर की ओर देखते हुए कहा—"मैं इस मामले में क्या दखल दे सकती हूँ, आप जो ठीक समझें करें; लेकिन आदिल और मेहर के पास इसकी खबर तो भेज ही देनी चाहिये।"

"आदिल के पास खबर तो भेज दी गयी है, पर मेहर को यहाँ आ जाने के पेश्तर इस मामले में कुछ बतलाना मैं ठीक नहीं समझता"—शेर खाँ ने गम्भीरता से कहा। कुछ रुककर बोला—"मैं सोचता हूँ, आज शाम को उन्हें वापस लिवा आने के लिए हैदर खाँ को रवाना कर दूँ। समय बहुत कम है, काम बहुत ज्यादा।"

लाद का समर्थन पाकर शेर खाँ उठ खड़ा हुआ। भविष्य के कार्यक्रम पर विचार करता वह गम्भीरता से पैर बढ़ाता बाहर आया और एक फराश को बुलाकर हैदर को भेज देने का हुक्म देकर अपने कमरे की ओर मुड़ गया।

थोड़ी ही देर में चारो ओर जमाल खाँ लोहानी के साथ मेहर के विवाह की खबर किले में फैल गयी। पर इन सब आकस्मिक घटनाओं से अपरिचित थी तो केवल मेहर।

मेहर का विवाह कहीं और हो रहा है, यह खबर सुनकर आदिल दुःखी हुआ अवश्य, किन्तु उतना नहीं जितना जलाल। आदिल प्रेमी स्वभाव का युवक था जरूर, परन्तु वह प्रेम-पात्र के साथ चिमट नहीं जाना चाहता था। प्रेम का इजहार करने के लिए मजनूँ बनना उसकी दृष्टि में कोरा पागलपन था। वह काम से काम रखना चाहता था। व्यर्थ की परेशानियाँ उठाना उसके जीवन का उद्देश्य न था। वह उस प्रकार का भँवरा था जो कलियों और फूलों पर मँडराता है; जहाँ रस मिला कुछ देर टिककर गुनगुनाकर रस-पान किया और फिर दूसरी कली पर आगे बढ़ गया। फिर उसे पिछली की चिन्ता नहीं;

उसके सूखने, मुरझाने, टूटने का गम नहीं। अपनी इस प्रकृति से आदिल को मेहर की शादी होने के समाचार से कोई सदमा न पहुँचा। सुनकर उसने कहा—'चलो छुट्टी मिली। थी बड़ी सड़ियल मिजाज की लड़की।'

परन्तु जलाल पर मानो बिना मेघ का अशनिपात हुआ। मेहर चली जायेगी? अब वह दूसरे की हो जायगी? इस जिन्दगी में अब उससे प्यार की बातें करने का वह अधिकारी न रह जायगा? इस समाचार से वह हतबुद्धि-सा हो गया। वास्तव में मेहर की आँखों में पैठकर जलाल ने उसके हृदय में अपने लिए कुछ जगह देखी थी और इसी आधार पर उसे विश्वास हो गया था कि मेहर किसी न किसी दिन उसकी होगी। लाद बेगम से हुई बातों के आधार पर उसके विश्वास ने और गहरा रंग पकड़ लिया था। परन्तु आज यह समाचार पाते ही वह पीला पड़ गया। कलेजे पर मानो सौ-सौ घन की चोटें बरस रही थीं। तब वह क्या करे? बाप से कह नहीं सकता था क्योंकि उसके राज्य में प्रेम के लिए कोई जगह ही न थी। वह प्रेम को दुर्बल मनुष्यों का एक प्रपञ्चमात्र मानता। इसी बात पर लाद और शेर खाँ के बीच बढ़ते तनाव का भी उसने कुछ अनुभव किया था। तब किस मुँह से दया की यह भीख माँगने वह पिता के पास जाय? तो क्या लाद से मिले? लाद का स्मरण करते ही जलाल आशंकाओं से भर उठा। कुछ भी हो। मेहर लाद के देवर की पुत्री है, उसके पूर्वपति की भतीजी। वह उसे अपने भाई के वंश में ब्याहना चाहेगी या मुझसे? धीरे-धीरे उसका मन कड़ुवा होने लगा। चित्त में जैसे मिचली आने लगी। न जाने क्यों उसे लाद से चिढ़ हो गयी थी। शायद उसकी विलासप्रियता यह कारण रही हो, अथवा अतृप्त यौवन की उच्छृँखलता, क्योंकि चुनार किले में हुमायूँ के घेरे के समय जलाल खाँ के साथ लाद ने जिस प्रकार का व्यवहार किया था, वह

उसे अब भी याद था। लाद उसके पक्ष में मेहर की शादी की बात करे, यह मानने के लिए उसका हृदय तैयार न था। तब क्या करे? स्वयं मेहर से मिले? यह उपाय सोचते ही वह उत्साह से भर उठा। ठीक है, क्यों न मेहर से मिले। उसी से एकान्त में बातें करना उचित होगा। परन्तु वह तो जौनपुर में है। तब क्या वह भी जौनपुर चले? अब्बाजान उसे जौनपुर जाने देंगे। पूछेंगे कारण; तब वह क्या कारण बतायेगा। बिना कारण बताये या चुपचाप जौनपुर चले चलने में भी खतरा है। किसी न किसी दिन बात फूटेगी ही, तब उसके लिए और भी कठिन समस्या खड़ी हो जायगी।

अन्ततः उसने जौनपुर जाने का निर्णय कर लिया। उस दिन दिन-भर तैयारी करता रहा। शेर खाँ से वह अवश्य मिलना चाहता था, परन्तु स्वयं शेर खाँ कहीं व्यस्त था। शाम को देखादेखी हुई तो उसने चर्चा चलायी। शेर खाँ ने उसकी आशा के प्रतिकूल न तो कोई जिज्ञासा प्रकट की और न कोई कारण पूछा; बल्कि उसे बिहार जाकर जमाल खाँ लोहानी से विवाह के कार्य-क्रमों पर उसकी राय जानने का हुक्म दे दिया। जलाल की इच्छा हृदय-गर्भ में ही दबी जल कर राख हो गयी। वह उसे जबान पर भी न ला सका। अन्ततः उसे बिहार जाना पड़ा और हैदर खाँ जौनपुर की ओर रवाना हुआ। दो दिनों तक लगातार चल कर वह तीसरे पहर जौनपुर पहुँचा।

गोमती की भुज-वल्लियों में आलिंगित, अम्बर में पूर्ण निशाकार सदृश रजनी के प्रथम चरण में उत्तर भारत का वैभव केन्द्र शर्की ऐश्वर्य की विगत राजधानी जौनपुर दुर्भेद्य गगनचुम्बी अट्टालिकाओं और नगर-वीथि के प्रखर प्रकाश में, रमणी के कण्ठहार-मणि की तरह दमकती, प्रातःकालीन शतदल सदृश खिल उठी।

राजपथ पर नगर निवासियों की अपार भीड़ उमड़ रही थी। बड़ी-बड़ीलाल-लाल आँखें, वृषभ सदृश कन्धे, बिम्बफल के समान होंठ और

उभरी नाकवाले यवन घोड़ों पर सवार होकर अपनी छोटी-दाढ़ी और खुरींटी मूछों पर अंगुलियाँ फेरते, जहाँ-तहाँ घूमती रूप-यौवन-सम्पन्न रमणियों पर दृष्टिपात कर निर्लज्ज संकेत और नयनों के गूढ़ विलासपूर्ण छेड़छाड़ से चक्षु-क्षुधा तृप्त करते, मुस्कुराते, इठलाते, गुनगुनाते, स्वर्ण मुद्रिकाएँ उछालते, रुक-रुक कर मद्यभाण्ड मुँह से लगाकर सुगन्धित सुरा का सुस्वाद लेकर या तो गोश्त की दूकान पर खड़े होकर तीतर, मुर्ग, बटेर आदि के स्वादिष्ट भूने गोश्त और लोहे की सलाखों में छल्लेदार रूप से पिरोये कबाब का आनन्द लेते या किसी जौहरी की दूकान पर खड़े होकर हीरे-जवाहरातो को तौलने का आदेश देते हुए, रंग-बिरंगे सुन्दर वस्त्र पहने, अपनी रूप छटा से उस शहर के बाजार को आलोकित करती, नागिन सी बलखाती, मलय-पवन सी इठलाती, बाजारों में घूमती नटनियों और बनजारिनों, या कण्ठों में पुष्पहार डाले रूप-हाट के दोनों ओर पंक्तिबद्ध भवनों के गवाक्षों में खड़ी, मन्द-मन्द मुस्कुराती, नयनों के प्रेमबाण से कामीजनों को किंकर बनाती, कोयल की कुहुक को मात करतीं, अंग-अंग से अनंग-बाण बरसा कर तरुण यवनों को मदन-शर से पीड़ित करतीं, कनकलता के समान यौवन-कल्प-तरु में खिली सुकुमार परियों की ओर देखकर, अंगुली में जकड़ी स्वर्ण मुद्रिका थैली को उसकी ओर उछाल कर संकेत द्वारा पूछते— "आऊँ क्या ?"—और वह सुन्दरी भी अधीर बनाने वाली मन्दस्मित अधरों पर लाकर दायें हाथ से लता सदृश नमेरू-विकसित कपोलों को चूमतीं लटों को हटाकर किसी उत्तम काव्य की यच्छिणी सदृश नायिका की भाँति होंठ बिदकाकर, पुरुषों के मन में मन्मथ-दाह-वेदन उत्पन्न करती मुँह फेर लेती।

थोड़ा आगे बढ़ने पर दोनों ओर सँकरी गलियों में कसेरों का बाजार था। सोने-चाँदी, पीतल, ताँबे के नाना प्रकार के पात्र, मूर्त्तियाँ, निर्मित-अर्धनिर्मित रखी और टँगी थी। जगह-जगह बड़े-बड़े मद्य-

भाण्ड रखे थे जिनमें भरे मादक तरल पदार्थ का क्रय-विक्रय यवन बड़ी तन्मयता से कर रहे थे।

जन-समूह घना होता जा रहा था। लोगों के कन्धे एक दूसरे से घिसे जा रहे थे। ब्राह्मणों के उपवीत सुन्दरियों की भुज-कञ्चन कंकणों में फँसकर टूट जाते थे। बटुकों के मस्तक का तिलक दूसरे के मस्तक पर लग जाता था।

एक ओर बड़े चबूतरे पर दास-दासियों के खरीदने-बेचने का व्यापार अबाध गति से चल रहा था। देश के विभिन्न प्रान्तों की सुन्दरी दासियाँ खरीदी और बेची जा रही थीं जिनका कृश दुर्निरीक्ष्य पाण्डुर शरीर ऐसा शोभायमान हो रहा था जैसे संध्या के धूमिल प्रकाश में द्वितीया के चन्द्रमा की क्षीण कला। सौदागर सौदा तय करते हुए मुड़-मुड़ कर धीरे से कहता—"अरी मुस्कुरा तो, आसामी मालदार है"—और वह कंचुकी को कुछ उभारती हुई मुस्कुरा देती—किन्तु क्या उस मुस्कान में जीवन था?

सौदागर धूर्त्त दृष्टि से इधर-उधर देखता चिल्ला रहा था—"लाखों में एक। जल्दी आओ, जल्दी आओ। फिर न कहना, जमीन पर जन्नत की परियाँ नहीं मिलतीं।"

चबूतरे के पास भीड़ जुटी थी। नीलामी शुरू हुई। एक अल्हड़ किशोरी जिसका कृश तन नलिनी के समान कोमल था, प्रफुल्ल मुख-कमल खिला और उरोज उभरे थे, वह मृग-शावक जैसी तरला जब पलकें झुकाकर, दृष्टिमात्र से ही हृद्गत् भावों को व्यक्त करती तो काम-वृद्ध भी चञ्चल हो जाते। अनावृत, उन्मुख चञ्चल यौवन पर रेशमी कामदार ओढ़नी डालकर वह सुन्दरी सामने आ खड़ी हुई। दर्शकों के हृदय पर साँप लोटने लगे। खरीदारों की संख्या बढ़ती गयी।

नीलाम करने वाला गला फाड़-फाड़कर चीख रहा था—"गजब हो गया, गजब हो गया। फिर न कहना—देखा नहीं, सुना नहीं। अरे

भाइयो, इसके एक चितवन की कीमत एक हजार दीनार है। बोलो, बोलो।"

"पचास दीनार"—कोने से मूछों को उभारता एक अधेड़ उम्र का यवन बोला।

"साठ दीनार"—किसी का स्वर आया।

"पैंसठ दीनार"—पहले ने कहा।

"सत्तर दीनार"—एक बूढ़े की आवाज आयी। कुछ देर तक सन्नाटा रहा। उसने अपनी लाल खिजाब लगी दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए इधर-उधर गर्व से देखा।

"अस्सी दीनार"—दूसरा व्यक्ति बोला।

"नब्बे दीनार"—पहले ने कहा।

"सौ दीनार।"

"सवा सौ दीनार।"

देखते-देखते बोली काफी चढ़ गयी। पहले व्यक्ति ने अपना सीना फुलाते हुए कहा—"बस?"

सौदागर भौंहे चढ़ाकर चिल्लाया—"हो गया? वाह यारो, यह तो इसकी एक अदा का नजराना भी नहीं है। वाह, वाह! अरे भाई, लुट गया मैं। कौड़ी के मोल हीरा बिक रहा है।"

लोगों में सौदागर की बातों से नया जोश आ गया। एक ठिगने कद के व्यक्ति ने कोने में लुकते हुए जोरों से कहा—"डेढ़ सौ दीनार।"

"पौने दो सौ।"

"दो सौ।"

"अरे, दाढ़ी का थूक तो साफ कर—" एक ग्राहक बिगड़ा।

"चुप रह। आगे बोल हिम्मत हो तो—" दूसरे ने डाँटा।

"तू क्या मेरी बराबरी करेगा—" पहला गुर्राया।

"बोल तो सही।"

"तो ले, ढाई सौ दीनार।"

ठिगना व्यक्ति चुप रहा।

"बोल-बोल; चुप क्यों है?" पहले ने आवाज दी।

किशोरी चुपचाप खड़ी थी। उसने चितवन से पहले व्यक्ति की ओर देखा। ठिगना यवन जल उठा। उसने चीख कर कहा—"तीन सौ दीनार"—और वह हाँफने लगा, मानो किसी ने गला दबाकर उसे बोलने पर मजबूर कर दिया हो। जन-समूह के नेत्र उसकी ओर घूम गये। उसके साहस ने सबको विस्मय में डाल दिया। तीन सौ दीनार! बरसों से इतनी बड़ी बोली कभी नहीं लगी थी।

भीड़ और बढ़ गयी। आस-पास के दूकानदार दूकान छोड़कर आ खड़े हुए। सड़क पर घूमने वाली आवारा औरतें भी ठिठककर खड़ी हो गयीं। गवाक्षों में खड़ी वार-बनिताएँ एकटक उस किशोरी की ओर देखतीं रूप का तुलनात्मक अध्ययन कर रही थीं।

"तीन सौ...बस तीन सौ। और बोलो। खड़े क्या हो। मौका चूकने पर पछताना होगा"—सौदागर ने आवाज दी।

सब चुप रहे; शान्त और निश्चल।

"तीन सौ।"

"......"

"तीन सौ दीनार।"

"......"

"तीन सौ एक,...अरे बोलो यारो।"

"......"

"कोई नहीं! वाह-वाह! देखो तो लूट हो रही है। बोलो...बोलो। तीन सौ...दो...।"

"......"

"तीह सौ...तीन सौ...एक...दोऽऽऽ...तीऽऽऽऽऽऽ।"

"साढ़े तीन सौ।"—किसी का तीव्र स्वर वातावरण में गूँज उठा। "साढ़े तीन सौ दीनार!"—सौदागर की बाछें खिल गयीं और ठिगना व्यक्ति दुम दबाकर भाग खड़ा हुआ। सबकी दृष्टि स्वर की दिशा में घूम गयी। एक उज्ज्वल श्याम वर्ण का युवक घोड़े पर बैठा मुस्कुरा रहा था। उसका वक्ष प्रशस्त, बड़ी-बड़ी आँखें, चौड़ा ललाट, भींगती मसें और कुंचित भृकुटि थी। किशोरी की धवल दन्त पंक्ति उज्ज्वल हीरकों के समान या बिजली-सी कौंध उठी। युवक एकटक उसकी ओर देख रहा था। यौवन के उन्मुक्त विलास को देखकर वह हर्षोन्मत्त हो उठा, बेसुध हो गया।

सौदागर चिल्लाये जा रहा था। पर कोई न बोला। इससे ऊपर बोली चढ़ाने की हिम्मत किसी में न रही। अन्त में साढ़े तीन सौ दीनार की शीर्ष बोली पर नीलामी खत्म हो गयी।

युवक शीघ्रतापूर्वक अपने घोड़े की पीठ से नीचे उतरा। आगे बढ़कर उसने युवती की कलाई पकड़ ली। बोला—"आ चल।"

"इसके दाम? दीनारें?"—सौदागर ने टोका।

"साथ चलो। मिल जायँगी।"

"लेकिन..."

"घबराता क्यों है तू? मेरा नाम आदिल खाँ है। कोई ऐसा-वैसा समझ रखा है? चल साथ"—कहते-कहते आदिल ने गर्वपूर्ण दृष्टि से सौदागर की ओर देखा। उसे हिचकिचाता देखकर एक झटके से घोड़े की जीन में बँधी थैली खींच कर उसकी ओर उछालता हुआ बोला—"ले, अभी दिये देता हूँ; लेकिन तुझे साथ तो चलना ही होगा। कहीं यह..."—कहते-कहते आदिल ने रुककर गूढ़-दृष्टि से सुन्दरी की ओर देखा। थैली का मुँह खोलते हुए सौदागर हकलाते हुए शीघ्रता से बोला—"आप घबराएँ न हुजूर! यह आपके गले की हार बन चुकी है। धोखा दे तो मेरा सिर और आपकी तलवार।"

"अच्छा-अच्छा! दीनारें गिन ले। बाद में फिर कुछ न कहना।"

"आपने भी क्या फरमाया हजूर! बन्दे को भला आप पर शक हो सकता है। हुकुम हो तो खिदमत में एक-दो और...।"

"नहीं-नहीं"—किशोरी का हाथ पकड़ कर आदिल बोला। धीरे से कहा—"चल, अब तू मेरी हुई।" और वह आगे बढ़ गया। सौदागर ने नम्रता से सलाम किया। थैली कमर में बाँधी और अन्य गुलाम युवतियों को साथ ले एक ओर चल पड़ा। इतनी ऊँची बोली बरसों बाद चढ़ी थी। खुशी से उसका कलेजा उछलता जा रहा था। आज उसकी प्रसन्नता का ठिकाना न था।

दूसरे चौराहे पर पहुँच कर आदिल खाँ क्षण-भर के लिए रुका। अपनी नयी दासी की ओर देखकर अपनी मूँछ पर अँगुलियाँ फेरता बोला—"किसी चीज की जरूरत हो तो कह देना। आज से तू मेरी हुई। घबरा मत...तेरे लिए मेरी जान हाजिर है"—फिर पीछे मुड़कर साथ में घोड़े की रास पकड़े आते नौकर से बोला—"तू चल; मैं पैदल ही आऊँगा।"

नौकर सिर झुकाकर घोड़े की रास पकड़े आगे निकल गया। आदिल अभी कुछ निश्चय न कर पाया था कि सहसा एक बूढ़ा मुसलमान सामने से दौड़कर उसके पास आया। शायद वह भी पठान था। एक-दो क्षण तक वह उस किशोरी की ओर अपनी धँसी, किन्तु पैनी आँखों से देखता रहा, फिर करुण स्वर में—"बेटी, बेटी"—चिल्लाता हुआ उसके पास चला गया और उससे लिपट गया। युवती क्षण-भर के लिए हिचकी, परन्तु जैसे कुछ स्मरण करके वह भी चिल्ला उठी—"अब्बाजान! आप कहाँ थे?"

आदिल असमञ्जस में पड़ गया। समझ में न आया कि क्या करे। यह विचार आते ही कि कहीं सुन्दरी हाथ से निकल न जाय, उसने लपक कर उसकी कलाई दायें हाथ से कस कर पकड़ लिया। बूढ़े ने

अधीरता से युवती को अपनी ओर खींचा। क्रोध से दाँत पीसकर उसकी कलाई और जोरों से जकड़ते हुए आदिल शेर की तरह गरजा—"क्या बात है बूढ़े? हटता है या नहीं।"

परन्तु बूढ़ा न हटा, वह उस लड़की को छोड़ना न चाहता था।

देखते-देखते आम सड़क पर अच्छा खासा मजमा इकट्ठा हो गया। चारो ओर से लोग दौड़-दौड़कर आने लगे। किसी की समझ में नहीं आ रहा था कि माजरा है क्या? शोर-गुल के कारण भीड़ काफी बढ़ गयी। जिन लोगों ने उस सुन्दरी को नीलामी के समय चबूतरे पर खड़े देखा था, उनके आश्चर्य की सीमा न रही। मजमा काफी इकट्ठा होते देख एक आदमी ने, जो दूकान के ऊपर खड़ा था, हाथ उठाते हुए बोला—"म्याँ, तुम लोगों ने क्यों भीड़ लगा रखी है? जाओ अपना-अपना काम करो।"

"लेकिन हुआ क्या है भाई?"—एक नाटे व्यक्ति ने उचकते हुए पूछा।

"हुआ क्या है! एक लड़का और एक लड़की!"

दूकानदार के उत्तर पर सब हँस पड़े।

थोड़ी देर में भीड़ और बढ़ गयी। लोगों ने देखा कि जन-समूह के बीच एक युवक एक युवती की कलाई पकड़े खड़ा है। वह अपने सामने खड़े बूढ़े व्यक्ति को संकेत करते हुए जोरों से बिगड़ रहा था—"कह रहा हूँ, मुझे कायदे से चले जाने दे। वरना कसम खुदा की, गजब ढा दूँगा। पूछ ले इतने आदमियों से। मैंने इस गुलाम को साढ़े तीन सौ दीनार में नीलामी में खरीदा है। अगर यह तेरी लड़की है तो हुआ करे। जा पूछ उस सौदागर से जो थैली लेकर अभी यहाँ से गया है। मेरे सामने क्यों सिर फोड़ रहा है?"

बुड्ढा गिड़गिड़ाकर बोला—"बेटा, दे-दे इसे मुझको। यह मेरी बेटी है। आठ साल से मैं इसे खोज रहा हूँ। यही मेरे बुढ़ापे की लाठी

है। जब यह नौ साल की थी तभी एक दिन न जाने कैसे गायब हो गयी। मैं इसके बिना नहीं जी सकता।"

युवती सिसक कर और जोरों से रो पड़ी। इससे आदिल का क्रोध आसमान पर चढ़ गया। उसने त्योरियाँ चढ़ाकर कहा—"देखो मियाँ, एक बार समझा दिया। यह मेरी गुलाम है। दुनिया जानती है, मैंने इसे साढ़े तीन सौ दीनारों में खरीदा है।"

"तो पाँच सौ मुझसे ले लीजिये, लेकिन...।"

"मैं छोड़ूँगा नहीं चाहे तू एक लाख दे दे। अब तुम हटते हो या नहीं"—कहते-कहते आदिल क्रोध से पीपल के पत्ते की तरह काँप उठा।

"अमाँ छोड़ भी दो। डेढ़ सौ के फायदे में ही हो। क्या बिगड़ता है तुम्हारा"—किसी ने पीछे से आवाज दी।

"मत छोड़ना प्यारे। यह परी करोड़ों में भी सस्ती है"—दूसरा बोला।

"अब्बा जाऽऽन!"—युवती सिसक रही थी। वह झपट कर आदिल के पैरों से लिपट गयी। उसकी आँखों से मोतियों के समान मौन आँसू ढुलकते चले जा रहे थे। जिस प्रकार कसाई को देखकर गाय करुणा-कातर दृष्टि से ताकती हुई हुँकारने लगती है, वैसे ही वह तड़प रही थी। आदिल का हृदय उसकी दयनीय दशा पर द्रवित हो उठा। उसने आँखें चढ़ाकर पूछा—"तू भी जाना चाहती है?"

"मालिक! छोड़ दीजिये। मैं जिन्दगी भर आपका एहसान न भूलूँगी"—युवती ने सिसकियाँ भरते हुए कहा।

"अल्लाहताला तुम्हें बरकत देंगे"—बूढ़ा पठान गिड़गिड़ा कर बोला।

"अमाँ छोड़ भी दो"—पाँच-छः आवाजें एक साथ आयीं—"कोई दूसरी जवान औरत तजबीज कर खरीद लेना।"

आदिल ने युवती की कलाई छोड़ दी। एक दुकानदार चिल्लाया—"वाह, वाह ! कमाल है इन आँखों में क्या हुस्न है !"

युवती दौड़कर अपने बूढ़े पिता से लिपट गयी। वह फफक कर आनन्द से विह्वल हो रो पड़ा। आदिल ने उसकी ओर घूर कर देखते हुए कहा—"ला थैलियाँ।"

"अभी तो साथ नहीं है। कल सुबह पहुँचा दूँगा।"

आदिल कुछ देर तक सोचता रहा फिर आवेश में बोला—"जा, तेरे ईमान पर छोड़ता हूँ।" क्षण भर रुक कर सिर पर हाथ फेरता हुआ दायें मुड़ा और भीड़ चीरता हुआ सामने शराब की एक दूकान में घुस गया।

धीरे-धीरे रात चढ़ने लगी। आदिल, यह जानते हुए भी कि मेहर उसकी प्रतीक्षा कर रही होगी, शराब के दौर में शराबोर हो गया।

मेहर को यद्यपि दासी से यह ज्ञात हो चुका था कि आदिल ने नौकर के हाथ घोड़ा भेजवा दिया है, परन्तु उसे यह आशा न थी कि वह इतनी देर में वापस लौटेगा। आदिल की प्रतीक्षा में काफी देर तक वह छत पर इधर-उधर टहलती रही। फिर बुर्ज की निचले मुँडेरे पर हाथ टेक कर खड़ी हो गयी और अन्यमनस्क भाव से इधर-उधर देखने लगी। उसकी काली लटें पवन में लहरा कर उसके मुख-सरोज का चुम्बन कर रही थीं। चाँदनी रात में वह प्रसन्नवदना तरुणी उत्फुल नलिनी के समान प्रतीत हो रही थी। रह-रहकर उसके नेत्रों के समक्ष जलाल की मधुर आकृति खिंच जाती। जलाल के लाल चेहरे, बड़ी-बड़ी और तेज आँखें, सुडौल-हृष्ट-पुष्ट शरीर तथा उसका मधुर-सरल-सरल स्वभाव एवं वार्त्तालाप स्मरण करते ही प्रेमावेश में मेहर सिहर उठी। सहसा उसने अपने को सम्हाला। जलाल कहाँ होगा ? न जाने क्या करता होगा ? प्रेम के सरस मेघों को सन्देह के

तूफान ने छिन्न-भिन्न कर दिया। वह यदि उसे प्यार करता होता तो क्या एक बार देखने के ही बहाने न आता? मेहर के कानों में लाद बेगम के शब्द गूँज उठे जो आते वक्त उसने बड़े रहस्यमय ढंग से कहा था—"बेटी, छेदवाली नाव और युद्ध के सिपाही का क्या भरोसा! न जाने कब आँखों से ओझल हो जाँय। आदिल खाँ बड़ा शाहजादा है। अगर मुकद्दर ने साथ दिया तो तू मलका बन कर रहेगी।"

"मलका!"—लाद की बातें स्मरण करते-करते न जाने क्यों मेहर स्वतः फुसफुसा उठी। लाद की बातें उस समय तो कुछ भी समझ में न आयी थीं। पर अब आँखों का परदा धीरे-धीरे हटने लगा था। क्या मैं अपनी मुहब्बत का दामन आदिल के हाथों दे दूँ? आदिल! खूबसूरती का जामा ओढ़ एक बदसूरत इन्सान! शराब और साकी में डूबा प्रेम की भँवर में घूमने वाला जिन्दगी की गहराई में पहुँचना क्या जाने? मुहब्बत और बादशाहत में क्या सम्बन्ध? मेहर और मलका में क्या रिश्ता? और जलाल जिन्दगी और मौत से खेलने वाला बहादुर है। आदिल खाँ उम्र में उससे बड़ा है, किन्तु अक्ल में कितना छोटा। अब तो जलाल रग-रग में समा चुका है। मुहब्बत या मौत की जीत ही तो आशिकों की किस्मत का फैसला है। सोचते-सोचते मेहर की मुट्ठियाँ स्वतः कस गयीं। सहसा उसने अपने हृदय को शान्त किया। आँखें उठाकर आकाश की ओर देखा—पूर्णिमा का चाँद सिर पर आ चुका था। वह शीघ्रता से पीछे मुड़ी और चलने ही वाली थी कि एक दासी आदाब बजाती पास आ खड़ी हुई। उसने नम्र किन्तु द्रुत स्वर में कहा—"हुजुरे आला, चुनार से हैदर मियाँ कोई खबर लेकर आये हैं।"

क्या खबर लाये हैं? कोई खत...?"

"जी हाँ। यह लीजिये—" कहते-कहते लौंडी ने डोरी में लिपटा एक पत्र आगे बढ़ा दिया। मेहर ने पत्र ले लिया और शीघ्रता से नीचे उतर आयी। प्रकाश के सामने नीले मखमल से ढँकी चौकी पर बैठ गयी। उसका हृदय धड़कने लगा। क्या जलाल ने पत्र भेजा है? खोल कर देखा, पत्र शेर खाँ का था और आदिल के नाम लिखा गया था। दूसरे ही क्षण उसके चेहरे पर सन्देह और उत्सुकता का समिश्रण छा गया। यह किसके निकाह की व्यवस्था करने के लिए शेर खाँ ने आदिल को बुलाया है? कहीं यह खुशकिस्मत जलाल ही तो नहीं है? नहीं, नहीं, ऐसा नहीं हो सकता! मेहर ने मन को सान्त्वना देने की कोशिश की, परन्तु किसी निष्कर्ष पर न पहुँच पायी। शेर खाँ ने आदिल को बुलाया है। आधी रात हो गयी, पर अभी तक उनका पता नहीं। मेहर की समझ में न आया कि क्या करे कि सहसा आदिल खाँ लड़खड़ाते कदमों से कमरे में प्रविष्ट हुआ। उसके बाल बिखरे हुए थे, आँखें लाल थीं और कपड़े अस्त व्यस्त थे। वह कभी किसी शेर की एकाध टूटी कड़ियाँ दुहराता या स्वतः न जाने क्या-क्या बड़बड़ाने लगता।

आदिल को देखते ही मेहर दौड़कर उसके पास गयी। उसने शीघ्रता से कहा—"आपने आज बड़ी देर कर दी। चुनार से हैदर मियाँ अब्बाजान का खत लेकर आये हैं।"

"आने दो"—आदिल ने लापरवाही से कहा और आगे बढ़ गया। फिर स्मरण करते हुए उसने शीघ्रता से पूछा—"कितनी थैलियाँ लाया है? उससे कहो मेरे कमरे में पहुँचा दे।"

थैलियाँ? कैसी थैलियाँ?—मेहर विस्मित हो उठी। फिर सँभल कर बोली—"वह थैलियाँ लेकर नहीं आया है बल्कि आपको साथ लिवा जाने के लिए आया है। यह खत है"—कहते-कहते मेहर ने

वह पत्र आदिल की ओर बढ़ा दिया। आदिल एक साँस में उसे पढ़ गया। फिर मुस्कुराते हुए मेहर की ओर तिरछी आँखों से देखते हुए स्वतः बड़बड़ाया—"मालूम होता है इन हाथों में अब मेंहदी लग कर ही रहेगी।"

"किसके?"—मेहर विस्मित हो पूछ बैठी, परन्तु दूसरे ही क्षण आदिल से दृष्टि टकराते ही वह लाज से दब-सी गयी। चुपचाप आदिल की ओर और कभी जमीन की ओर देखती रह गयी।

उसकी यह दशा देखकर आदिल ठहाका मार कर हँस पड़ा। कुछ रुक कर वह बैठक की ओर चला गया।

मेहर दुविधा में उलझ चुकी थी। कुछ भी स्पष्ट न हो पा रहा था। वह कभी लेट जाती, तो कभी उठकर टहलने लगती। रात ढल गयी, पर पलकें न लगीं। सबेरा होते ही चुनार लौटने की व्यवस्था होने लगी। मेहर का हृदय कल्पित आशाओं के लहरों पर थिरक उठा।

९

जमाल खाँ भाग निकला

अगले सप्ताह मेहर जब आदिल खाँ के साथ चुनार पहुँच गयी, तब उसे ज्ञात हुआ कि उसका निकाह जमाल खाँ लोहानी के साथ होने वाला है। उसके सिर पर मानो पहाड़ टूट पड़ा। पहले तो उसे यह आशा हुई कि लाद उसके इस सम्बन्ध पर विरोध करेगी, परन्तु उसे भी चुप्पी साधे देख मेहर को गहरी निराशा हुई। जलाल भी उससे खिंचा-खिंचा रहने लगा। यहाँ तक कि वह दिन में मुश्किल से एक या दो बार दिखायी देता। मेहर उससे दो-चार बातें करके जीवन की इस विकट पहेली को सुलझाने की इच्छा करती, पर जलाल जब मिलता आँखें चुराकर निकल जाता। उसकी समस्त आशाएँ मन ही मन सुलगती रहतीं। किससे वह अपना दुख कहे ? लाद, शेर खाँ, जलाल, किससे वह अपने दिल की बातें कहे ? कोई भी तो उसकी इच्छाएँ जानने के लिए तैयार न था। नारी हृदय में जहाँ एक ओर विद्रोह का प्रबल तूफान रहता है वहीं दूसरी ओर सहनशीलता की असीम गहराई भी। भाग्य-कुचक्र की भीषण ज्वाला ने मेहर को चारो ओर से घेर लिया था। निकल भागने का कोई रास्ता न रहा। उसकी समस्त आशाएँ जलकर राख हो गयीं, हृदय बेकसी का मजार बन गया और वह जमाल खाँ लोहानी के हाथों सौंप दी गयी। किसी ने उसके दुःख-सुख की परवाह न की। और जब जीवन के भीषण उथल-पुथल से उसकी तन्द्रा टूटी तो उसने अपने को चुनार से काफी दूर पाया। उसके जीवन में नवीन अध्याय शुरू हुआ।

मेहर को पाकर जमाल खाँ लोहानी के जीवन में बहार आ गयी। जब वह मेहर के उतरे चेहरे को देखता तो उसका हृदय दुःख से कातर हो उठता। अपनी इस नव-वधू को प्रसन्न करने के लिए उसने जमीन-आसमान एक कर दिया। रात-दिन उसके दामन से लिपटा रहता। वह सब कुछ भूल चुका था। समय के चक्र में तीन वर्ष तेजी से घूम गये।

एक दिन जब जमाल को शेर खाँ का पत्र मिला तो उसपर मानो वज्र गिरा। शेर खाँ ने उसे अपने वायदे का स्मरण दिलाते हुए लिखा था कि तीन वर्ष बीत गये हैं, अब उसे अपनी फौज को लेकर शेर खाँ के साथ गौड़ की ओर बढ़ना चाहिये। शेर खाँ ने यह भी संकेत किया था कि गौड़ की फौज बिहार की ओर बढ़ने के लिए अब बिलकुल तैयार है। शेर खाँ का यह पत्र पाकर एक बार तो जमाल के जी में आया कि वह अपने वायदे से मुँह मोड़ ले, पर ऐसा करना मौत को गले लगाना था। अन्त में उसने शेर खाँ के साथ गौड़ की ओर बढ़ने का ही निश्चय किया। रह-रहकर उसका मन विचित्र और भयानक अज्ञात आशङ्का से काँप उठता। एकाएक उसके मस्तिष्क में वीरसिंह की उक्ति बिजली की तरह कौंध उठी। उसकी आँखें एक विचित्र ज्योति से चमक उठीं। शेर खाँ इस प्रकार आसानी से अपने राह से हटाया जा सकता है।

कुछ ही दिनों के भीतर शेर खाँ स-दल-बल बिहार पहुँच गया और जमाल खाँ लोहानी और उसकी फौज के साथ गौड़ की ओर रवाना हुआ।

एक दिन शेर खाँ के सेनापति मियाँ हाँसू को जमाल के षड्यन्त्र का कुछ संकेत मिल गया जिससे वह चिन्तित हो उठा। उसने मन में निश्चय किया कि सरदार से इस विषय पर पड़ाव डालते ही वार्त्तालाप करनी चाहिये।

सम्मिलित सेना सूरजगढ़ घाटी के पास आती जा रही थी। फौजदार चिन्ता-मग्न हो गया। वह भविष्य की विपत्तियों के भय से रह-रह कर काँप उठता 'चारो ओर से अफगान सेना घिर गयी है। लोहानी सरदार जमाल खाँ नाम मात्र के लिए शेर खाँ का साथ दे रहा है और भीतर से अफगान सत्ता की जड़ काट रहा है। इतना भयङ्कर विश्वासघात!'

सूरजगढ़ घाटी से लगभग दस कोस पहले अफगान-लोहानी सम्मिलित सेना का पड़ाव पड़ा था। रजनी के अँगड़ाई लेते ही कोसों तक भूमि मशालों के प्रकाश में धुल गयी। घाटी के उस पार गौड़ सम्राट की सेना मुकाबले पर डटी थी। कल यह पर्वतीय घाटी रक्त-रञ्जित हो जायगी। बिहार और बङ्गाल की मुस्कुराती सीमा पर किसी का वैभव बेकसी का मजार बन जायगा।

शेर खाँ ने चारो ओर चौकन्नी दृष्टि दौड़ायी। बिहार की सेना चारो ओर वृत्ताकार रूप में छायी थी जब कि कल तक वह एक कोने में दुबकी पड़ी रहती थी। अवश्य ही जमाल का कुचक्र तेजी से घूम रहा है। विद्रोह करना अधैर्य तथा मानसिक शिथिलता का लक्षण होगा और चुप रहना मृत्यु का आह्वान करना।

शेर खाँ के पलटते ही सेनापति मियाँ हाँसू शीघ्रता से बोला—"अपने बाबत भी हुजूर को होशियार रहना चाहिये।"

"मैं होशियार हूँ सिपहसालार"—शेर खाँ ने लापरवाही से उत्तर दिया। सहसा कुछ सोचते हुए बोला—"मियाँ, इस वीरसिंह को अपनी ओर मिलाने की कोई तरकीब सोचो। यह खतरनाक आदमी बड़े कामका है।"

"लेकिन परवरदिगार, वह तो आपके खिलाफ..."

"क्या कहते हो भाई, उसे तो मैं यों खतम कर दूँगा"—कहते-कहते शेर खाँ ने बायाँ हाथ उठाते हुए चुटकी बजा दी—"चार दिनों

से वह मेरे पीछे साये की तरह घूम रहा है। तुम जाकर उसे किसी तरह मेरे पास लाओ।"

"जो हुक्म"—कहते हुए सिपहसालार ने मस्तक नत कर लिया और शेर खाँ अपने खेमें की ओर बढ़ा। हाँसू वहाँ से बढ़कर लोहानियों की छावनी में आया। वह चुपचाप वीरसिंह की खोज में लग गया। वीरसिंह कहीं दिखायी न देता था। वह अपने षड्यन्त्र में रत था। हाँसू उसे पा न सका क्योंकि वह बहुत आगे बढ़ चुका था।

पहरेदारों की आँख बचाकर वीरसिंह दबे पाँव शेर खाँ के खेमें के पिछवाड़े आ पहुँचा। उसने इधर-उधर गौर से देखा। अँगरखे में छिपी कटार निकाल कर शीघ्रता से खेमे का परदा चीर दिया। दूसरे क्षण वह खेमे के अन्दर था। उसने झाँक कर भीतर देखा—शेर खाँ खेमे के अन्दर न था। दरवाजे के पास परदे की ओट में खड़ा होकर तब वह शेर खाँ के आने की प्रतीक्षा करने लगा।

हाथ ऊँचा उठाकर पंजे में जकड़ी कटार पर दृष्टिपात करते ही वह काँप उठा। उसके पैर काँपने लगे। सहसा उसने अपने को सँभाला। शेर खाँ के खून से इसकी प्यास बुझानी ही होगी। उसके मरते ही चुनार का किला अपना और जमाल खाँ का पौ बारह। बिहार के सरदार लोहानी जमाल खाँ से जो शर्तें हुई हैं उनके फलित होने के समय आ गया है।

दर-दर घूमने वाला भिखारी महलों का ख्वाब देखने लगा। सहसा द्वार पर किसी की पदचाप सुनते ही वह चौकन्ना हो गया। पल-पल एक-एक घड़ी की तरह बीतने लगे। हृदय जोरों से धड़कने लगा। साहस बटोर कर वीरसिंह दरवाजे से सटकर खड़ा हो गया।

किसी ने शीघ्रतापूर्वक खेमें में प्रवेश किया। वीरसिंह ने परदे की ओट से देखा—उसका शिकार शेर खाँ आ गया था। बाएँ हाथ से परदा हटाते हुए वह शेर खाँ पर भूखे गीदड़ की भाँति उछल पड़ा।

उसकी कटार शेर खाँ की पीठ से जा टकरायी और झन्न से पृथ्वी पर जा गिरी। वीरसिंह घबरा गया। वह दूसरा आक्रमण न कर सका। शीघ्रता से कटार छोड़ वह कोने में जा खड़ा हुआ। उसके नथुने फूल रहे थे। मुँह में फिचकुर भर आया था। ऐसा प्रतीत होता मानो अब उसका दम घुट जायगा। क्रुद्ध दृष्टि से उसने शेर खाँ की ओर देखा जो उसके सामने अपना सीना ताने खड़ा मुस्कुरा रहा था। भूमि पर गिरी कटार अब भी जैसे झनझना रही थी और उसका काल्पनिक स्वर वायु में मानो अट्टहास कर रहा था।

शेर खाँ जोरों से हँस पड़ा। मन-ही-मन सोचा—यदि लौह-कवच न पहने होता तो आज जिन्दगी खत्म थी। एक बार विचार में आया कि इस विश्वासघाती वीरसिंह का गला उतार ले; पर उसने ऐसा करना उचित न था। उखड़ी नसों के लिए यह जहर बड़े काम का है। लोहानी सरदार के इशारों पर नाचने वाले इस राजपूत का क्या दोष? अब तक यह उसके इशारों पर नाचता रहा है, अब अपने इशारों पर इसे नचाना होगा। अब तक यह लोहानी का अस्त्र था, अब मेरा होगा।

शेर खाँ क्रोध दबाते हुए सरल शब्दों में बोला—"यह कैसा मजाक वीरसिंह? देखो मेरा कन्धा छिल गया..."

शेर खाँ की ओर से प्रत्याक्रमण अथवा रक्षा का प्रबन्ध न होते देख वीरसिंह स्तब्ध रह गया। तनिक भी क्रोध नहीं। तब सहसा उसका साहस फिर बढ़ा—"मैं तुम्हारा खून करने आया हूँ। आज तुम मेरे हाथों से बच नहीं सकते"—कहते हुए वीरसिंह कटार की ओर लपका। उसकी आँखों में खून नाच रहा था।

शेर खाँ ने शीघ्रता से झुककर कटार उठा लिया। वीरसिंह की ओर घूर कर देखते हुए गरज उठा—"बेवकूफी मत करो। तुमने मेरा अब भी कुछ नहीं बिगाड़ा है। सुना था, राजपूत सीने पर वार

करता है, पीठ पर नहीं। लेकिन तुम..."–कहते-कहते शेर खाँ की आँखें अंगारों की भाँति लाल हो उठीं। उसका चेहरा ताँबे की भाँति तमतमा उठा।

"क्षमा, क्षमा ! मैं अपराधी हूँ"—कहते हुए वीरसिंह ने घुटने टेक दिये। वस्तुतः वह शेर खाँ से पराजित हो चुका था। शेर खाँ का उग्र रूप देखकर वीरसिंह गीदड़ बन गया। उधर दरवाजे पर हाथ में चमचमाती नंगी तलवार लिये सेनापति हाँसू आँखों से चिनगारियाँ छोड़ता-सा उसकी ओर ताक रहा था। वह उसे ढूँढ़ते-ढूँढ़ते पता लगाकर यहाँ आया था।

"यह क्या वीरसिंह, उठो। तुम मेरे दोस्त हो। तुम्हारी हिम्मत ने मुझे खुश कर दिया है"—शेर खाँ ने उसका सन्ताप मिटाकर उसे मिला लेने की भावना से मन का भाव पीकर कहा।

"सरकार मेरी आँखें अन्धी हो गयी थीं। मैं नहीं जानता था कि आप इतने नेकदिल हैं। मैंने लोहानी..."

"मैं सब जानता हूँ"—शेर खाँ ने अत्यन्त शान्ति से उत्तर दिया। उसका हृदय अपनी रक्षा तथा विजय पर प्रसन्न था, परन्तु वह नहीं चाहता था कि पहरेदारों के बीच लोहानी सरदार जमाल के कुचक्र का रहस्योद्घाटन करके यह राजपूत एक आतंकमय वातावरण सृजन करे। इसलिए उसने गम्भीरता से कहा—"तुम चाहते क्या हो ?"

"मैं आश्रय चाहता हूँ। आपकी कृपा...वीरसिंह के स्वर में याचना थी।"

"लेकिन तुम्हारा यहाँ रहना ठीक नहीं। जब तुम्हारे मालिक सुनेंगे कि तुम अपने काम में असफल रहे तो जानते हो तुम्हारी क्या दशा होगी ?"—शेर खाँ ने चातुरी से पूछा मानो उसके ही मुँह से उसके दण्ड की बात निकलवाना चाहता हो ?

"जानता हूँ परवरदिगार। मेरी रक्षा कीजिये। मैं आपकी शरण में हूँ—" वीरसिंह का गला काँपने लगा।

"तुम अभी मेवाड़ चले जाओ।"

"अभी? अकेले?"

"हाँ, अभी। मैं तुम्हारे साथ चार सिपाही भेज देता हूँ।"

वीरसिंह का चेहरा कुछ खिला। लोहानी से जान बची। भला वह घर तो पहुँच जायगा। सिर उठाते मस्तक से स्पर्श करता हुआ बोला—"भगवान आपकी दिन दूनी रात चौगुन तरक्की करें।"

"इसके बदले में तुम्हें भी मेरा एक काम करना होगा—" शेर खाँ ने कहा।

"मैं जी-जान से तैयार हूँ हुजूर। आपकी खुशी के लिए मैं मौत से भी टक्कर लेने के लिए तैयार हूँ।"

"खूब! तुम्हारी दिलावरी ने हमें खुश कर दिया है, बीरसिंह। अच्छा, तुम अभी जाओ। जरूरत पड़ने पर याद करूँगा।"

वीरसिंह ने विनम्र मुद्रा में मस्तक झुका दिया। शेर खाँ ने कनखी से देखते हुए पुनः कहा—"देखो, अपना वादा भूल न जाना।"

"यकीन रखें सरकार। मैं राजपूत हूँ।"

"जानता हूँ, राजपूत।" शेर खाँ ने सेनापति हाँसू को बीरसिंह के शीघ्र प्रस्थान की व्यवस्था करने का आदेश दिया। वीरसिंह मियाँ हाँसू के पीछे तेजी से बाहर निकल गया।

थोड़ी देर में घोड़े की टापों का स्वर वातावरण में गूँज उठा। शेर खाँ ने हैदर को बुलाकर कहा—"मियाँ जमाल से मैं मिलना चाहता हूँ। देखो वह आराम तो नहीं कर रहे हैं?"

हैदर स्वामी की आज्ञा-पालन करने चल पड़ा। उधर जमाल खाँ वास्तव में एकान्त विलास में व्यस्त था। सेना की छावनी भी उसके लिए उसके महल का अन्तःपुर थी। वह नशे में था। काफी

शराब पी चुका था और अब भी पीना चाहता था। एक सुन्दरी बाँदी उसके बगल में बैठी थी।

"एक गिलास और"—जमाल खाँ बोला। बाँदी मदघूर्णित दृष्टि जमाल पर डालती। अपने दोनों अनावृत भुज-मृणाल हवा में लहराती हुई वह मधुर स्वर में बोली—"जाम खाली हो गया सरकार।"

जमाल की भृकुटि कुंचित हो गयी। अभय मुद्रा में उसने एक हल्की अँगड़ाई ली। बोला—"क्या कहा ? खत्म हो गया ? या खुदा ! जाम खाली हो जाता है पर दिल नहीं भरता। मैं कहता हूँ और लाओ। अरे, चुपचाप बैठी है। अच्छा तू ही आ मेरे पास।"

मद्य-पात्र एक कोने में रख जमाल के कण्ठ में अपनी कोमल भुजवल्लरी डालकर दासी बोली—"आप आराम करें हुजूर ! कल आपको......"

"आराम ! यही तो आराम है..."—कहते हुए लोहानी सरदार ने अपने मद्यसिक्त होठों को उसके प्रतिबिम्बित कपोलों पर रख दिया। कुछ रुक कर बोला—"तू सोचती है कि कल मैं युद्ध में लड़ूँगा। पगली, लड़ते हैं सिपाही। मैं बादशाह हूँ; बादशाह सिपाहियों को लड़वाता और उनकी विजय का फायदा उठाता है।

कुछ क्षणों तक दोनों परस्पर आलिंगित हो पुलकावेगों की दुनिया में उड़ने लगे। सहसा बाँदी ने चिन्तित स्वर में पूछा—"अगर शेर खाँ ने आपको साथ चलने को कहा तो ?"

"कौन आता है, कौन जाता है। और पास आ। आह, तेरे ही सहारे तो जी रहा हूँ। वीरसिंह के आते ही मेरे अरमान खिल उठेंगें। शेर खाँ अभागा अब तक जमीन पर पड़ा तड़पता होगा या...। कल तक मुझे ले चलने के लिए वह..."

"वीरसिंह ? कौन हैं वह ?"—दासी ने उत्सुकतापूर्वक पूछा।

"वही राजपूत जिसे मैंने शेर खाँ को मार डालने के लिए भेजा है। तू कुछ नहीं समझेगी—"आवेश-तप्त साँस लेते हुए जमाल बोला।

दोनों निश्चल, निस्पन्द आनन्दातिरेक से, तृप्त से सुप्त-विस्मृत पड़े थे। सहसा एक दासी ने खेमें में प्रवेश किया। जमाल ने सिर उठाकर शीघ्रता से पूछा—"क्या है?"

नतमस्तक हो दासी ने उत्तर दिया—"अफगान सिपहसालार हैदर खाँ, सरदार शेर खाँ का पैगाम लेकर तशरीफ लाये हैं। हुजूर के कदमों में आने की इज़ाजत चाहते हैं।"

"इस वक्त?" कह कर जमाल खाँ ने भौहें सिकोड़ीं।

दासी चुप रही।

"अच्छा भेज दे।"—कहते हुए जमाल ने अपने भुज-बंधन ढीले कर दिये। उसकी साकी उठकर खड़ी हो गयी और एक ओर चली गयी।

क्षण भर में हैदर खेमें में उपस्थित था। उसने नतमस्तक हो लोहानी सरदार का अभिनन्दन किया फिर धीरे-से बोला—"मुझे सरदार शेर खाँ ने आपकी खिदमत में भेजा है।"

"कहो। क्या कहलाया है तुम्हारे मालिक ने?"

"वह आपसे मिलना चाहते हैं।"

"अभी?"

"हुजूर को कोई इतराज न हो तो अभी ही। बात जरूरी है।"

"मैं खुद वहाँ आ जाऊँगा। मेरा एक आदमी कुछ काम से बाहर गया है। उसके आते ही..."

"बन्दगाने आली उस राजपूत सरदार बीरसिंह की इन्तजारी में तो नहीं हैं?" कनखी से देखते हुए हैदर बोला—मानो वह इसे टटोलना चाहता हो।

हैदर के मुख से बीरसिंह का नाम सुनते ही जमाल उठकर बैठ गया। उसका नशा उखड़ गया। क्षण भर में मद की वास्तविकता ने सारा आनन्द-लोक झकझोर दिया। उसका मन शंकाओं से भर उठा। कहीं वह पकड़ा तो नहीं गया? उसने गला साफ करते हुए, गूढ़-दृष्टि से हैदर की ओर देखकर कहा—"हाँ-हाँ, वहीं मूछों वाला राजपूत। उसने कोई उत्पात तो नहीं किया? बड़ा खतरनाक है जंगली।"

"माफी चाहता हूँ सरकार, वह तो चले गये।"

"चले गये! कहाँ?"—लोहानी आसमान से गिरा। उसे कुछ सुझाई न पड़ता।

"मेवाड़।"

"तुम्हें कैसे मालूम?"—घबराता हुआ लोहानी बोला।

"मेरे सामने उसने सरदार से कहा था कि मुझे मेवाड़ भेजवा दिया जाय। मेरी जान खतरे में है।"

"फिर क्या हुआ?"

"सरदार ने उस पर तरस खाकर उसे चार सिपाही साथ देकर भेज दिया।"

जमाल उठकर खड़ा हो गया। उसकी आँखों में भय नाचने लगा। भर्राये स्वर में पूछा—"और क्या कहा उसने?"

"और कुछ बताने से उसने इन्कार कर दिया।"

जमाल के नेत्रों से अग्नि-स्फुलिंग निकलने लगे। उसके अरमानों की होली जल रही थी और वह असहाय खड़ा था। अब क्या होगा? मुझे शेर खाँ के इशारों पर नाचना होगा। जमाल विचलित हो उठा। मन ने कहा—"भाग चल।" मस्तिक ने पूछा—"कहाँ?"

सहसा जमाल के मस्तिष्क में एक युक्ति बिजली की भाँति कौंध गयी। यदि मैं गौड़ सम्राट् से मिल जाऊँ तो?—उसने सोचा—मैं

सुरक्षित रहूँगा और शेर खाँ पराजित होगा। बिहार-गौड़ की संयुक्त सैन्य शक्ति का वह मुकाबला नहीं कर सकेगा। फिर अपना मार्ग प्रशस्त हो जायगा। दृढ़तापूर्वक वह स्वतः बड़बड़ा उठा—"ठीक है।"

"क्या सरकार?"—हैदर ने उत्सुकता से पूछा।

"सरदार शेर खाँ से कह दो मैं अभी आता हूँ।"

हैदर मस्तक नत करता चला गया और जमाल ने अपने वजीर को बुलाकर उसके कान में कुछ कहा। दोनों अपने षड्यंत्र में तल्लीन हो गये।

उधर शेर खाँ लोहानी की प्रतीक्षा करने लगा। घण्टों बीत गये, परन्तु वह न आया। शेर खाँ अधीर हो उठा। शुक्र-नक्षत्र का मन्द आलोक जब पृथ्वी पर छा गया तो शेर खाँ खेमें से बाहर निकला। रेखागणित के अनेक चित्र, कल्पना के विचित्र राजनैतिक पट पर चित्रित होते, मिट जाते। जमाल खाँ अभी तक नहीं आया। शेर खाँ ने इधर-उधर गौर से देखा—केवल मशाल की प्रकाशमय लपटें, पहरे पर तैनात सन्तरी, धुँधले वृक्ष और पहाड़ी की शीर्ष रेखा।

वह मंथर गति से जमाल के खेमें की ओर बढ़ने लगा। सहसा चौंक उठा। लोहानी अड्डे से घुड़सवारों का एक दल निकला और शीघ्रता से पूर्व दिशा की ओर भागा।

शेर खाँ कुछ निश्चित भी न कर पाया था कि एक लोहानी सरदार उसके सामने दौड़कर आ खड़ा हुआ। वह जोरों से हाँफ रहा था—"सरदार, हः हःऽऽ जमाल खाँ हः हःऽऽ भाग गये।"

"कहाँ?"—शेर खाँ चीख उठा।

"उधर"—अँगुली से संकेत करते हुए वह बोला।

"और सरदार कहाँ हैं?"

"वह लोग खेमें में हैं। सिर्फ सरदार जमाल फौज की एक टुकड़ी के साथ न जाने कहाँ चले गये।"

विषधर सर्प की भाँति फुफकारते हुए शेर खाँ क्रोध से थरथरा उठा। ऐन वक्त पर धोखा! उसने आगन्तुक की ओर तीव्र दृष्टि से देखकर पूछा—"आप लोग अब क्या चाहते हैं?"

"हम आपकी शरण में हैं। हमारी रक्षा कीजिये।"

"घबराओ नहीं। मैं तुम्हारे साथ हूँ। जाकर आराम करो। काफी थक गये हो"—शेर खाँ सरल शब्दों में बोला। उसका चेहरा लपटों की तरह लाल हो रहा था।

लोहानी सरदार के जाते ही उसने हैदर को बुलाकर चुनार जा आदिल खाँ को साथ लाने का आदेश दिया। फिर तलवार की मूठ पर पंजा जकड़ते हुए स्वतः बड़बड़ा उठा—"अब हमें मौत से लड़ना है। इसी लड़ाई में किस्मत का फैसला हो जायगा।"

———

१०

भाग्य ने पलटा खाया

अरुणिमा के मन्द प्रकाश में, अपनी फौज के साथ आगे बढ़ते हुए शेर खाँ ने देखा कि सूरजगढ़-घाटी के पूर्वी भाग में गौड़ सैनिक बादल की तरह उमड़ते जा रहे थे। लोहानी सरदार एक बार काँप उठे। इतनी बड़ी फौज का मुकाबला करना लोहे के चने चबाना था। मुट्ठी भर अफगानी सेना क्या कर सकती थी ? परन्तु शेर खाँ का जोश देखकर उनकी रगों में गर्म खून दौड़ पड़ा। सबने संकल्प कर लिया कि हमारे पैर वापस न मुड़ेंगे चाहे जान चली जाय।

घाटी के एक ओर गंगा बह रही थीं और दूसरी ओर क्यूल नदी। दोनों नदियों का पाट चौड़ा और प्रवाह तीव्र था। तीसरी ओर खड्गपुर की पहाड़ियाँ वृत्ताकार रूप में फैली हुई थीं। मार्ग अत्यन्त भयानक और ऊबड़-खाबड़ था।

अभी तक हैदर के न लौटने से शेर खाँ कुछ चिन्तित था। हैदर और आदिल की प्रतीक्षा में न रुककर उसने शीघ्रता से अपनी योजना को कार्यरूप में परिणित करना आरम्भ कर दिया। अपने छोटे बेटे जलाल तथा प्रधान सहायक सेनापति खोवाज खाँ को सौ चुने घुड़सवारों को आगे ले जाने की आज्ञा देकर वह शीघ्रता से पीछे मुड़ा। सेनापति हाँसू को फौज रोक देने का आदेश दिया।

पैदल और शेष घुड़सवार रुक गये। केवल सौ घुड़सवारों की एक

टुकड़ी तेजी से आगे बढ़ती जा रही थी। जब वे सब लगभग आधा कोस आगे बढ़ गये तो शीघ्रता से शेर खाँ खोवाज खाँ के पास पहुँचा। उसने चारों ओर गौर से देखते हुए कहा—'तुम घुड़सवारों की इस टुकड़ी को लेकर दायीं ओर भागना। दुश्मन की फौज तुम्हारे पीछे भागेगी, लेकिन मुकाबला न करना। बस तेजी से आगे बढ़ते जाना।"

"जो हुक्म। ऐसा ही करूँगा।"

"एक बात और। जब दुश्मन की फौज वापस मुड़े तो तुम भी उसे खदेड़ते हुए वापस लौटना। जाओ।"

सरदार का हुक्म पाकर अश्वारोहियों की एक टुकड़ी हवा में धूल उड़ाती घाटी की दायीं ओर भागी। आगे-आगे खोवाज खाँ पवन की चाल में उड़ता जा रहा था।

दूसरी ओर गौड़ सेना का प्रमुख सरदार इब्राहीम खाँ पूर्वी घाटी के सिरे पर खड़ा, वीरता का वह चमत्कार देखने के लिए लालायित था जिसने एक साधारण खान को शेर बना दिया था। वह शेर खाँ की बुद्धि का करिश्मा देखने के लिए आतुर था जिसके आधार पर वह भारत-सम्राट होने का स्वप्न देखने लगा था। मुड़मुड़ कर पीछे खड़ी अपनी विशाल सेना को देख गर्व से मुस्कुरा देता और जमाल से बातें करने लग जाता। शेर खाँ की वीरता से परिचित होने के कारण मन में तो जमाल अत्यन्त भयभीत था, पर ऊपर कृत्रिम प्रसन्नता प्रकट कर रहा था। उसे यही चिन्ता खाये जा रही थी कि यदि शेर खाँ जीत गया तो मैं कहीं का न रहूँगा। हिन्दुस्तान का बादशाह होने की आशा नष्ट हो ही चुकी है अपना राज्य भी निकल जायगा। फिर बैठने के लिए कहीं तिल भर जगह नहीं रह जायगी।

बातें करते-करते सहसा इब्राहीम चौंक उठा। उसने देखा—शेर खाँ की फौज दायीं ओर तेजी से भागी जा रही है। गर्द-गुबार में छिट-फुट सैनिकों की संख्या का अनुमान लगाना उसके लिए असम्भव था।

उसने मुड़कर तेजी से अपनी फौज को अफगानों का पीछा करने का हुक्म दिया और स्वयं फुर्ती से आगे बढ़ा।

गौड़ की फौज दौड़ पड़ी। इब्राहीम शत्रु के भागने पर प्रसन्न था। उसे पूर्ण विश्वास था कि शेर खाँ गौड़ की विशाल सेना के सामने सीना नहीं दिखा सकेगा।

अफगानों का पीछा करते-करते इब्राहीम अपनी फौज के साथ कोसों दूर निकल गया। वह तेजी से आगे बढ़ता जा रहा था। सहसा ठिठक कर रुकते हुए उसने विस्मित नेत्रों से पीछे मुड़कर देखा कि शेर खाँ के नेतृत्व में अफगानों की एक विशाल सेना मृत्यु के समान उसकी ओर बढ़ती आ रही है। इब्राहीम के रोम-रोम भय से फड़फड़ा उठे। गौड़ सेना असमञ्जस में पड़ गयी। दूसरी ओर भागते अश्वारोहियों का दल भी बड़ी जोर-शोर से वापस लौट रहा था। बकरी की भाँति गौड़ सेना सिंहों से घिर चुकी थी।

अपनी दीन अवस्था देखकर इब्राहीम आँख मूँद कर शत्रु से जूझ पड़ा। एक दो घण्टे में ही गौड़-सेना का व्यूह भङ्ग हो गया। इब्राहीम व्याकुल हो गया। इसके पहले कि वह कोई आज्ञा दे पाता, उसके सीने में शेर खाँ की तलवार आर-पार हो गयी। लड़खड़ाकर वह भूमि पर गिर पड़ा और दूसरे ही क्षण उसके प्राण पखेरू उड़ गये।

सेनापति के मरते ही गौड़ सेना के पैर उखड़ गये और वह सिर पर पैर रखकर भाग खड़ी हुई। अफगान सैनिकों में नया जोश आ गया।

सहसा शेर खाँ को सामने जलाल खाँ आता दिखायी पड़ा। उसके हाथ में जमाल खाँ का कटा सिर था जिसे देखते ही शेर खाँ क्षण-भर के लिए विचलित हो उठा। उसके नेत्रों के समक्ष मासूम मेहर का कोमल चेहरा घूम उठा। अब उसका क्या होगा? तीन-चार वर्ष बीते शादी हुए और आज वह विधवा हो गयी। लाद को जब यह बात

मालूम होगी तो उसके कलेजे पर साँप लोट जायगा। वह अपने जिगर के टुकड़े की तरह मेहर को प्यार करती है। परन्तु इसके अलावा और कोई रास्ता भी तो नहीं था। कुछ भी हो जलाल ने ठीक ही किया। उन्नति-पथ पर अगर अपना बेटा भी इस तरह रोड़ा बनकर खड़ा हो जाय तो उसका सिर चाक कर देना कोई गुनाह न होगा। मेहर अभी जवान है। उसके जीवन के समस्त द्वार खुले हैं। उसके वर्त्तमान दुःख को देखते हुए यह छूट अवश्य दी जा सकती है कि मर्यादानुकूल इच्छानुसार वह कोई भी रास्ता अपना ले। इन सब समस्याओं का समाधान भविष्य के हाथों सौंप कर उसने लापरवाही से जमाल खाँ लोहानी के कटे सिर की ओर देखा फिर अपने वीर पुत्र की ओर देखते हुए हर्ष से चीख उठा—"शाबाश!" और उसे गले लगा लिया। जलाल हर्ष और गौरव से भर उठा। आदिल अभी आया न था। उसे लक्ष्य कर शेर खाँ ने पूछा—हैदर आ गया।

"जी हाँ!"

"कब आया!"

"एक घड़ी पहले"–शेर खाँ के साथ आगे बढ़ते हुए जलाल बोला।

"ठीक है; और आदिल?"

"उनकी तबियत ठीक नहीं है।"

"तबियत ठीक नहीं, क्या हुआ? खैर, तुम आगे बढ़ो। सबसे आगे जाओ।"

शेर खाँ का हृदय आदिल की बीमारी से क्षण-भर के लिए चिन्तित हुआ, परन्तु यह चिन्ता करने का काम न था। उसने मन को समझा लिया और छोटे बेटे की ओर देखा। पिता का आशय समझ कर जलाल फुरती से आगे आया।

गौड़ की राजधानी में एक प्रलयकारी तूफान वेग से प्रविष्ट हो रहा था।

कुछ ही देर में डंके की चोट पर शेर खाँ ने विशाल गौड़ प्रदेश पर अपना आधिपत्य जमा लिया। गौड़ का बादशाह महमूदशाह दुम दबाकर भाग खड़ा हुआ। चारों ओर शेर खाँ की तूती बोल रही थी। उसकी वीरता ने सबकी आँखें चकाचौंध कर दीं। गौड़-निवासी अफगान इस वीर के दर्शनार्थ और उसे उपहार रूप में अपना हार्दिक प्रेम प्रकट करने के लिए उमड़ पड़े। हिन्दू भय से अपने घरों में दुबक रहे।

शेर खाँ के चेहरे पर प्रसन्नता से अधिक गम्भीरता थी। इस विजय ने उसकी आशाओं का विशाल द्वार खोल दिया था। किस्मत के अगले चौराहे पर दिल्ली का सिंहासन था।

शेर खाँ के सम्मान में शाही दरबार की अभूतपूर्व सजावट की गयी। संध्या समय दूर-दूर से आये प्रतिष्ठित नागरिकों ने अपनी शुभ-कामनाएँ समर्पित करके अपने वर्तमान सुलतान की प्रतिष्ठा बढ़ायी।

दरबार की सजावट अत्यन्त आकर्षक थी। दीवारों पर चारों ओर बारीक और कलात्मक नक्काशी की गयी थी। छतों पर झाड़-फानूस लटक रहे थे। शेर खाँ रत्न-जटित चौकी पर बैठा था। दोनों ओर दरबारियों की पंक्तियाँ कुछ खड़ी और कुछ बैठी थीं। अपने बगल में बैठे सरदारों से कुछ बातें करते-करते रह-रहकर शेर खाँ खिलखिलाकर हँस पड़ता।

थोड़ी ही देर में दरबार अतिथियों से भर गया। शेर खाँ को उपहार प्रदान किये जाने लगे। वह मुस्कुराकर सबका स्वागत कर रहा था। विजयी सेनाधिपति को भेंट देने की प्राचीन परम्परा अफगानों में भी प्रचलित थी।

सहसा खड़ाऊँ का स्वर वातावरण में गूँज उठा। सबकी दृष्टि स्वर की दिशा में दौड़ गयी। शेर खाँ विस्मय से भर गया। कुछ वर्षों पूर्व चुनार में इसी स्वर ने उसके रोंगटे खड़े कर दिये थे। उसने आँखें

उठायीं। देखा एक त्रिपुण्डधारी पीताम्बर ओढ़े, लम्बा-चौड़ा व्यक्ति चला आ रहा था। उसका चेहरा लाल और केश लम्बे थे। मंथर गति से पैर बढ़ाता हुआ वह चला आ रहा था।

शेर खाँ समझ गया कि यह कोई विद्वान् ब्राह्मण है। उसके हृदय में सरल ब्राह्मणों के प्रति आदर था। उसने सुना था हिन्दुस्तान में किसी चाणक्य नामी ब्राह्मण के वंशज ने ही देश की राजनैतिक नींव मजबूत रखी थी। यही ब्राह्मण तो देश की पतवार हैं। कितने आघात हुए इन पर। तलवारों ने इनका मार्ग रोकना चाहा, परन्तु क्या यह रुक सके? इनके संकेत पर देश में युगान्तकारी परिवर्तन होता रहा।

शेर खाँ उठ खड़ा हुआ। सचमुच वह ब्राह्मण था। सरदार ने नम्रतापूर्वक सिर झुकाकर अभिवादन किया और बोला—"तशरीफ लाइये"—कहकर उसने आगत ब्राह्मण को बैठने के लिए आसन का संकेत किया।

"सरदार शेर खाँ की जय हो"—तेजपूर्ण दृष्टि से शेर खाँ की ओर देखते हुए ब्राह्मण बोला और व्याघ्र-चर्म बिछी चौकी पर आसीन हुआ।

शेर खाँ कुछ कहने ही जा रहा था कि अचानक किसी रमणी के नूपुरों की मधुर झङ्कार उसके कानों से जा टकरायी। यह दूसरा विस्मय था। कौन है यह? आकाश की हूर, अप्सरा? उसकी विसुप्त कामनाएँ जाग उठीं। मन के पट पर लाद का चित्र उपस्थित हो गया। शेर खाँ ने इसहाक की ओर देखकर पूछा—"कौन आ रहा है?"

"शायद सरदार के लिए कोई नायाब तोहफा लाया जा रहा हो"—इसहाक ने अनुमान लगाया। उसका अन्दाज सही था।

"तोहफा! यह कोई औरत है? सिपाही इसे यहाँ क्यों ला रहे हैं?"—शेर खाँ ने पूछा।

"महाराज, यह गौड़-प्रदेश की सर्वाधिक सुन्दरी नर्त्तकी है"—एक दरबारी बोला।

"हो, लेकिन उसे यहाँ क्यों लाया जा रहा है?"

"संसार के सभी जीव जब हुजूर के आश्रय में हैं तो यह गुलबदन इन कदमों से कैसे वञ्चित रह सकती है?"

शेर खाँ एकटक उसकी ओर देखता रहा। अगल-बगल दो सैनिकों के साथ एक अत्यन्त सुन्दरी युवती नर्त्तकी ने प्रवेश किया। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो साक्षात रति पृथ्वी पर उतर आयी हो।

"कौन हो तुम?"

"एक नाचीज बाँदी।"

"तुम्हारा नाम?"

नर्त्तकी लज्जा से अवनत मुख किये मौन रही। उसे चुप देखकर शेर खाँ ने फिर पूछा—"क्यों आयी हो यहाँ?"

नर्त्तकी फिर भी चुप रही।

"परवरदिगार, यह लौंडी सरकार की खिदमत में रहना चाहती है"—एक उच्च सरदार बोला।

"क्यों, यह ठीक है?"

"जी आलमपनाह।"

शेर खाँ मुस्कुराया। नर्त्तकी के रोम-रोम से सौन्दर्य छन रहा था। उसकी लटें उसके कपोलों का चुम्बन कर थिरकती हुई पवन में लहरा उठती थीं। मदभरी आँखों से मानो कामदेव के तीर बरस रहे हों। उन्मत्त सिंहनी की भाँति उसकी कृश कटि, मछलियों की भाँति चञ्चल पुतलियाँ और कमल की पंखुड़ियों से कोमल होठों ने दरबारियों के हृदय जीत लिये। सभी उसकी ओर मुग्धवत् देखते रह गये। रेशमी वस्त्रों के अन्दर सौकुमार्य-मण्डित उसका कनकाङ्ग अनङ्ग-विभूषित था।

ऐसा प्रतीत होता मानो विश्व की सुन्दरता इस पुतली में निहित हो गयी हो। हाथ बाँधे वह पृथ्वी की ओर निहार रही थी।

हैदर पास ही खड़ा था। वह उसके अनुपम सौन्दर्य पर चकित था। उसने ऐसी रमणीक रमणी अब तक देखी न थी। खुदा ने मानो अपने हाथों बनाया हो उसे। गौड़ की मिट्टी में इतना नूर !

शेर खाँ मन-ही-मन मुस्कुरा रहा था। रूप की साक्षात प्रतिमा उसके सम्मुख खड़ी थी। यौवन-सागर की इतनी उत्ताल तरंगे उसने कभी नहीं देखी थीं।

भावनाओं की उड़ान भरते-भरते सहसा शेर खाँ को हुमायूँ का ध्यान आया। रूप के इस भँवर में ही पड़कर चंगेज का खून ठण्डा पड़ता जा रहा है। शत्रु की कमजोरी अपनाना पराजय-गरल ग्रहण करना है। शेर खाँ ने घूर कर नर्त्तकी की ओर देखा। मन-ही-मन बोला—यह ज़हर हुमायूँ के होठों का स्वाद जरूर बढ़ायेगा। फिर वह मुड़ते हुए हैदर से पुनः कड़कती आवाज में पूछ बैठा—"क्यों लाये हो ज़हर की इस पुड़िया को यहाँ, मेरे पास ?"

"परवरदिगार !"—हैदर घबराया।

"ले जाओ इसे हुमायूँ के पास ताकि वह साकी, शराब के एक नये तूफान में खौल उठे।"

"जो हुक्म सुलतान का।"

हैदर के संकेत पर नर्त्तकी वापस लौट गयी।

थोड़ी देर तक दरबारियों से बात-चीत करने के बात शेर खाँ उठ खड़ा हुआ। नमाज पढ़ने का समय हो रहा था। अब वह अपने को सुलतान समझने लगा था। लोगों को आश्चर्य हो रहा था, शेर खाँ नवागत ब्राह्मण को साथ लेकर अपने खेमे में चला गया।

———

११

नयी जिन्दगी का आरम्भ

मेहर विधवा हो गयी। सौभाग्य का सूर्य उगते ही अस्त हो गया। इस अप्रत्याशित वज्रपात से निपीड़ित मेहर पाले से उध्वस्त लता की भाँति निर्जीव और कान्तिहत हो गयी। उसने पति की मृत्यु पर साधारण स्त्रियों की भाँति न तो हल्ला मचाया और न रोकर घर को सिर पर उठा लिया। इसके विपरीत वह मौन हो गयी। अब कोई उसे बाहर निकलते न देख पाता। वह दिन-रात अपने कमरे में पड़ी रहती। जब किसी काम की आवश्यकता होती तब बाहर आती। मौन ही अब उसके दुःखों का आवरण बन गया था जिसके नीचे भयानक वेदना स्वरहीन भाषा में आर्तनाद कर रही थी। इस भाषा को देखने वालों की आँखें समझ लेतीं, हृदय पढ़ लेता और लोग उसके दुर्भाग्य की क्रूर लीला देख स्वयं भी दुःख से भर जाते।

लाद ने मेहर की इस विपत्ति का समाचार सुना तो उसे चुनार बुलवा लिया। चाची को पाकर एक बार तो मेहर खूब खुलकर रोयी, उसके दिल का जमा हुआ दर्द बह निकला। लाद ने भी सांत्वना दे उसे शान्त किया। यहाँ आकर मेहर का जी कुछ हलका अवश्य हुआ, किन्तु पति और कन्या दोनों की स्मृतियाँ आ-आकर उसके घावों को कुरेद कर हरा कर देतीं। तब वह फिर उसी वेदना में डूब उठती। परन्तु विधाता बड़ा खेलाड़ी है। वह इस संसार की नाट्यशाला का सूत्रधार होने से अपने पात्रों को मनमाना नाच नचाता है। उसने समय

नाम की ऐसी औषधि बनायी है जो दिल के समस्त घावों को भर देती है। चुनार आकर मेहर पिछली चोटों को भूल-सी चली। इस भूल जाने के सुधार क्रम में जलाल का लगाव कुछ कम महत्वपूर्ण न था।

कुछ दिन गौड़ में रहने के बाद पिता की आज्ञा से चुनार लौट आने पर जलाल ने वहाँ मेहर की जो दशा देखी उससे उसका हृदय विचलित हो उठा और आँखें भर आयीं। कली खिलने के पूर्व ही मुर्झा गयी! भाग्य का इतना भीषण कुचक्र! कई दिनों तक जलाल मेहर से मिलने का प्रयास करता रहा, पर मुलाकात न कर सका। इसके दो कारण थे, एक तो मेहर बाहर निकलती कम थी दूसरे जलाल जब उसके मृत पति का स्मरण कर अपने हाथों की ओर देखता तो उसके नेत्रों के समक्ष जमाल खाँ लोहानी का खून से सना कटा सिर नाच उठता और मेहर के कमरे की ओर जाते-जाते उसके पैर एकाएक वापस मुड़ जाते।

लाद भी अब जलाल से खिची-खिची रहने लगी थी। उसने यह भली भाँति परख लिया था कि जलाल के सभी गुण पिता की ही तरह हैं। उनके हृदय में प्रेम का कोई महत्व नहीं है। राजनीतिक स्वार्थ की सिद्धि के लिए ये दोनों पिता-पुत्र कुछ भी कर सकते हैं। रूप और यौवन इनके हृदय पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकते। तलवारों की झंकार सुनने का अभ्यस्त सैनिक कोयल की तान की ओर क्यों आकृष्ट होगा? एक बार तो लाद ने यह निश्चय किया था कि मेहर का जलाल से दोबारा निकाह करा दिया जाय, क्योंकि वह अपनी प्यारी भतीजी को अब अपनी आँखों से दूर करना नहीं चाहती थी, परन्तु जलाल को ही मेहर के समस्त दुर्भाग्य का कारण और घृणा का पात्र समझ कर वह कुछ दब जाती। जलाल की उदासीनता और युद्धप्रियता देखकर उसका मन और खटक गया। बहुत कुछ आगा-पीछा सोचकर उसने मेहर का निकाह आदिल से ही कर देने का निश्चय किया। वह नहीं चाहती थी

कि यौवन की जिस आग में उसका सौन्दर्य और कोमल भावनाएँ झुलस रही हैं, उसमें मेहर भी फँसकर जीवन भर के लिए आहें भरती रह जाय।

रमणी के जीवन में यौवन वह मधुमय वसन्त है जब शरीर का कानन कण-कण से विकसित हो फूट उठता है। इस शारीरिक विकास की पूर्णता के साथ मन भी उसी वेग से उफन कर उठता है। यौवन वह सरिता है जिसके दोनों कगार शरीर और मन हैं। उनमें भरी हुई जब यह उत्ताल वेगवती प्रेमरूपी वायु के झकोरे पाकर अपना प्रचण्ड रूप ग्रहण करती है तब उसमें संयम, लज्जा, संकोच, मर्यादा आदि बहते काष्ठ और तृण-गुल्मों की भाँति आवर्तों में पड़ गर्भगत हो जाते हैं। उस उद्दाम प्रवाह को कौन रोक सकता है?

लाद वैसी ही भरी बरसात की नदी थी जिसमें कामनाओं की भँवरें सहस्र-सहस्र संख्या में प्रतिपल उठतीं। प्रेम के झकोरों में वह अशान्त हो हिल्लोलित हो रही थी। बदले में अपने प्रणयी और अब पति शेर खाँ से भी उसी प्रचण्डता की आशा करती थी। किन्तु शेर खाँ उसकी कामनाओं के लिए दुराशा की मूर्ति था। उसमें न तो यौवन की उष्णता शेष थी, न वह शक्ति जो युवतियों को अपेक्षित होती है। शेर खाँ आता तो प्रेम से सनी बातों, आलिंगन और चुम्बनों तथा दम्पतियों के अनेक प्रपञ्चों के स्थान पर किले जीतने, युद्ध करने, नयी योजनाएँ बनाये और अपना स्वतंत्र राज्य स्थापित करने की ही चर्चा करता। कुछ दिनों तक ये बातें लाद के लिए आकर्षक अवश्य रहीं, किन्तु शीघ्र ही वे उसके लिए नीरस और सारहीन हो गयीं। उस रस-शून्य रक्तपात और षडयंत्रों के जाल से वह बचने का प्रयास करती। इसे शेर खाँ ने भी लक्ष्य किया, परन्तु वह चुप ही रहा।

इस दृष्टिकोण से जलाल का स्वभाव भी पिता की ही तरह था। लाद के पास वह जब बैठता अपने पिता की विजय, युद्ध और आक्रमणों

के सिवाय कोई चर्चा नहीं करता। लाद ने कई बार प्रयास किया कि वह उसके विवाह आदि विषयों पर बात-चीत करे। पर ज्योंही वह शुरू करना चाहती, जलाल एकाएक गम्भीर हो जाता और उठते हुए कोई न कोई बहाना बनाकर कमरे से बाहर चला आता। तब क्या वह स्वयं मेहर से बचना चाहता था?

जलाल समझता था सब कुछ, पर चुप था। इसका एक कारण था। अब उसमें क्षणिक आवेश और उच्छृङ्खलता की जगह दृढ़ता और गम्भीरता आ रही थी। उसने काफी दुनिया देख ली थी। प्रेम और जवानी के क्षणिक आवेश में कोई अनुचित कदम न उठ जाय, इसका उसे सदा ध्यान बना रहता। यद्यपि हृदय में मेहर की मनोहर मूर्त्ति सदैव नाचा करती, परन्तु यह जाने बिना कि मेहर अब भी उसे प्यार करती है या नहीं, उसे अपनी भावना किसी के सामने व्यक्त करने का साहस न होता। कभी-कभी उसे स्वयं इस बात की आशंका हो जाती कि कहीं मेहर को पाने के ही लिए तो उसने जान-बूझकर जमाल खाँ को अपने रास्ते से हटा दिया है। यदि यह न हो और मेहर यही गलत धारणा बनाकर बैठी हो, तब? तब वह उसके सामने कैसे जाय?

लेकिन यह स्थिति भी कब तक चलेगी? वह उससे कब तक बचता फिरेगा? उसे आज ही मेहर के पास चल कर उसके विचारों की थाह लेनी चाहिये। यदि वह उसके सम्बन्ध में कुछ गलत धारणा बना कर बैठी हो तो उसके मन से यह सन्देह हटा देना चाहिये, तभी वह उसे प्राप्त कर सकता है। इसके लिए मेहर का हृदय अपनी ओर से साफ कर देना नितान्त जरूरी है। तब उससे कब मिला जाय? शाम को, नहीं कुछ रात गये? जब वह अकेली रहे, अपने कमरे में। परन्तु क्या यह उचित होगा?

जलाल खाँ अपने कमरे में बैठा घंटों मेहर के विषय में सोच-विचार

किया करता। विवाह होने के बाद जब से वह बिहार गयी तब से उससे खुल कर बातें न हुईं। बरसों बीत गये। अब तो वह काफी बदल गयी होगी। न जाने मन में वह क्या सोचे बैठे होगी। तीन दिन यहाँ आये भी बीत गये, पर उससे वह मिलने नहीं गया। कहीं वह यह न समझ ले कि उसको विधवा बनाकर जलाल ने अपनी पूर्व ईर्षा का बदला चुकाया है। छिः! यदि उसने ऐसी गाँठ बाँध ही ली हो तो उसमें मेरा क्या दोष? फिर भी उससे मुलाकात तो कर ही लेनी चाहिये। ऐसे समय में तो पराया आदमी भी सामने आता है, दुख-सुख सुनता और ढाढ़स बँधाता है। मेहर से मिलने का दृढ़ निश्चय करके जलाल खाँ उठ खड़ा हुआ। दरवाजे की ओर मुड़ा और आगे बढ़ने ही वाला था कि पैर को मानो काठ मार गया। पलकें उठी रह गयीं और हृदय तड़प उठा। रण-क्षेत्र का विजेता जीवन-क्षेत्र में एक युवती से मात खा रहा था। उसने देखा कि मेहर उसके सामने खड़ी भूमि की ओर एक टक निहार रही थी। उसका चेहरा बिलकुल भावशून्य था, नीरव और निःस्पन्द। यद्यपि वह उदास थी, किन्तु उसका शरीर पहले से भी सुन्दर और आकर्षक हो गया था। वह उसकी शोभा पर मुग्ध हो गया।

किन्तु उसकी समझ में न आया कि क्या करे, क्या न करे। उसे ऐसा प्रतीत हुआ मानो हृदय के एक कोने में सुलगती चिनगारी एकाएक धधक कर जल उठी है। धीरे-धीरे उसने अपने को सम्हाला। भारी कदमों से आगे बढ़ते हुए बोला—"आओ, रुक क्यों गयीं?"

मेहर ने दृष्टि उठाकर जलाल की ओर देखा और फिर पलकें झुक गयीं। ऐसा प्रतीत होता मानो संसार की समस्त करुणा उसकी आँखों में समा गयी हो। वह ज्यों-की-त्यों खड़ी रही। कुछ रुककर बोली—"नावक्त आपको तकलीफ दिया। गुस्ताखी...।"

"यह तुम क्या कहती हो"—जलाल बीच ही में बोल उठा। हाथ

मलते हुए शीघ्रता से बोला—"मैं तो खुद तुमसे मिलने आ रहा था। कई दिनों से तुमसे मिलना चाहता था, परन्तु झंझट ऐसे थे कि...!"

"मेहरबानी आपकी—" मेहर ने उसी गम्भीरता से कहा। जलाल उसके उत्तर से कुछ भी न भाँप पाया कि मेहर उस पर व्यंग कर रही है अथवा सही अर्थों में जवाब दे रही है। उसने उठ कर एक गद्‌दार चौकी की ओर संकेत कर कहा—"बैठ जाओ, कब तक खड़ी रहोगी।"

मेहर ने जैसे कुछ कहना चाहा, परन्तु वह कह न सकी। चुप-चाप चौकी पर जा बैठी। जलाल ने स्पष्ट देखा—उसकी पलकों पर अश्रु बिन्दु तैर रहे थे। यह युवती वास्तव में अत्यन्त दुखी है। भला विधवा हो जाने पर कौन स्त्री दुखी न होगी। तब यह मेरे पास क्यों आयी? क्या मुझे बेधने? मुझ पर छींटा कसने? अपने कृत्यों के स्मरण मात्र से जलाल का हृदय भयभीत हो दब गया। उसका कण्ठ फूट न सका।

मनुष्य का हृदय स्वयं उसके आचरण की कसौटी है। संसार से अपना पाप छिपाया जा सकता है, परन्तु अपने से नहीं। यही मनुष्य की सबसे बड़ी दुर्बलता है। चेहरा आत्मा का दर्पण है। उस पर हृदय का प्रतिविम्ब चमकता रहता है। जलाल बहुत देर तक अपने बचाव के लिए पैंतरा ढूँढ़ रहा था, जब कोई युक्ति न मिली तो स्वर को मुलायम कर सहानुभूति भरे कण्ठ से बोला—"राजनीति बड़ी कठोर शिला है मेहर। इससे टकरा कर आदमी कामयाब होने पर बादशाह बन कर जन्नत का सुख भोगता है और नाकामयाब होने पर जान से हाथ धो बैठता है। इसमें किसी का कसूर नहीं। जो होना था, हो गया। अब उन बातों को भूल जाओ।"

"मैं क्या करूँ? दिल को बहुत समझाती हूँ, पर वह जैसे कुछ सुनना नहीं चाहता। जो कुछ मार बदकिस्मती की पड़ी, वह तो थी ही, उनकी एक निशानी थी लड़की, वह भी छिन गयी। कम-से-कम

वह मुँहबोलारू तो थी। उससे ही बोल कर दुःख काट लेती। पर अब तो वह भी न रह गयी। मैं क्या करूँ...किधर जाऊँ? कहकर मेहर सिसक उठी। उसकी आँखों से बड़े-बड़े आँसू मोतियों की भाँति टूट-टूट कर गिरने लगे।

जलाल काँप उठा। वास्तव में उसने अपने पिता की महत्वाकांक्षा की सिद्धि के लिए मेहर का कितना बड़ा अहित कर दिया है। भले मेहर इसे अपनी जबान से न कहे, परन्तु क्या वह स्वयं इससे इनकार कर सकता है? मनुष्य सारे जगत को धोखा दे सकता है, परन्तु अपनी आत्मा को नहीं। कोमल स्वर में बोला—'अल्लाह जानता है, जो सदमा मुझपर गुजर रहा है; परन्तु क्या करूँ, मैं परबश हूँ। और तो मैं ज्यादा नहीं कह सकता, केवल इतना ही कहूँगा कि मुझ पर यकीन रखो। मुझसे तुम्हारा नुकसान कभी नहीं हो सकता। मैं अपने खून से तुम्हारा दुःख धो सकूँ, बस अब यही अरमान है...।' कहते-कहते उसका हृदय द्रवित हो उठा। उसकी वाणी दीपशिखा की भाँति काँपने लगी—कण्ठ अवरुद्ध हो जाने के कारण वह अधिक न बोल सका और चुप हो गया।

मेहर ने लक्ष्य किया, जलाल वास्तव में दुःखी है। उसे जमाल के प्रति सहानुभूति हुई। जब से उसने सुना था कि उसका विवाह जलाल से न होकर जमाल खाँ लोहानी से होगा, तभी से उसका हृदय बड़े वेग से जलाल के प्रति खींचने लगा। कहा जाता है कि जो मछली जाल में नहीं फँसती उसे ही शिकारी सबसे बड़ा समझता है, यही स्थिति मेहर की भी थी। जलाल को वह एक दुर्लभ प्रसाद समझती, किन्तु उसने उड़ते-उड़ते किन्हीं के मुख से यह भी सुना था कि जलाल ने ही उसके पति का गला काट डाला और वह वास्तव में लड़ाई के मैदान में न मरे।

यद्यपि शेर खाँ, लाद मलका और अन्य निकट के लोग सब यही कहते थे कि उसका शौहर मैदान में वीरतापूर्वक लड़ता हुआ मारा गया, फिर भी उसे विश्वास न होता क्योंकि कुछ लोगों ने जलाल द्वारा उसका गला काटने की खबर भी उड़ा दी थी। मेहर चकित थी, किस बात पर विश्वास करे? जलाल पर दृष्टि जाते ही उसकी सरलता, भोलापन और ईमानदारी का स्मरण हो जाता। तब उसे विश्वास हो जाता कि जलाल कम-से-कम उसके साथ ऐसा क्रूर उपहास नहीं कर सकता। इस विचार से उसे शान्ति मिलती, तब जलाल के प्रति उसका सोया प्रेम जाग कर मचलने लगता। आज भी वह इसी प्रेम के मचल उठने के कारण अपने पर नियंत्रण न रख पायी और यहाँ तक चली आयी।

दोपहर का वक्त था। सब सो रहे थे। सिवा बाँदी और दासियों के कोई दिखायी न पड़ता था। जलाल का कमरा गंगा-तट की ओर था जो बिलकुल एकान्त पड़ता। जैसे कुछ स्मरण हो आया हो, मेहर ने याद करते हुए कहा—"हाँ, मैं तो भूल गयी अपनी दुख भरी बातों में। सुना है, अब हम लोगों को भारकुण्डा किले में जाना होगा?'

'सुना तो मैंने भी। अब्बा हुजूर का यही हुक्म है; क्या किया जायगा।'

'आप भी चल रहे हैं?'—साहस कर मेहर ने पूछा, परन्तु जैसे यह प्रश्न करके वह दब-सी गयी। उसने क्यों पूछा? वह चले या न चले, उससे मतलब? तब उसे स्पष्ट ज्ञात हो गया जैसे उसका अधैर्य जलाल पर प्रकट हो गया।

'देखो, ठीक कह नहीं सकता।'

मेहर उदास हो गयी। उसका मुँह लटक गया। उसे प्रसन्न करने के विचार से जलाल बोला—'कोई हर्ज नहीं। बड़ी बढ़िया जगह है,

मैं हो आया हूँ। किला जंगल के बीच है। चारो ओर खाई है। खूब निराली जगह है, शिकार खेलने काबिल। बगल में ही नदी बहती है...।'

परन्तु मेहर का ध्यान उस नदी-पहाड़ पर न था। जलाल वहाँ नहीं चलेगा? तब क्या उसे वहाँ अकेले ही जाना होगा लाद चाची वगैरह के साथ। चाची तो जैसे उसे अब भी बच्ची समझे बैठी हैं। उनकी तवज्जह से तो वह परेशान है। इतनी हमदर्दी भी क्या? जब देखो वही बातें। भारकुण्डा में जाकर तो जिन्दगी सचमुच भार हो जायगी।

उसे चिन्ताग्रस्त देखकर जलाल बोला --'जिन्दगी की सफर बहुत लम्बी है मेहर! अगर बुरा न मानो तो एक बात कहूँ?

'बुरा क्यों मानूँगी जलाल भाई। अब तो तुम्हीं लोगों का आसरा है। जैसे कहोगे, करूँगी...।'

उसकी यह बातें औपचारिक ही थीं जिनसे कुछ विशेष अर्थ न निकलता था, फिर भी जलाल कुछ प्रसन्न न हुआ। बोला—जिन्दगी का रास्ता लम्बा है और तुम्हारी उमर बिलकुल नादान। इस रास्ते पर चुपचाप जिन्दगी भर अकेले चलने में रास्ता कटना मुश्किल हो जायगा। हर साँस कठिन हो जायगी। इसलिए उसे सुन्दर बनाने के लिए एक साथी का होना निहायत जरूरी है। तुम खुद समझदार हो। जिसे दिल चाहे...इससे आराम से रास्ता कट जायगा। नहीं तो रोते-रोते...।'

'यह तुम बहुत ठीक कहते हो भाईजान। मगर अभी मैं क्या कह सकती हूँ। मेरा गम अभी दूर नहीं हुआ है। फिर तुम तो हो ही... जैसी सलाह दोगे, जो कहोगे, उसे मानूँगी ही...।'

जलाल हर्ष से उछल पड़ा। इतनी देर बाद वह मेहर की एक

नाड़ी पकड़ पाया। दिल बाग-बाग हो गया। मनकी प्रसन्नता भीतर ही दबाकर बोला—'तो भारकुण्डा की तैयारी है न ?'

'चलना ही होगा। चाची भी तैयार हैं। कल सबेरे कूच करना होगा...।'

"अब्बाजान ने तो मुझे वापस बुलाया है। फिर भी तुम्हारे साथ भारकुण्डा तक चलूँगा...तुम लोगों को पहुँचा देने के लिए।'

वास्तव में जलाल मेहर का सान्निध्य चाहता था। जितने दिन उसके सहवास में बीतें उतना ही अच्छा। शायद मेहर पिघल गया। फिर वहाँ जंगली वातावरण में न जाने कैसी बीते। इसलिए उसने भी साथ चलने का निश्चय किया। घण्टे भर जलाल के कमरे में रुक कर जब मेहर उससे विदा माँग कर बाहर निकली तब उसका दिल काफी हल्का था। उसमें जैसे कुछ नयी ताजगी आ गयी थी। जीवन की लालसा फिर प्रबल हो गयी। इसमें कितना प्रभाव जलाल का है, मेहर से छिपा न रह सका।

दूसरे दिन जब भारकुण्डा के लिए कूच होने लगा तो शेर खाँ द्वारा वापस बुलाये जाने पर भी जलाल मेहर की चितवन से घायल हो, उसके निकट रहने, उससे बातें करने और इसी बहाने उससे एकान्त में मिलने की लालच से उन्हें भारकुण्डा तक पहुँचाने चला गया। यद्यपि उसके इस कार्य में प्रकट में सुरक्षा का कर्त्तव्य ही मुख्य था फिर भी उसका रहस्य न तो लाद से छिपा रह सका और न स्वयं मेहर से।

मेहर भी इस मिलन से प्रसन्न ही थी।

१२
एक तारा डूबता है : दूसरा उगता है

गुजरात के बादशाह बहादुर शाह के पलायित होते ही मंसौर दुर्ग पर मुगल पताका लहर उठी। अपनी इस महान् विजय से तरुण-मुगल-सम्राट हुमायूँ आनन्द-विभोर हो गया।

सन्ध्या होते ही दीपावलियों के तीव्र प्रकाश में मंसौर दुर्ग गगनाञ्चल में प्रकाशमान नक्षत्र की भाँति जगमगा उठा। जन-कलरव और तुमुल हर्ष-ध्वनि से वातावरण मुखरित हो रहा था। युद्ध में थके सैनिक सुरापान करते विजय समारोह मना रहे थे। सभी जहाँ-तहाँ बिखरे पड़े थे।

धीरे-धीरे रात चढ़ने लगी। पर हुमायूँ की आँखों में नींद कहाँ! जब से उसे यह पता चला कि बहादुरशाह का अक्षय-भण्डार किले में ऐसी जगह है जिसका ज्ञान बहादुरशाह, आलम हुसैन और कुछ प्रमुख सरदारों के अतिरिक्त किसी को नहीं, तभी से उसकी चिन्ता बढ़ गयी। इस असीम धन-राशि को हस्तगत् किये बिना विजय अपूर्ण रह जायगी।

बहादुरशाह और उसके सभी सहायक तो भाग गये, लेकिन आलम हुसैन मुगलों की कैद में था। कड़ी-से-कड़ी यातनाएँ दिये जाने पर भी उसने खजाने का पता बताना स्वीकार नहीं किया।

चिन्तित मुद्रा में हुमायूँ दुर्ग के विशाल सुसज्जित प्रकोष्ठ में मखमल बिछे फर्श पर इधर-उधर टहल रहा था। कमरे की दीवारों पर सोने और चाँदी के चौखटों में कलात्मक चित्र टँगे हुए थे। खिड़की और

दरवाजों पर की नक्काशी में लता-बेल और नाना प्रकार के पुष्पों का उभार बीच में दहाड़ते हुए सिंह अथवा छलाँग लगाकर दौड़ती मुद्रा में बारहसिंहों की आकृति खुदी हुई थी। चारो ओर खिड़कियाँ होने से मन्द और सुवासित पवन आनन्दमय वातावरण बना रहा था।

हुमायूँ टहलते-टहलते खिड़की के पास आकर खड़ा हो गया। उसके गुलाबी चेहरे पर सौकुमार्य छलक रहा था। आँखें बड़ी-बड़ी और तेजपूर्ण थीं। प्रशस्त ललाट और सँवारे हुए केश। उसकी नाक लम्बी और होंठ कोमल थे। छोटी दाढ़ी और पतली मूँछों में उसका चेहरा खिले पुष्प के समान लग रहा था। सामान्य डील-डौल वाला हुमायूँ खिड़की के पास से हट कर झूमता हुआ दरवाजे की ओर बढ़ा। पहरेदार को संकेत से कुछ कहकर वह वापस आ रत्नजटित स्वर्ण-सिंहासन पर विराजमान हो गया।

सहसा कोमल कण्ठों की मधुर ध्वनि से वातावरण चञ्चल हो उठा। अनेक भ्रमर-लोचनाएँ, जिनका उन्मुक्त यौवन उत्फुल्ल शतदल सदृश खिला हुआ था, अपने कोमल करों में सुरा-पात्र, कञ्चन भाण्ड, सुवासित गजरे और इरानी वाद्य यन्त्र ले अपने स्वामी के सम्मुख उपस्थित हो नाना प्रकार से उसे रिझातीं, इठलातीं, वाद्य-स्वर पर थिरकती नशीली आँखों की गहराई बढ़ाने लगीं। पर यह क्रीड़ा यौवन पर भी न आ पाई थी कि एक लौंडी ने आकर प्रेम-तरङ्गों पर राजनीतिक कश्ती उछाल दी।

"क्या है ?"—बादशाह ने पूछा।

"मिर्ज़ा तरदी बेग आलमपनाह से मुलाकात की इजाजत चाहते हैं"—लौंडी नतमस्तक हो बोली।

"और कौन हैं साथ में ?"

"जञ्जीरों में जकड़ा एक कैदी और चार सिपाही...।"

पलकें मींच कर हुमायूँ कुछ देर तक विचार-विमग्न रहा, फिर दासियों को हट जाने का संकेत करते हुए लौंडी से बोला—"भेज दो।"

तरदी बेग भारी कदम बढ़ाता सम्राट के सामने उपस्थित हुआ। वह अधेड़ उम्र का कठोर मुखाकृति वाला व्यक्ति था। उसने अपने भाव-शून्य चेहरे पर हर्ष-प्रदर्शित करते हुए सम्राट का अभिवादन किया। फिर अपने पीछे खड़ा, जञ्जीरों में जकड़े कैदी की ओर घूरती दृष्टि डालकर सैनिकों को उसे सम्राट के सामने लाने को संकेत किया।

उनींदी आँखों से हुमायूँ ने कैदी पर लापरवाह दृष्टि डाली, फिर तरदी बेग से पूछा—"क्यों हजरत, इसकी जबान अभी तक नहीं खुली ?"

"आपके हुक्म की देर है आलमपनाह ! तरदी बेग के सामने यह क्या, इसकी रूह भी बोलेगी।"

"लाजवाब ! तो देखते क्या हो मिर्जा, इसकी दोनों आँखों में लाल सलाखें घुसेड़ दो और उनमें मिर्च-नमक डाल दो ताकि इसकी जबान में लगा मुरचा अभी दूर हो जाय।"

"जो हुक्म परवरदिगार, यही करता हूँ।"

अभी करो मिर्जा, मेरे सामने। हुमायूँ को इन कामों में देर पसन्द नहीं।"

सम्राट का हुक्म पाते ही जल्लाद लकड़ी की मूँठ वाला, अग्नि में तपा और भाले के सिरे की तरह नुकीला लाल छड़ अपने बलिष्ठ पंजों में जकड़े कैदी के सामने उपस्थित हो गया। कैदी भय से काँप उठा और उसने आँखें मींच लीं।

"देखते क्या हो ? घुसेड़ दो इसकी आँखों में—" तरदी बेग गरज उठा।

जल्लाद ने दोनों छड़ों के सिरे कैदी की आँखों के सामने कर लिये और शीघ्रता से आगे बढ़ा।

हुमायूँ यह दृश्य बड़ी तन्मयता से देख रहा था। उसकी आँखों का नशा उतरने लगा। कैदी को दी जाने वाली यातना की कल्पना करके वह स्वयं सिहर उठा। यह गर्म सलाखें आँखों के अन्दर प्रवेश करेंगी, दृष्टि संवेदन रक्त खौल उठेगा, फिर उसमें नमक और मिर्च ठूँस दिया जायगा...इसके आगे सम्राट कुछ न सोच सका। उसका हृदय द्रवित हो गया। उसने देखा, जलती सलाख का सिरा कैदी के नेत्रों से एक बालिश्त दूर है। क्षण-भर में वह भीषण ज्वाला नेत्र-शैय्या पर क्रीड़ा करने वाली थी कि हुमायूँ चीख उठा—'ठहरो।'

जल्लाद दो कदम पीछे हट गया। तरदी बेग साश्चर्य कौतूहलपूर्ण दृष्टि से सम्राट की ओर देखने लगा। कैदी ने आँखें खोलकर बादशाह पर मुर्दनी आँखें गड़ा दीं।

"ठहरिये बेग। आँखें फोड़ने से पहले इसे इतनी शराब पिला दी जाय कि वह गले तक भर जाय।"

"हुक्म आलमपनाह का, लेकिन...।"

"मैं जो कहता हूँ वही कीजिये। जल्लाद की अभी कोई जरूरत नहीं।"

सम्राट की आज्ञा से जल्लाद बाहर चला गया। एक सैनिक मदिरा का बड़ा भाण्ड लेकर कमरे में आया। कैदी आलम हुसैन फर्श पर लिटा दिया गया और शराब की ६-७ प्यालियाँ उसके गले के नीचे उतार दी गयीं। थोड़ी देर तक वह निर्जीव-सा पड़ा रहा। धीरे-धीरे उसकी सासें तेज होने लगीं और वह लड़खड़ाकर उठ बैठा। चारो ओर मदघूर्णित दृष्टि डालते हुए तीन प्याली शराब उसने स्वेच्छा से ग्रहण किया और एक लम्बी साँस लेकर उठ खड़ा हुआ।

"और लो आलम—" सम्राट ने सैनिक को संकेत करते हुए कहा।

"जी नहीं, बस। शुक्रिया—" कैदी नतमस्तक हो बोला। उसका स्वर लड़खड़ाने लगा।

"शराब अच्छी लगी ?"

"बहुत अच्छी ।"

"कभी पी भी थी ऐसी शराब ?"

"कई बार ।"

"अच्छा यह तो बताओ मियाँ—" कनखी से देखकर सम्राट ने पूछा—"मैंने सुना था कि तुम्हारे बादशाह के पैर मखमल को छोड़कर जमीन पर पड़ते ही नहीं, तब वह खजाने तक जाने के लिए नंगी फर्श पर कैसे चलते थे ?"

"नंगी फर्श ?"

"हाँ हाँ, जिधर खजाना है उस रास्ते की फर्श पर मखमल कहाँ बिछा है ?"

"आपका सवाल भी अजीब है"—लड़खड़ाकर जमीन पर बैठते हुए कैदी बोला—"खजाने का रास्ता तो छत पर से है। वहाँ मखमली फर्श कैसे बिछेगी ?"

"बिलकुल ठीक। बिलकुल ठीक। मैं तो जानता ही था, लेकिन पूछा इसलिये कि देखूँ तुम्हें कहाँ तक मालूम है। अच्छा, एक बात पूछूँ ?"

"कहिये—" लापरवाही से कैदी बोला।

"मैं तो समझता था कि तुम बड़े भुलक्कड़ हो, लेकिन तुम्हारी बातों से तो अक्लमन्दी जाहिर होती है—" फिर आगे झुकते हुए सम्राट ने धीरे से पूछा—"छत की चारो बुर्जियों के बगल से तहखाने का रास्ता है। बताओ कौन-सा रास्ता खजाने को जाता है ?"

"पूरब वाला।"

"झूठ; वह रास्ता तो नीचे जाकर बन्द हो गया है।"

"कौन कहता है ? झूठा है वह—" आलम गरज उठा—"मैं दावे

के साथ कहता हूँ कि वही रास्ता खजाने को जाता है। मेरी याददाश्त इतनी तेज है कि एक-एक रत्ती बात याद रखता हूँ।"

"लेकिन आलम भाई मैं कैसे मान लूँ? वह रास्ता तो बन्द है।"

"इससे क्या हुआ। खजाने का दरवाजा दीवार में ऐसा सटा है कि मालूम होता है जैसे रास्ता बन्द है। हाँ, आखिरी सीढ़ी के कोने पर लगी कील घुमाई जाय तो वह अलग हो जायगा।"

"माशा अल्लाह! तुम्हारा भी जवाब नहीं मियाँ आलम"—कहते हुए अपने हाथ का प्याला बादशाह ने उसकी ओर बढ़ा दिया—"लो, इसी बात पर एक जाम और।"

"शुक्रिया"—कैदी अपनी प्रशंसा सुनकर खिल उठा। एक ही साँस में उसने प्याला साफ कर दिया।

"मैंने सुना था बहादुरशाह के खजाने में बेशुमार ज़र है, लेकिन जब देखा तो नहीं के बराबर निकला। इतना तो मेरे एक-एक सिपाही के पास है।"

"आपने देखा ही नहीं आलमपनाह"—नम्र शब्दों में कैदी बोला। "पहली कोठरी का खजाना देखकर मैंने भी यही सोचा था लेकिन ज्योंही उत्तरी दीवार की खूँटी घुमाया तो असली खजाना खुल गया। कसम खुदा की, बेशुमार दौलत है उसमें। हीरे, जवाहरातों के इतने ढेर और कहीं नहीं।"

उसकी बातें सुनकर तरदी बेग की आँखें चमक उठीं। सम्राट प्रसन्नता से उछल पड़ा। उसने मुस्कुराते हुए पूछा—"बहादुरशाह भाग गया है मियाँ आलम। खजाने का पता बता दो न?"

सम्राट के इस प्रश्न को सुनते ही कैदी चैतन्य हो गया। शीघ्रता से बोला—"कभी नहीं। कभी नहीं। जब तक जिस्म में जान है, मैं खजाने का पता आपको नहीं बताऊँगा। आलम ने नमकहरामी करना नहीं सीखा है।"

कैदी के इस प्रश्न पर खिलखिला कर हँसते हुए हुमायूँ उठ खड़ा हुआ। तरदी बेग की ओर देखकर बोला—"मिर्जा, इसे कैद में डाल दीजिये। आज रात खजाने का ताला टूट जाना चाहिये।"

"जो हुक्म परवरदिगार"—कहता हुआ तरदी बेग कैदी की ओर बढ़ा। हुमायूँ की आज्ञा पूरी हुई। कैदी कैद में डाल दिया गया। हुमायूँ की चतुर नीति के परिणाम स्वरूप शीघ्र सम्पूर्ण गुजरात प्रान्त पर उसका अधिकार हो गया। उसने सारा प्रान्त जागीर में अपने रिश्तेदारों और सरदारों को बाँट दिया। मिर्जा अस्करी को अहमदाबाद, मिर्जा यादगार को पाटन, कासिम हुसैन खाँ को भड़ौंच, तरदी बेग को चम्पानेर, दोस्तबेग को खम्भात और बड़ौदा तथा महमूदाबाद मीर बछ्का बहादुर को दिया।

यह बँटवारा कर हुमायूँ माण्डू लौट गया जहाँ उसका अधिकतर समय शराब और हूरों में बीतने लगा। राजनैतिक कार्यों के प्रति वह अत्यधिक उदास रहने लगा।

हुमायूँ और उसके भाई आदि जब इस प्रकार स्वार्थान्ध हो विलास में पड़े थे, बहादुरशाह ने अवसर से लाभ उठाकर ड्यू से अहमदाबाद तक पर आक्रमण कर दिया। अस्करी ने उसका महमूदाबाद में सामना किया, पर हारकर वह चम्पानेर भागा। चम्पानेर के सूबेदार तरदी बेग ने अस्करी का साथ देने से इन्कार कर दिया। हुमायूँ से भी कोई मदद नहीं पहुँची। तरदी बेग के असहयोग और हुमायूँ की उपेक्षा से निराश होकर अस्करी ने गुजरात छोड़ दिया और आगरे की ओर कूच किया। अस्करी ने यह निश्चित किया था कि यदि हुमायूँ माण्डू में रुका रहे तो वह आगरे पर अधिकार कर लेगा। पर यह समाचार पाते ही हुमायूँ भी तुरन्त माण्डू से आगरे की ओर रवाना हुआ। चित्तौर में दोनों भाई मिले। हुमायूँ ने अस्करी के इस व्यवहार को क्षमा कर दिया और दोनों ही अगले महीने आगरा जा पहुँचे।

हुमायूँ के माण्डू छोड़ने के बाद बहादुरशाह ने गुजरात के बाद मालवा पर भी कब्जा कर लिया। इस प्रकार हुमायूँ की निश्चेष्टता, अदूरदर्शिता और उसके सरदारों की अकर्मण्यता के फलस्वरूप गुजरात और मालवा वर्ष के भीतर ही, जीतने के बाद, हाथ से निकल गये।

अगले साल शेर खाँ ने गौड़ के बादशाह से तेरह लाख दीनार और कियूल नदी से सिकरगली तक का प्रदेश लेकर सन्धि करने के बावजूद भी पूरा गौड़ प्रदेश लेने के लिए आक्रमण किया। जब उसकी इन बढ़ाओं की खबर हुमायूँ को मिली तो उसकी चेतना जागी, होश हुआ और उसने शेर खाँ को उन्मूलित कर देने का निश्चय किया। वर्षा की भयंकर ऋतु में पूर्व की ओर वह रवाना हुआ। उसके साथ उसके भाई अस्करी, हिन्दाल मिर्जा तथा राज्य के प्रमुख सरदार तरदी बेग, बँहराम खाँ, रूमी खाँ आदि प्रसिद्ध लोग थे और साथ में उसका हरम भी था। चुनार पहुँचने पर हुमायूँ को ज्ञात हुआ कि शेर खाँ गौड़ को घेरे हुए है। उसके एक वृद्ध सरदार दिलावर खाँ ने बंगाल पर चढ़ाई करने की सलाह दी, पर उसकी सलाह सुनी न गयी। उसके बजाय एक नवयुवक तुर्क सरदार ने चुनार घेरने की जो सलाह दी, बादशाह ने उसे पसन्द किया और वह चुनार घेरे रहा। करीब छः महीने का सारा समय चुनार लेने में ही बीत गया। इस बीच शेर खाँ ने सम्पूर्ण गौड़ पर अधिकार कर लिया। चुनार निकल जाने पर भी शेर खाँ ने रोहिताश्व दुर्ग पर कब्जा कर लिया और वह स्वयं गौड़ से बिहार आ गया। उधर गौड़ का बादशाह मुहम्मद शाह युद्ध में घायल हो भाग गया।

चुनार लेने के बाद हुमायूँ बनारस आया और वहाँ से मनेर (सोन नदी पर) पहुँचा। फिर उसने बिहार शरीफ में शेर खाँ के पास सन्धि का प्रस्ताव प्रेषित किया जिसके अनुसार उसने शेर खाँ का गौड़ पर अधिकर मान लिया बशर्ते वह बिहार और दस लाख सालाना खिराज देना कबूल करे। शेर खाँ ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और दोनों

में सन्धि हो गयी। इसी बीच गौड़ का बादशाह मुहम्मद शाह शेर खाँ से परास्त किये जाने के बाद घायल अवस्था में हुमायूँ से आकर मिला और उसने उससे सहायता की याचना की। हुमायूँ ने सहृदयता में पड़कर सन्धि की शर्तों को भुला दिया और मुहम्मद शाह का पक्ष लेकर गौड़ की ओर बढ़ा। सन्धि-भंग होते देख शेर खाँ ने भी हुमायूँ से लड़ने की तैयारी की। उसने हुमायूँ को गौड़ जाने से रोकने का कोई प्रयत्न न किया। हुमायूँ बिना किसी कठिनाई के गौड़ पहुँच गया। रास्ते में घायल महमूद शाह की मृत्यु हो गयी और हुमायूँ ने गौड़ राज्य को मुगल साम्राज्य में मिला लिया। यहाँ भी वह निश्चिन्त होकर आराम करने लगा। उसने गौड़ का नाम जन्नताबाद रखा।

हुमायूँ गौड़ में छः मास पड़ा रहा। उसके दिन आमोद में बीत रहे थे। किन्तु उसे उसकी चिन्ता न थी। मन्द-मन्द सुगन्धित समीरण शुक्लभिसारिका के साथ क्रीड़ा करते चन्द्र-मुख का चुम्बन कर पृथ्वी पर दुधिया चाँदनी बिखेर रहा था। पक्षी अपनी नीड़ों में प्रविष्ट हो चुके थे। नगर-पथ पर चलते-फिरते मुगल सैनिकों के हाथों में लिए मशाल दोनों ओर पंक्तिबद्ध भवनों की दीवारों पर चढ़ते-उतरते अन्धकार-प्रकाश से आँख-मिचौनी खेल रहे थे। चतुर्दिक वातावरण कोलाहल से गुञ्जायमान था मानो नगर निरन्तर समारोह की अनन्त भूमिका में शराबोर हो गया हो।

जब नगर-पथ पर मस्ती में झूमते मुगलों की टोलियाँ, इधर-उधर मदघूर्णित दृष्टि डालतीं, रह-रहकर अट्टहास करती, इधर-उधर छा गयीं तो सहसा खड़ाऊँ की तीव्र पद चाप-ध्वनि से वातावरण गूँज उठा। सबकी दृष्टि एक बार त्रिपुण्डधारी विद्वान ब्राह्मण पुण्डरीक की ओर उठ गयी। किसी ने उसे घूर कर देखा, किसी ने उपहास भरी दृष्टि से और किसी ने कौतूहलवश। योगी अजेय, उन्मुक्त मत्त दिग्गज की भाँति बढ़ता चतुष्पथ के दाएँ ओर एक छोटे, परन्तु भव्य भवन के सामने रुका

जिसके द्वार पर दोनों ओर कलश रखे हुए थे और दीवारों पर नमेरू लता छायी हुई थी।

किवाड़ को दाएँ हाथ से थपथपाकर पुण्डरीक ने मन्द स्वर में पुकारा—"गंगे!"

"कौन है?"—अन्दर से एक मधुर स्वर आया।

"मैं हूँ। खोल दरवाजा।"

"आई पिताजी।"

अर्गला हटने का स्वर सुनते ही पुण्डरीक दरवाजा खोलकर अन्दर आया। फिर उसे पूर्ववत् बन्द करके साँकल लगा दिया। प्राङ्गण में बिछी चौकी पर आसन जमा कर अपनी किशोरी पुत्री की ओर एकटक देखने लगा जो बड़ी तन्मयता से तुलसी की आरती कर रही थी। उसके हाव-भाव देख पुण्डरीक को उसकी स्वर्गीय माँ का स्मरण हो आया। यदि वह जीवित होती तो बेटी की भक्ति देखकर अवश्य गद्गद् हो जाती।

इस छोटे से परिवार में केवल तीन व्यक्ति थे। पिता-पुत्री और एक गङ्गा का कनिष्ठ मौसेरा भाई। कभी-कभी उसकी विधवा मौसी भी आ जाया करती थी।

पुण्डरीक जीवन की अन्तिम सीमा पर पहुँच चुका था। केवल पुत्री के ममता-बल पर जी रहा था। दो महीने में उसके भी हाथ रङ्ग जायेंगे। फिर दुनिया से क्या वास्ता? पुण्डरीक के संन्यास लेने का दिन क्रमशः निकट आता जा रहा था।

वह इन्हीं विचारों में खो गया। सहसा गङ्गा ने उसका मौन भङ्ग करते हुए कहा—"बाबा, भोजन तैयार है। चलो।"

"चलता हूँ"—पुण्डरीक ने अँगड़ाई लेते हुए कहा। फिर इधर-उधर देखते हुए एकाएक पूछ बैठा—"तेरी मौसी कहाँ है? दिखायी नहीं पड़ी।"

"वह तो गाँव गयीं।"

"कब ?"

"तीसरे पहर।"

"भूल की उसने। चित्रा नक्षत्र में यात्रा-निषेध है"—कहते-कहते पुण्डरीक उठ खड़ा हुआ; फिर उसने गङ्गा की ओर देखकर सहसा प्रश्न किया—"तूने उसे मना नहीं किया ?"

"किया था, लेकिन माई राम की तबीयत खराब सुनकर उन्होंने जाना ही उचित समझा।"

"अच्छा, ठीक है। ला जल दे, चलूँ भोजन करूँ। तूने खाया ?"

"अभी नहीं।"

"क्यों ?"

"तुम्हीं ने तो कहा था बाबा कि आज मुगल बादशाह की सवारी निकलेगी। खाना खा लूँगी तो नींद आ जायगी और..."

"क्या देखना इन चाण्डालों का मुँह। जब से उन्होंने गौड़ में प्रवेश किया है चारों ओर अकाल छा गया। इन डाकुओं की म्लेच्छ आकृति भी देखना पाप है।"

गङ्गा ने पिता की अँजुलि में जल डालते हुए उत्सुकता से पूछा—"बाबा, एक मुसलमान पहले भी आया था। तुमने तो उसकी प्रशंसा की थी।"

"वह शेर था; यह गीदड़ हैं। जब गीदड़ की मौत आती है तो वह शहर की ओर भागता है; जब सम्राट का विनाश-काल आता है तो वह प्रजा को रौंदता है। लेकिन किया क्या जाय ? भवितव्यातानां द्वाराणि भवन्ति सर्वत्र...।"

"यह ऐसा नीच कर्म क्यों करते हैं बाबा ?"

"तू अभी नहीं समझेगी। जानती नहीं—कामी स्वतां पश्यति।'

गङ्गा कुछ न समझ सकी। पिता के हाथ-पाँव धुला चुपचाप भोजन परोसने बैठ गयी। भोजन लाकर चौके में रखा ही था कि सहसा ऊर्ध्वंक-ध्वनि से वातावरण गूँज उठा।

"यह आवाज कैसी है?"—पीढ़े पर बैठते पिता की ओर देखते हुए गङ्गा ने उत्सुकतापूर्वक प्रश्न किया।

"म्लेच्छाधिपति आ रहा होगा"—पुण्डरीक ने हाथ में जल लेते हुए कहा। फिर कुछ सोचते हुए उसने पूछा—"देखेगी क्या?"

"हाँ, बाबा।"

"जा देख आ। आना जल्दी।"

"अच्छा बाबा"—कहती हुई गङ्गा झरोखे की ओर भागी और पुण्डरीक भोजन के पूर्व देवताओं को प्रसन्न करने तथा अन्न-अर्पण करने के मन्त्र पढ़ने लगा। अभी वह आचमन कर ही रहा था कि गङ्गा "बाबा, बाबा"—चिल्लाती उल्टे पाँव दौड़ी आयी।

"क्या है गङ्गा? तू इतनी उत्तेजित क्यों?"—पहला कौर तोड़ते हुए पुण्डरीक ने पूछा।

गङ्गा घबराये स्वर में बोली—"हजारों यवन-सैनिक खुले आम स्त्रियों को लूट रहे हैं।"

"हे राम! आज भी?—" पुण्डरीक के हाथ से कौर छूट गया। वह शीघ्रता से उठ खड़ा हुआ। उसके नेत्र प्रबाल-रक्तिम हो गये। शीघ्रता से बोला—"तू द्वार बन्द कर ले। देखूँ, तो बात क्या है?—" थाली के अन्न को प्रणाम करके पुण्डरीक प्रांगण में आया। गंगा भयभीत हो निःस्तब्ध खड़ी रह गयी। उसने सोचा कि पिता को बाहर जाने से रोक ले, पर तब तक पुण्डरीक कन्धे पर उत्तरीय रखता बाहर जा चुका था।

मुगलों की लूट-मार से चारो ओर आतंक छा गया था। लोग अपने घरों में जा छिपे थे। चारों ओर भवनों के दरवाजे और खिड़कियाँ

बन्द हो गयीं थीं। मुगल किसी भी युवती को देखते तो झट उसे पकड़ लेते। मदोन्मत्त पतन-पथ पर बढ़ता जलूस चौमुहानी पर ठहर गया।

घोड़े की पीठ पर आसीन मुगल सरदार तरदी बेग अपनी चंचल दृष्टि इधर-उधर दौड़ा रहा था। पीछे घोड़ों पर अन्य प्रमुख सरदार और कर्मचारी थे।

सहसा सिपाहियों को रुकते देख तरदी बेग ने मुँह घुमाकर रूमी खाँ से पूछा—"क्या बात है मिर्जा? रुक क्यों गये?"

रूमी खाँ ने ओठों पर मुस्कान लाकर नम्र शब्दों में उत्तर दिया—"सरदारे बहादुर के कदमों में रूप की एक परी पेश की जाने वाली है। जैसी कभी देखी न गयी और...।"

"अच्छा!" तरदी बेग के चेहरे पर प्रसन्नता छा गयी। "जल्दी करो मिर्जा, देखूँ तो तुम्हारा तोहफा कैसा है?"

रूमी खाँ तेजी से आगे बढ़ा और सैनिकों के झुण्ड में खो गया। थोड़ी देर बाद एक सुन्दर युवती की कलाई पकड़े वापस लौटा। युवती जोरों से चीख रही थी और उसका वृद्ध पिता सैनिकों की कैद में जकड़ा छाती पीट रहा था।

युवती अपूर्व सुन्दरी थी। उसे देखते ही तरदी बेग घोड़े की पीठ से उतर आया। उसने इधर-उधर उड़ती दृष्टि डाली—मीलों तक पंक्तिबद्ध सैनिक दोनों ओर खड़े थे। मन्द-मन्द मुस्कुराता तरदी बेग आगे बढ़ा।

युवती चीख उठी—"छोड़ दो। मुझे छोड़ दो।"

"माशा अल्लाह! क्या लाजवाब हुस्न है"—कहते हुए तरदी-बेग ने युवती की ठुड्डी दायें हाथ की अँगुलियों से ऊपर उठा दी। गौर से उस चन्द्रमुखी के सौन्दर्य को देखता रहा, फिर रूमी खाँ पर दृष्टि गड़ाकर बोला—"यह तो आलमपनाह के कदमों में पेश किये जाने काबिल है। आज की रात...।"

"नहीं, नहीं। मैं कहीं नहीं जाऊँगी। हे भगवान...बाबा"—कहकर युवती गला फाड़कर चीख उठी। उसने बिना कुछ सोचे-समझे अपनी कलाइयों को जकड़नेवाली रूमी खाँ की अँगुलियों पर दाँत गड़ा दिये। रूमी खाँ ने घबरा कर उसका हाथ छोड़ दिया। मुक्त होते ही युवती शीघ्रता से वापस भागी। पर जाती कहाँ? चारो ओर यवनों का ग्राह-मुख उसे निगलने के लिए उद्यत था। भागने का कोई मार्ग न देख उसकी आँखों के सामने अन्धकार छा गया। मस्तिष्क भाव-शून्य हो गया और चेतना नष्ट हो गयी। लड़खड़ा कर वह भूमि पर गिरने ही वाली थी कि एक बलिष्ठ हाथों ने उसे सँभाल लिया।

सबकी दृष्टि आगन्तुक व्यक्ति पर गड़ गयी। किसी को पास आने की हिम्मत नहीं हो रही थी। तरदी बेग भौं झुकाकर उसे पहचानने की चेष्टा करने लगा। सहसा उसे ख्याल आया कि आगन्तुक व्यक्ति और कोई नहीं वही राजपुरोहित पुण्डरीक है जो एक बार सुलतान से मिलने दरबार में आया था।

तरदी बेग कुछ कहने वाला था कि सहसा नतमस्तक पुण्डरीक तीखे स्वर में बोल उठा—"मुगलराज की जय हो। प्रजा पर यह घन-घोर अन्याय क्यों हो रहा है?"

तरदी बेग को पुण्डरीक का प्रश्न अच्छा न लगा। उसने आगे बढ़ते हुए पूछा—"क्या चाहता है तू? दे-दे इसे मुझे।"

"यह मेरे आश्रय में है। इसकी रक्षा करना मेरा धर्म है।"

"इतनी बदखिलाफत! मौत को गले न लगा ब्राह्मण।"

"यही तो हिन्दुस्तान की विशेषता है मुगल-सरदार। मौत सारे संसार को गले लगाती है, परन्तु हम भारतीय मौत को गले लगाते हैं।"

"पुण्डरीक!"—बेग की आँखें रोष में जल उठीं—"तू मेरे हुक्म के खिलाफ बगावत कर रहा है।"

"नहीं, यह मेरी प्रार्थना है। हमारी प्रतिष्ठा इस तरह मिट्टी तले

न रौंदी जाय। उपलब्ध ऐश्वर्य का उपभोग तुम्हारे लिए शोभायमान है, पर पराई वस्तु से अपनी वासना तृप्त करने की इच्छा प्रकट करना अनुचित और अशोभनीय है—

"वामन ! कलमत्युच्चात्तरुतो मरुतोपनीतमुपलभ्य
युक्तं यत्त्वं तृष्यसिदृप्यसि चैतत्तु हास्यतरम्।"

तरदी बेग किङ्कर्त्तव्य-विमूढ़-सा पुण्डरीक की ओर देखता रह गया। एक बार जी में आया कि उसका गला उतार ले, परन्तु ऐसा करने से प्रजा में भीषण असन्तोष और विद्रोह उत्पन्न हो जाने की सम्भावना थी। इस विषय पर अधिक कठोरता दिखाना उसने उचित न समझा क्योंकि जूड़ी-ताप ज्वर सैकड़ों सैनिकों की मृत्यु हो जाने से एक ओर मुगलों की शक्ति क्षीण हो चुकी थी और दूसरी ओर शेर खाँ ने राज्य के प्रति भीषण खतरा पैदा कर दिया था।

फिर भी पुण्डरीक की बात पर उसे छोड़ देना उसकी प्रतिष्ठा के विपरीत था। उसने गरजते हुए कहा—"तूने मेरे खिलाफ आवाज उठायी है। इसकी तुझे सजा मिलेगी।"

"पुण्डरीक इसके लिए उद्यत है, पर इस बालिका के सतीत्व की रक्षा तो होनी ही चाहिए।"

"बेहोश हो जाने की वजह से यह लड़की अभी छोड़ दी जाती है और"—कहते-कहते बेग ने पुण्डरीक की ओर क्रोधपूर्ण दृष्टि से देखकर आज्ञा दी—"तीन दिनों के अन्दर तुम यह सूबा छोड़कर कहीं और चले जाओ। ब्राह्मण होने की वजह से तुम्हारी जान बख्श दी जाती है।"

पुण्डरीक मुस्कुरा उठा। मुगल-साम्राज्य के पतन की रूप-रेखा वह स्पष्ट देख रहा था। क्षण-भर रुक कर वह शीघ्रता से वापस लौट गया।

खिन्न मन लेकर तरदी बेग घोड़े के पास आया—"वापस चलिये मिर्ज़ा, अब हम आगे नहीं बढ़ेगें।"

"जैसी आपकी इच्छा"—रूमी खाँ नतमस्तक हो बोला।

तरदी बेग घोड़े पर बैठते हुए तेजी से वापस मुड़ा। देखते-देखते जनसमूह तेजी से रेंगता किले की चहारदीवारी में अदृश्य हो गया।

कुछ दिन इसी प्रकार बीत गये। चौसा का मैदान अफगान और मुगल रूपी मधु-मक्खियों का छत्ता बन गया था। कर्मनाशा और बक्सर की यह विस्तृत भूमि लगभग तीन माह से युद्ध की भूमिका बाँध रही थी। पूर्व की ओर मुगल सेनाएँ और पश्चिमी ओर अफगानों की फौज भारत के सिंहासन की भविष्य-रचना कर रहे थे।

बरसात का मौसम था। गंगा उमड़ती बह रही थीं। नाले उमड़ आये थे। नग्न भूमि घास और पेड़ पौधों की हरी चादर से ढँक गयी थी। आकाश में गरजते, बरसते मेघ घुमड़-घुमड़ कर जमीन आसमान एक कर रहे थे।

प्रभात और संध्या की डोर पर झूमता निशि-दिन भागा जा रहा था। विश्व के राजनैतिक नेत्र इस रण-स्थल की ओर एक टक लगे हुए थे।

भाग्य की अन्तिम संध्या थी। मूसलाधार वर्षा हो रही थी। तीक्ष्ण वायु कनातों को झकझोरती आकाश के मेघों से टकराकर भीषण गर्जना और घर्षण-दमक उत्पन्न कर रही थी।

धीरे-धीरे रात हो गयी। दोनों ओर टूटती उल्का की तरह मशालों की लपटें चढ़ने-उतरने लगीं। सैनिकों का पहरा बदला। धीरे-धीरे रात गाढ़ी होती गयी मानो रजनी के मुख पर किसी ने कालिख पोत दी हो। चारो ओर तूफानी मौसम छा गया।

कुछ देर तक मुगल सम्राट हुमायूँ खेमें के दरवाजे पर खड़ा इधर-उधर अनमयस्क दृष्टि से देखता रहा, फिर अन्दर आकर रेशमी गद्दे

पर लेट गया। मदिरा की प्याली गले से उतार कर स्वतः बड़बड़ाया—"कितनी मनहूस रात है।"

सहसा एक बाँदी ने खेमें में प्रवेश किया।

"क्या है?"—बादशाह ने पूछा।

"मलका-ए-आलम आने की इजाजत चाहती हैं?"—दासी ने नतमस्तक हो उत्तर दिया।

"हम उनके इन्तजार में हैं।"

लौंड़ी चली गयी।

थोड़ी देर बाद मलका हमीदाबानू बेगम कनात में उपस्थित हो गयी। उसका सुकुमार मुखमण्डल कुम्हला गया था। मुस्कुराने की चेष्टा करते हुए उसने सम्राट का अभिवादन किया।

"आओ बेगम। तुम्हीं को याद कर रहा था।"

"खुशकिस्मती है हमारी कि आलमपनाह की याद में मैं भी भूले-भटके आ जाया करती हूँ।"

"तुम तो मेरे दिल की मलका हो"—कहते-कहते हुमायूँ ने मलका का हाथ पकड़ लिया।" बैठो, आज चेहरे पर उदासी क्यों?"

"कुछ तो नहीं"—मलका ने भाव छिपाते हुए उत्तर दिया।

"ऊब गई हो? यहाँ पड़े-पड़े तीन महीने हो भी तो गये"—कहते हुए बादशाह ने होठों से मदिरा भरी दूसरी प्याली लगा ली। कुछ क्षणों तक वह निश्चल पड़ा रहा कि आसमान के तीव्र गर्जन के साथ सैनिकों की भयानक चीख और शोरगुल सुनकर हुमायूँ काँप उठा। मलका उठ खड़ी हुई।

"यह शोरगुल कैसा है?"—बादशाह ने तलवार उठाते हुए विस्मित होकर पूछा।

मलका अपना अनुमान प्रकट करने वाली ही थीं कि द्वार पर खड़ा

सैनिक गला फाड़कर चीख उठा—"आलमपनाह, अफगानों ने चारों ओर से हमें घेर लिया है।"

सहसा हुमायूँ के कानों में बिगुल का स्वर गूँज उठा। कुछ ही क्षणों के अन्तर पर भीषण वर्षा और तूफान के विषम स्वर के साथ तलवारें झंकार कर उठीं मानो मृत्यु के नूपुर थिरक रहे हों।

पलक मारते बादशाह चुस्त होकर बाहर आ गया। उसके चेहरे पर घबराहट का कोई लक्षण नहीं था। प्रतीत होता था मानो क्रीड़ांगण में साहस से चमकता हुआ एक कुशल खिलाड़ी उतर रहा हो। हुमायूँ जोरों से चीख उठा—"मुकाबला करो", और नंगीतलवार हाथ में लेते हुए वह घोड़े के पीठ पर उछल पड़ा।

थोड़ी ही देर में अफगानों की फौज चारो ओर से बिलकुल पास आ गयी। बिजली की चमक में हुमायूँ ने देखा कि उसके सैनिक कटे वृक्ष की तरह भूमि पर गिरते जा रहे हैं। चारो ओर भयानक आतंक छा गया था। मुगलों ने अपनी पूरी शक्ति लगा दी, पर युद्ध की योजना पूर्वनिर्धारित न होने के कारण वह भीड़ में बच्चों की तरह कुचलते जा रहे थे।

हुमायूँ तेजी से आगे बढ़ा। मुगल सेना में नया जोश आ गया। थोड़ी ही देर में अफगानों की टुकड़ी काफी पीछे खदेड़ दी गयी।

सहसा सम्राट के कानों से शेर खाँ का शार्दूल-गर्जन जा टकराया—"आगे बढ़ो!"

क्षण-भर के लिए हुमायूँ के रोम-रोम फड़फड़ा उठे। कहीं मैदान हाथ से जाता रहा तो हमेशा के लिए मुँह पर कालिख पुत जायगी। हुमायूँ ने भी अपने सैनिकों को ललकारा।

भयानक अन्धकार में कुछ समझ नहीं आ रहा था कि शत्रु किस ओर से बढ़ रहे हैं। आँखों के सामने काली चादर पर तलवार की चमक,

मौत के जबड़े से लाल जीभ की तरह लपलपा रही थी। चारों ओर मर्मभेदी कराहों से वातावरण गूँज रहा था।

हुमायूँ कुछ ही दूर बढ़ पाया था कि सेनापति भाग कर उसके पास आया। शीघ्रता से बोला—"आलमपनाह, हमारी आधी ताकत खत्म हो चुकी है।"

"हम मौत को भी मात देंगे। आगे बढ़ो।"

सहसा अफगानी सैनिक तूफान की तरह उमड़ पड़े। मुगलों के पाँव उखड़ने लगे। वे सर पर पाँव रखकर भाग खड़े हुए।

मुगल-सम्राट के नेत्रों के समक्ष पराजय अट्टहास कर उठी। पराजय और मृत्यु के विचित्र संघर्ष ने उसे विह्वल कर दिया। रण-स्थल में ठहरना मृत्यु का आलिङ्गन करना था। शेर खाँ की तलवार मुगल बादशाह का रक्तार्चन करने के लिए आतुर थी। भागना कायरता थी।

हुमायूँ कुछ निश्चय भी न कर पाया था कि शेर खाँ उसके सामने दहाड़ उठा। बादशाह की रही-सही चेतना भी लुप्त हो गयी। प्राणों के लाले पड़ गये। आँख मूँद कर वह भाग खड़ा हुआ। पर जाये किधर? एक ओर गङ्गा की उत्ताल तरंगे और तीन ओर शत्रु का मृत्यु-व्यूह।

हुमायूँ भागते-भागते गङ्गा के किनारे आया। एक बार पीछे मुड़कर देखा और भय से काँप उठा। शेर खाँ साये की तरह उसके पीछे लगा था। क्षण-भर के लिए हुमायूँ पृथ्वी और जल के मिलन-बिन्दु पर रुका और दूसरे ही क्षण उसने गङ्गा की तीव्र प्रवाहित विस्तृत जलराशि में अपने को फेंक दिया।

प्रभात की अरुणिमा ऐतिहासिक मञ्च पर नयी तूलिका फेर रही थी। हुमायूँ की पराजय पर शेर खाँ के भाग्य का सितारा उग रहा था।

१३

चौसा का चमत्कार

काशी से जौनपुर जाने वाली सड़क भीषण वर्षा के कारण अत्यन्त दुर्गम बन गयी थी। चारो ओर कीचड़ हो गया था। जहाँ-तहाँ बिखरी बस्तियों में लोग दुबके पड़े थे। चार दिनों से निरन्तर वर्षा होने के कारण पानी में डूबे खेत जलाशयों-से लगते थे। सनसनाते पवन की तीव्रता और रह-रहकर घन-घोर गर्जन से वातावरण भयावह प्रतीत हो रहा था। हवा वृक्षों की शाखाओं को झकझोरती हुई नीड़ों में दुबके पक्षियों के लिए दुर्भाग्य की रचना कर रही थी।

आधी रात बीत चुकी थी। भीषण अन्धकार में अपना हाथ भी न दिखायी पड़ता। तब भी उस निर्जन दुर्गम पथ पर दो यात्री शीघ्रता से आगे बढ़ते जा रहे थे। वर्षा की तीव्र बौछारों से उनके वस्त्र शरीर से चिपक गये थे। उनमें आगे वाला यात्री लम्बा और हृष्ट-पुष्ट था। बिजली की चमक में उसका प्रशस्त ललाट और गुलाबी चेहरा दमक उठता। उसकी चाल तेज थी, परन्तु पैर लड़खड़ा रहे थे। अकस्मात् कीचड़ में उसके पैर फिसले, परन्तु उसके पीछे चलनेवाले ठिंगने कद के साँवले व्यक्ति ने शीघ्रता से आगे बढ़कर उसे गिरने से बचा लिया और वह सम्हल गया। दोनों फिर कदम बढ़ाने लगे। लम्बा व्यक्ति इधर-उधर देखता सहसा ठिठककर खड़ा हो गया। उसने मुड़ते हुए मन्द स्वर में कहा—"अब नहीं चला जाता।"

दूसरा व्यक्ति चुप रहा। पहले ने पुनः कहा—"दायें हाथ कोई बस्ती है। अगर वहाँ रात भर ठहरने को जगह मिल जाय तो थकावट दूर हो जायगी। शरीर चूर हो गया है आलम। कोई बन्दोबस्त करो।"

"या खुदा, रहम कर"—दोनों हाथ ऊपर उठाकर आलम बोला—"जिनके पैर जमीन पर नहीं पड़ते थे, आज वह कीचड़ों मे भटक रहा है।"

"यह किस्मत का खेल है कि बादशाह हुमायूँ एक रात आराम करने के लिए कहीं जगह तलाश रहा है"—कहते-कहते सुलतान का स्वर भर्रा उठा। फिर उसने अपने साथी नवजवान के कन्धे पर हाथ रखकर उसी स्वर में कहा—"तुमने मेरी बड़ी मदद की आलम। मशक फेंककर तुमने मुझे गंगा में डूबते-डूबते बचा लिया। मैं तुम्हारे अहसानों से लद गया हूँ।"

"यह क्या कह रहे हैं परवरदिगार"—आलम ने सिर झुकाते हुए रुँधे स्वर में कहा—"बन्दा हुजूर का गुलाम है। उसने तो सिर्फ नमक हलाली का फर्ज अदा किया। बचाने वाला तो अल्लाह है"—कुछ रुककर दाँयी ओर देखते हुए उसने पुन: कहा—"आपका ख्याल ठीक है आलम पनाह। बगल में बस्ती है। रात काफी चढ़ चुकी है और आपको आराम की निहायत जरूरत है। अफगान सिपाही जरूर आपकी तलाश कर रहे होंगे।"

"चलो, बस्ती में चलें। शायद कोई जगह मिल जाय।"

"जगह की क्या कमी है जहाँपनाह? आपके एक इशारे पर कस्बा खाली हो सकता है।"

"तुम्हारा कहना ठीक है, लेकिन—" पगडण्डी की ओर मुड़ते हुए बादशाह ने कहा—"इस समय हुमायूँ बादशाह नहीं, भिखारी है।"

"आलम की आँखों में आँसू आ गये। वह कुछ कह न सका।

दोनों शीघ्रता से पगडण्डी के सहारे बस्ती की ओर बढ़ते जा रहे थे। रुक-रुक कर आलम सुलतान को अपनी बलिष्ठ बाहुओं का सहारा देता रहता।

थोड़ी देर के उपरान्त दोनों बस्ती के बीच आ गये। कीचड़ और पानी फैले रहने के कारण सही मार्ग का अनुमान नहीं लग रहा था। धीरे-धीरे पैर बढ़ाते दोनों एक पक्के, किन्तु छोटे मकान के सामने आकर रुक गये। आलम ने आगे बढ़कर द्वार पर लगी साँकल खटखटायी। पहली बार कोई उत्तर न मिला। दूसरी बार अन्दर से एक भारी स्वर सुनायी पड़ा—"कौन है भाई?"

"एक राहगीर। रास्ता भूल गये हैं भाई। रात-भर के लिए क्या दो हाथ जगह न मिल सकेगी?"

चरचराहट के स्वर के साथ द्वार खुला। एक लम्बा चौड़ा व्यक्ति दरवाजे पर खड़ा प्रश्नसूचक दृष्टि से दोनों की ओर देखने लगा। अन्धकार होने से एक दूसरे को पहचानना सम्भव न था। उसने शीघ्रता से पूछा—"इस बीहड़ अंधकार भरी आधी रात में आप लोगों को यात्रा करना उचित नहीं। आप मेरी कुटिया में विश्राम कर सकते हैं।"

"शुक्रिया—" आलम नम्रतापूर्वक बोला।

"आप कौन बिरादर हैं?"

"मुसलमान।"

"यवन? मुगल या अफगान?"

"मुगल।"

"आपका नाम?"

"आलम।"

"आपके साथ कौन है?"

आलम कुछ उत्तर भी न दे पाया था कि अन्दर से एक मधुर स्वर सुनायी पड़ा—"कौन है बाबा ?"

"दो यात्री हैं बेटी। रात को यहाँ विश्राम करना चाहते हैं। जरा दीपक तो दे जा। अँधेरा तो मानो संसार को निगल जायगा। हाथ को हाथ नहीं सूझता"—गृहस्वामी ने मुड़ते हुए शीघ्रता से कहा।

क्षण-भर में एक युवती आँखें मलती बायें हाथ में दीपक लेकर द्वार पर आ पहुँची। पिता के हाथ में दीपक देकर वह दरवाजे की ओट में खड़ी हो गयी। गृहस्वामी ने दीपक की लौ उभारते हुए दोनों अपरिचित नवागन्तुकों की ओर गूढ़ भरी दृष्टि से देखा, सहसा वह आश्चर्य से चीख उठा—"तुम ?"

सुलतान के नेत्र ऊपर उठे। क्षण-भर के लिए उसका चेहरा लज्जा से लाल हो गया। मस्तक झुकाते हुए वह भर्राये स्वर में बोला—"हाँ मैं।"

"आश्चर्य है, बंग प्रदेश से निर्वासित एक तुच्छ ब्राह्मण की झोपड़ी में सुलतान आश्रय लेने आये। मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा हूँ ?"

"शायद तुम पुण्डरीक हो—नहीं, यह स्वप्न नहीं, हकीकत है"—सुलतान ने गम्भीरता से कहा—"मैंने सचमुच तुम पर बड़ा जुल्म किया था। शायद तुम्हारे यहाँ मुझे जगह न मिल सके, इसलिये...।"

"ब्राह्मण के आश्रय में आया व्यक्ति खाली हाथ नहीं लौटता सुलतान। शत्रु हो या मित्र, तुम्हारा स्वागत है।"

लज्जा, ग्लानि, अभिमान और पराजय की निराशा से जर्जर बादशाह की समझ में न आया कि वह क्या करे ? मौत-सी तूफानी रात में लौटना भी ठीक नहीं था। पुण्डरीक ने उसे संकुचित देखकर पुनः आग्रह किया—"आइये, अन्दर आइये।"

मस्तक में भीषण वेदना होने के कारण सुलतान के पैर स्वतः द्वार

की ओर बढ़ गये। दूसरे ही क्षण वह आलम के साथ पुण्डरीक की झोपड़ी में प्रविष्ट हो गया।

भाद्रपद के कृष्णपक्ष की भयावनी काली रात आकाश में घन-घोर व्यूह-रचना में व्यस्त थी। दामिनी डाकिनी सदृश आकाश में जीभ लप-लपाती हुई चीख उठती। वृक्षों की डालियाँ चरचराहट का बीहड़ स्वर उत्पन्न करती झूम रही थीं। चारो ओर प्रलय-सा दृश्य व्याप्त था।

धीरे-धीरे रात बीत गयी। सबेरा होते ही बस्ती में चारो ओर मुगल घुड़सवारों का समूह छा गया। सभी व्याकुलता से बादशाह की खोज कर रहे थे, लेकिन किसे पता था कि वह एक भिश्ती के साथ निरीह ब्राह्मण पुण्डरीक की कुटिया में निद्राभिभूत है।

आसमान में बादल बिखर रहे थे। वर्षा बन्द हो चुकी थी। पक्षी आकाश में पंख फड़फड़ाते उड़ रहे थे। बादलों के आँचल से बाहर निकल कर सूर्य की रश्मियाँ पृथ्वी को चूम रही थीं।

मुगल सेनापति बहराम खाँ सुलतान के अदृश्य हो जाने के कारण अत्यन्त चिन्तित था। इधर-उधर जाँच-पड़ताल करता वह पुण्डरीक के द्वार पर आया। उस समय पुण्डरीक बाहर चौपाल में एक स्फटिक शिला पर बैठा संध्योपासना में मग्न था। पूजन क्रिया समाप्त होते ही बहराम खाँ ने उससे नम्रतापूर्वक पूछा—"आपने किसी भटकते मुसाफिर को तो नहीं देखा है?"

आगत युवक को पुण्डरीक पहचान तो गया, पर सहसा पूछ बैठा—"कौन हो तुम?"—फिर उसने भेदभरी दृष्टि से उसकी ओर देखते हुए धीरे से कहा—"तुम मुगल सेना के फौजदार तो नहीं?"

"जी हाँ! आपका ख्याल ठीक है। मेरा नाम बहराम खाँ है"—कहते-कहते वह घोड़े से उतर पड़ा। किञ्चित आशा से उसका चेहरा खिल गया। पुण्डरीक के समीप आकर वह आतुरतापूर्वक बोला—

"आलमपनाह, बादशाह हुमायूँ कल से लापता हैं। हम उन्हीं की खोज कर रहे हैं। मुल्क-भर में बेचैनी छा गयी है।"

"लेकिन ऐसा हुआ क्यों?"—पुण्डरीक ने साश्चर्य पूछा।

"चौसा के मैदान में अफगानों ने धोखे से हम पर हमला कर दिया। हम सोये थे, मैदान अफगानों के हाथ रहा"—बहराम खाँ चिन्तित मुद्रा में बोला। कुछ रुककर उसने फिर कहा—"आपने हमारे सवाल का कोई जवाब नहीं दिया।"

"सुलतान भीतर आराम कर रहे हैं।"

"आपके घर?"—बहराम खाँ को क्षण-भर के लिए अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ। पुण्डरीक ने अपने पूर्व शब्द ज्यों के त्यों दुहरा दिये। मुगल सरदार हर्ष से उछल पड़ा। सिर घुमाकर चिल्लाते हुए उसने अन्य सरदारों को बुलाया। पलक मारते मुगल घुड़सवारों का एक विशाल समूह पुण्डरीक के गृह-द्वार पर एकत्र हो गया। सभी सम्राट की निद्रा भंग होने की आतुरता से प्रतीक्षा कर रहे थे।

लगभग एक घड़ी बाद शोरगुल के कारण सुलतान की निद्रा टूटी। आँखें खोलते ही देखा, सामने सरदार बहराम खाँ और पुण्डरीक खड़े हैं। बहराम खाँ ने सिर उठाकर आदाब किया! आश्चर्य से इधर-उधर देखकर सुलतान उठ बैठा। शीघ्रता से कपड़े ठीक किये और अपने उतरे हुए चेहरे पर ताज़गी से हाथ फेरा। फिर उठकर जमीन पर खड़े होते हुए उसने बहराम खाँ के कन्धे पर हाथ रखकर आतुरता से पूछा—"खैरियत तो है? तुम सब यहाँ सिर झुकाये क्यों खड़े हो? बेगम कहाँ हैं?"

आगन्तुक घुड़सवारों में सुलतान के निकटस्थ सरदार और सगे बिरादर थे। सब चिन्तित थे, निराश। तरदी बेग को काटो तो खून नहीं। क्या कहे? क्या वह कह दे मलका अफगानों की कैद में है? कह दे कि सुलतान का हरम चौसा की मिट्टियों में मुँह ढाँपे मुगलिया-शान के

मस्तक पर कलङ्क लगा रहा है ? इतने सरदारों और अपार सेना के रहते भी मुगल सत्ता इस तरह रौंद दी गयी—यह सोचते ही बहराम खाँ काँप उठा। अपने मालिक के सामने किस जबान से बोले ? वह सुलतान के पैरों की ओर एकटक देखता रहा। बेगम के कोमल पैर जो मखमलों पर भी छिले जाते थे, वह आज मिट्टियों में सने होंगे। मलका न जाने किन आपत्तियों की आँधी में उद्भ्रान्त भटकती होंगी। तरदी बेग ने दृष्टि धीरे-धीरे ऊपर उठायी—सुलतान के अस्त-व्यस्त कपड़े, जिसमें कहीं-कहीं मिट्टी के छीटे पड़े हुए थे—देखकर मुगल सरदार के रोम-रोम सिहर उठे। भाग्य का इतना भयानक कुचक्र !

तरदी बेग को चुप देखकर सम्राट के पैरों तले धरती खिसक गयी। क्या मलका अफगानों की कैद में है ? सुलतान कुछ निर्णय न कर पा रहा था। भर्राये, किन्तु दीर्घ स्वर में उसने शीघ्रता से पूछा—"तुम सब गूँगे क्यों हो गये हो ? जवाब दो, मलका कहाँ है ?"

तरदी बेग ने भयभीत होकर सुलतान की ओर देखा, पर उसकी आँखें मिलते ही पलकें झुक गयी। लाख कोशिश करने पर भी वह कुछ बोल न सका। हृदय की पीड़ा दो बूँद आँसुओं के रूप में नेत्रों से ढुलक पड़ी।

सुलतान कुछ कहने ही जा रहा था कि एक सैनिक सिर पर पाँव रखे भागता आया। आदाब बजाकर हाँफते हुए बोला—"आलमपनाह, जल्दी कीजिये। अफगानों की फौज हमारे पीछे चली आ रही है, हमें खदेड़ती।"

आकस्मिक विपत्ति दृढ़ भावनाओं की कैंची है। दुःख के जिस प्रवाह में सुलतान की कोमल भावनाएँ तैर रही थीं वह अफगानों के आगमन का समाचार पाते ही भय के भँवरों मे तत्काल लुप्त हो गयीं। सभी को अपनी जान के लाले पड़ गये। मुगलों के पास अब वह

ताकत कहाँ थी जिसके सहारे युद्ध की बौछारों से प्राणों को बचाया जा सकता ?

तरदी बेग ने शीघ्रता से बाहर आकर अपना घोड़ा दरवाजे के सामने खड़ा किया। सुलतान से उसका उपयोग करने का अनुनय करते हुए बोला—"आलीजाह, आप आगे बढ़िये। आपका यहाँ अधिक देर रुकना मौत से खेलना है।"

बादशाह शीघ्रता से बाहर आया और उछल कर घोड़े की पीठ पर सवार हो गया। आगे बढ़ते हुए उसने दृष्टि घुमाकर पुण्डरीक की ओर देखा। उसकी आँखें मानो कह रही थीं—एक साधारण ब्राह्मण होकर तुमने मुझे सब कुछ दिया, पर इतने बड़े मुल्क का बादशाह होकर भी मैं तुम्हें कुछ भी न दे सका।"

हुमायूँ के सामने विपत्तियों का पारावार लहरा रहा था। चौसा-युद्ध में हुई पराजय ने उसकी कमर तोड़ दी थी। उस भीषण मार-काट के बीच बेगम लापता हो गयीं। पता नहीं, परिवार के अन्य प्राणी कहाँ होंगे, कैसे होंगे ? प्राण बचाने के लिए वह भागा। गङ्गा की प्रखर धार में डूबने ही वाला था कि उसे आलम भिश्ती ने बचा लिया और किसी प्रकार वह गङ्गा के इस पार आ सका। रात में इस अनजान ब्राह्मण ने अपनी झोपड़ी में शरण दी। अब पता चलता है कि शेर खाँ उसे पकड़ने के लिए विशाल सेना लिए चला आ रहा है। तब वह क्या करे ? भाग जाय ? लेकिन अगर भागता नहीं तो कर भी क्या सकता है ? शक्ति नहीं, सैन्य नहीं। सिपाही आधे से ज्यादा मारे जा चुके हैं, शेष बीमार हैं। अफगानों ने मुगलों को मुल्क से बाहर निकाल बाहर करने की ठान ली है। वक्त अच्छा नहीं मालूम होता। तब चल ही देना चाहिये।

हुमायूँ ने घोड़ा आगे बढ़ाया। एक दिन गौड़ में किये हुए उसके अत्याचारों के परिणाम स्वरूप मातृभूमि छोड़कर काशी आने वाले

पुण्डरीक ने मुगल सम्राट के निराशा भरे उमड़ते अन्धकार को देखा। उसका रहा-सहा क्रोध भी जाता रहा। कठोरता पिघल कर पानी हो गयी। उसने क्षीण स्वर में कहा—"जाओ, विपत्ति के दिन शीघ्र कट जायेंगे। ईश्वर तुम्हें सुखी करे...।"

सुलतान कुछ कदम चलकर खड़ा हो गया। उसने तरदी बेग को अपने पास बुलाया। बेग बादशाह के पास जाकर खड़ा हो गया। हुमायूँ ने विह्वल स्वर में कहा—"इस ब्राह्मण की झोपड़ी की जगह आलीशान कोठी बनवा देना और इसके लिए कुछ इन्तजाम कर देना। इसने मुझे आफत में शरण दी है।" कहकर उसने मन-ही-मन इस विद्यार्थी काफिर ब्राह्मण के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट की। कुछ रुककर उसने फिर कहा—"और इस आलम भिश्ती के लिए भी ईनाम...जो वह कहे, जो चाहे; उसे खुश करना हमारा फर्ज है।"

ऐड़ लगाते ही घोड़ा हवा से बातें करने लगा। उसके साथ ही उसके घुड़सवार निकल भागे।

जब सब चले गये तो पुण्डरीक ने अपनी कन्या से कहा—"समय सबसे शक्तिशाली है। उसके प्रबल हाथों में भाग्य का सूत्र बँधा रहता है। आज सन्ध्या करने में बड़ी देर हुई बेटी। मेरे पूजन का सामान तो ला दे।"

गंगा घर में चली गयी और क्षण-भर में वह स्थान विकट स्वर में भाँय-भाँय करने लगा।

थोड़ी ही देर में अफगान सेना के सिपाहियों का तुमुल निनाद निकटतर आता हुआ सुनायी देने लगा। ब्राह्मण ने दरवाजे पर साँकल चढ़ा दी और घर में छिपकर भगवान का स्मरण करने लगा।

१४

पत्थर भी पिघलता है

चौसा की भूमि में मुगल सम्राट का मुकुट भू-लुण्ठित हो श्री-विहीन हो गया। मुगल-शासन की दीवारें हिल गयीं। देश के पूरब में मुगलों का नामोनिशान समाप्त था और समाप्त हो गयी वह आभा जो उदय के साथ अपने अस्त का आलिंगन कर रही थी।

सूर्योदय के साथ चन्द्रमा द्युतिहीन हो अदृश्य हो गया। स्थिर पवन ने कफन की तरह पृथ्वी को ढाँक रखा था। चारो ओर हजारों मुगलों की लाशें पराजय का गरल-ग्रहण बन पृथ्वी की गोद में मुँह छिपाकर मानो रक्ताश्रु प्रवाहित कर रही थीं।

पतित पावनी भागीरथी अपनी तीव्र चाल में, अरुणोदय के उपरान्त पंकज की भाँति, विश्व-सरोवर में थिरकती, धमनियों से प्रवाहित रक्त-धारा को गले लगाती बहती जा रही थी। पक्षीगण-आकाश में पंख फड़फड़ाते-उड़ते हुए गा रहे थे, किसी की विजय के गीत और ढुलका रहे थे किसी की वैभव के कब्र पर आँसू।

एक ओर प्रसन्नता एवं आनन्द का साम्राज्य फैल रहा था तो दूसरी ओर धूप में चमचमाती हजारों लाशें छितरा रही थीं। एक ओर विजय थी, तो दूसरी ओर पराजय। क्षितिज के इस पार दिन था तो उस पार रात। हर्ष-विषाद के इस विचित्र मिलन-विन्दु पर खड़ा था सूरी-वंश का महान् विजेता शेर खाँ, जिसकी अब देश-भर में तूती बोल रही थी, जिसके नाम पर हिन्दुस्तान का मुगल

बादशाह हुमायूँ पकड़े जाने के भय से भागा जा रहा था, जिसके स्वागतार्थ दिल्ली-सिंहासन ने हाथ फैला दिये थे और जो ऐतिहासिक महानाट्यशाला के मंच पर नायक के रूप में आ चुका था।

कनकाभा में झूलता बाल रवि धीरे-धीरे यौवन-पथ की ओर अग्रसर होने लगा। वायु में शुष्कता मिश्रित होती जा रही थी। शेर खाँ खेमे के बाहर निकला। उसका दीप्तिमान् मुख-मण्डल विजयोल्लास से खिल रहा था। हर साँस के साथ नया जीवन था, नयी आशाएँ थीं, नया उत्साह था।

कैसा विपर्यय था! एक ओर जिन्दगी की शाम नजदीक आ रही थी तो दूसरी ओर भाग्य का विहान हो रहा था। अंग-अंग शिथिल होते जा रहे थे तो मन एक नयी शक्ति से भरता जा रहा था। इसे परमात्मा का प्रसाद न कहे तो और क्या कहे?

चौड़ा वक्ष-स्थल, रोबीला चेहरा, छोटी दाढ़ी और ऐंठी मूँछ वाला शेर, 'शाह' होने का स्वप्न साकार होते देख मुस्कुरा उठा।

सहसा बादशाह हुमायूँ की बेगम का ख्याल आते ही वह चिन्तित हो उठा। आज देश की मलका उसकी कैद में है! क्या बर्ताव किया जाय उसके साथ? उस पर दया दिखाना ठीक नहीं। है तो वह शत्रु की बीबी, दिल में जहरीला-जाम जरूर छलकता होगा।

शेर खाँ ने बगल में खड़े अपने पुत्र जलाल खाँ की ओर देखते हुए कहा—"हमें शाही परिवार के कैदियों से जल्द मिलना चाहिये।"

"चलिये। मैं तैयार हूँ"—जलाल ने सिर झुकाते हुए कहा और वह शेर खाँ के साथ कदम बढ़ाने लगा। हजूरियों के विजय-घोष से वातावरण मुखरित होने लगा। सब वहाँ से चलकर उस स्थान पर आये जहाँ मुगल परिवार के सदस्य बन्दी थे।

अन्तिम खेमा पार करते ही शेर खाँ क्षण भर के लिए ठिठक कर खड़ा हो गया। फूटी आँखें, कटे हाथ-पैर, धड़ से अलग सिर, दर्दें की

की तरह फटा सीना, विकृत लाशें, लावे की तरह बिखरे माँस पिण्ड और भूतल पर फैलकर जमा रक्त का नद, इस महा नाट्यशाला के एक मंच में यवनिका पर अवशेष के रूप में बिखरा पड़ा था।

शेर खाँ का हृदय एक बार मनुष्य की इस विकृति पर काँप उठा। क्या यही वास्तविक विजय है? चौसा का मैदान तो मेरे हाथ रहा, किस्मत की जीत अवश्य हो पायी है, परन्तु क्या इससे मैं मनुष्य का हृदय जीत पाया? जब तक मेरे नाम का खुतबा न पढ़ा जाय तब तक विजय कैसी? यह तो पहला कदम है। अभी भी हुमायूँ बादशाह है। आज वह चौसा से भागा है तो कल उसे हिन्दुस्तान से भी भागना होगा। साथ ही इस देश की जनता के हृदय में मुझे उतरना है, जहाँ हुमायूँ न उतर सका।

सहसा शेर खाँ की विचार-शृंखला टूट गयी। किसी के कराहने का कोमल स्वर उसके कानों में गूँज उठा। स्वर की दिशा में दृष्टि दौड़ाकर देखा—लाशों के बीच एक युवती पड़ी थी। घुटने तक उसके दोनों सुन्दर पाँव कटे हुए थे, दायें हाथ का पञ्जा अलग था और मुँह पर तीन जगह तलवार के घाव थे। रह-रहकर उसके होठों से अस्फुट स्वर निकल पड़ता—"पा...नी...। पा...नी।"

"यह औरत कुछ पहचानी-सी लगती है"—शेर खाँ स्वतः बोला। उसका कठोर हृदय भी इस रमणी की दर्दनाक दशा से द्रवीभूत हो उठा था। वज्र भी मानो पिघल गया था।

"अब्बा हुजूर, यह तो वही गौड़ देश की औरत है जो हमारे बंगाल जीत लेने के बाद आपकी शरण में रहने की याचना लेकर एक दिन दरबार में आयी थी और आपने कहा था..."

"मैंने कहा था कि इस ज़हर की पुड़िया को मेरे पास क्यों भेजा गया है। ले जाओ इसे हुमायूँ के पास।"—कुछ रुककर शेर खाँ बोला—

"तुमने ठीक पहचाना जलाल, यह वही औरत है—शायद कोई नाचने वाली है। मुझे इसकी हालत पर रहम आ रहा है...।"

रूप की चाँदनी भी कितनी अस्थिर होती है! जिस सुकोमल मुख-मण्डल पर हजारों दर्शक सर्वस्व लुटाने को तैयार थे, आज उसी पर अन्धकार की स्याही छा गयी थी। आँखों में ज्योति नहीं। चमड़े पर रौनक नहीं। सौन्दर्य का इतना विकृत रूप! जिसके रूप ने एक बार समस्त दरबारियों के हृदय पर जादू कर दिया था, वह आज मौत से भी भयानक दिखायी पड़ता है। शेर खाँ समझ गया कि भगदड़ में नर्त्तकी की यह दशा हुई है।

"पा...नी। पा...नी"—पुनः करुण स्वर गूँज उठा। शेर खाँ ने चारो ओर दृष्टि दौड़ायी। गंगा पास ही बह रही थीं। वह शीघ्रता-पूर्वक पानी के लिए दौड़ पड़ा। एक झटके से अपनी पगड़ी खींची और उसे पानी में डुबा दिया। लम्बे डग भरता हुआ वापस आया। घायल युवती पर दृष्टि पड़ते ही उसके रोंगटे खड़े हो जाते। जल में भींगी पगड़ी हाथ से छूटकर भूमि पर जा गिरी। शेर खाँ ने देखा कि एक गिद्ध युवती की आँखों में चोंच घुसाये अपने हृदय की तृप्ति ढूँढ़ने की चेष्टा कर रहा था।

शेर खाँ भीतर-ही-भीतर चीख उठा—"तुमने बहुत जल्दी कर दी नर्त्तकी"—वह फुसफुसा उठा—"मेरा इन्तजार तो कर लिया होता।" उसने मुड़कर अपने पीछे आते हुए जलाल खाँ की ओर देखा; फिर भयानक समर-भूमि में जमी लाशों पर दृष्टि दौड़ाते हुए गम्भीरतापूर्वक बोला—"मैं चलता हूँ। तुम इन लाशों को दफनाने का बन्दोबस्त करो।"

जलाल ने सिर झुकाकर पिता की आज्ञा स्वीकार की। शेर खाँ दाहिनी ओर मुड़ते हुए तेजी से आगे बढ़ा।

वहाँ से चलकर शेर खाँ आगे बढ़ा। मुगल बादशाह के परिवार के सैकड़ों व्यक्ति पकड़ गये थे। वे सब हताश-से थे। उन्होंने नव विजेता

को देखते ही आँसुओं से उसका स्वागत किया। दासियों ने शेर खाँ के समक्ष बादशाह हुमायूँ की प्रधान बेगम को उपस्थित किया। बादलों की चोट से थके चाँद ने शेर खाँ की ओर क्रोध-मय-अनुनय मिश्रित दृष्टि से देखा, फिर पलकें झुक गयीं।

मलका के मस्तिष्क में एक बार समस्त घटनाएँ घूम गयीं। कल तक वह सम्राज्ञी थी, आज कैदी। कल तक शेर खाँ उसके आधीन था, आज वह उसके वश में थी। काश! ऐसे दिन देखने के पहले ही उसकी मौत हो गयी होती। परन्तु मरना भी इतना आसान नहीं। माँगे मौत नहीं मिलती। जीवन के नक्शे में दुर्भाग्य रंग भरे बिना नहीं रहता, नहीं तो शेर खाँ जैसे साधारण जागीरदार की यह हिम्मत होती कि उसकी ओर नज़र उठाकर देखे। परन्तु आज वह लाचार और शक्तिहीन है। शेर खाँ जो चाहे कर सकता है...। नहीं-नहीं। मलका की मुट्ठियाँ कस गयीं, भौंहों में बल पड़ गये। कुछ भी हो, मै सम्राज्ञी हूँ और यह शेर खाँ एक मामूली हैसियत का जागीरदार। यदि उसने जरा भी गलत कदम बढ़ाया तो...तो—। मलका आवेश से काँपने लगी। सहसा उसने अपने को सँभाला। यह समय बुद्धि और मानसिक विलक्षणता की विकट परीक्षा का था। यदि चुटकियों में शत्रु पिस जाय तो तलवार की क्या आवश्यकता? नरम अँगुलियों के चिलमन में रूप की मुस्कान। शय्या पर जब शेर खाँ की भावनाएँ सो जाँयगी तो उसकी मौत के काले परदे में मुगलों का अपमान तवारीखों में हमेशा के लिए छिप जायगा। दुनियाँ याद करेगी कि एक मुगल सम्राज्ञी के अपमान का क्या परिणाम हुआ।

सहसा मलका विचारों की सीढ़ी पर चढ़ते हुए लड़खड़ा उठीं। शेर खाँ कह रहा था—"हमें आपसे बड़ी हमदर्दी है।"

"मलका-ए-मुअज्जमा को आपकी दया की भीख नहीं चाहिये—"

मलका के संकेत पर दासी ने पलकों से निकलती मोतियों को सँवार कर कहा।

शेर खाँ क्षण-भर के लिए विचलित हो उठा। वह बेगम के चेहरे की लिखावट बारीकी से पढ़ रहा था। मुगलों की लाज उसकी मुट्ठी में थी। बादशाह हुमायूँ की शान उसका पद-चुम्बन कर रही थी।

सहसा शेर खाँ की आँखें चमक उठीं। मलका हुमायूँ की बेगम थी। राजनीति के मंच पर दिल का खेल खेलना बुजदिली है। यहाँ प्रश्न एक महिला की प्रतिष्ठा का है। उसका हृदय अचानक एक नयी भावना से उफन कर बह चला। परन्तु उसका यह तूफान कभी आकाश की ओर अग्रसर नहीं हुआ। उसकी आत्मा तो दिल्ली के सिंहासन पर केन्द्रित थी। उसने मलका के उदास चेहरे की ओर उड़ती दृष्टि डाली और मन्द स्वर में पूछा—"आप क्या चाहती हैं?"

कोई उत्तर न मिला। मन्थर-गति से शेर खाँ आगे बढ़ा। मलका के समीप आया। भर्राए स्वर में बोला—"मुझे अफसोस है, बहन।"

मलका मानो आकाश से गिरी। अनुमान की समस्त तरंगें हृदय-गर्भ में विलीन हो गयीं। पलकें उठाकर देखा—अपनी तलवार का हजारों व्यक्तियों के बलिदान से रक्तार्चन करनेवाला वीर, शेर खाँ, उनकी दशा पर करुणा के आँसू बहा रहा था।

मलका की नजरों से नजरें मिलते ही शेर खाँ घूम पड़ा। खेमें के बाहर आया। सम्राज्ञी ने स्पष्ट सुना कि शेर खाँ वजीर से कह रहा था—"हैदर, मलका और शाही हरम को बाइज्जत आगरे भेजने का इन्तजाम करो। इनकी शान में अगर जरा भी फर्क पड़ा तो मुझसे बुरा कोई न होगा।'

हैदर ने चुपचाप सिर झुका लिया। शेर खाँ के मस्तक पर सूर्य चमक रहा था। जलाल खाँ भी पिता के साथ भावनाओं के आकाश में उड़ा जा रहा था।

१५

दिल्ली फिर जाग उठी

दिन का तीसरा पहर था। बरसात का मौसम और भादों का महीना। आकाश में बादल इधर-उधर दौड़ रहे थे। वायु के झोकों से वे स्थिर न हो पाते थे। यद्यपि हवा चलने से कुछ शान्ति थी, फिर भी वातावरण गरम था।

जयपुर से दिल्ली आने वाली सड़क पर दो घुड़सवार सिपाही दिल्ली की ओर बढ़े जा रहे थे। देखने में एक हिन्दू और दूसरा मुसलमान लगता था। दोनों शस्त्रों से लैस थे और वेग से घोड़ा बढ़ाये चले जा रहे थे। कुछ दूर तक चुपचाप चलते रहने के बाद हिन्दू सिपाही ने पूछा—'तो बादशाह शेरशाह दिल्ली में ही हैं?' पूछने वाला बीरसिंह था जो मारवाड़ चला गया था। उसे वापस बुलाने के लिए शेरशाह ने एक सिपाही मारवाड़ भेजा था।

'जी हाँ'—मुसलमान सिपाही बोला—दिल्ली में ही उन्होंने अपने नाम का खुतबा पढ़वाया था। फिर एक बात और थी। मरहूम बादशाह इब्राहीम लोदी के शहीद हो जाने के बाद से दिल्ली अनाथ हो गयी थी, अफगानी शानो-शौकत गर्दिशों में दबी आहें भर रही थीं। मुगलों ने दिल्ली के सरदारों और अवाम की हिकारत भरी नजरों से डर कर आगरे को राजधानी बनाया, मगर सूरी खानदान का सितारा बुलन्द होते ही अफगानों की शान दिल्ली में फिर जम गयी है...।"

'इस समय हुमायूँ का भी कुछ पता है ?'

'उसका कुछ पता नहीं। चौसा के मैदान में दोनों ही दलों के भाग्य का निपटारा हो गया। हुमायूँ दिन-दिन हारता एक दिन तख्त-शान-शौकत और यह अपार वैभव छोड़कर सिन्ध की ओर भागा और शायद फिर वहाँ से काबुल चला गया...मारा-मारा भटकता... और हमारे बादशाह शेर शाह का सितारा बुलन्द हुआ। उन्होंने शाह का खिताब लिया, खुतबा पढ़वाया और हुमायूँ की गद्दी पर बादशाह बन गये। तब से इस मुल्क पर उनकी मेहरबानी...।'

सहसा उनकी दृष्टि रास्ते में गिरे हुए एक मुसाफिर पर पड़ी। मुसाफिर देखने में मारवाड़ी लगता था। उसकी पोशाक और पगड़ी बीकानेरवासियों जैसी थी।

बीरसिंह घोड़े से उतर गया। उसकी देखा-देखी मुसलमान सिपाही भी घोड़े से उतर आया। जाकर देखा, मुसाफिर ज्वर से चूर था। उसके साथ एक भारी गठरी भी थी। दो घुड़सवार जवानों को अपने पास आया देख मारवाड़ी यात्री डरा, किन्तु कुछ सँभल कर बोला—'सुना था बादशाह शेर शाह के मुल्क में बुढ़िया औरतें भी गहनों से लदी अकेली यात्रा करती हैं और चोर उनसे नहीं बोलते। तुम लोग कौन हो भाई ?'

बीरसिंह ताड़ गया, बोला—'घबराओ नहीं। हम भी तुम्हारी तरह यात्री हैं। कहाँ जा रहे हो ?'

'दिल्ली।'

'इस गठरी में क्या है ?' मुसलमान सिपाही ने पूछा।

यात्री डर गया। क्या ये डाकू हैं ? यदि उसने बता दिया तो ? वे उसे मार न डालें ?. उसकी गठरी लूट न लें। भय से उसकी हालत खराब होने लगी। उसने हकलाते हुए झूठ कहा—'गठरी में कुछ फटे-पुराने कपड़े और एकाध बर्तन हैं।'

'फटे-पुराने कपड़े और एकाध बर्तन'—दोनों सिपाही हँसने लगे—'कोई हर्ज नहीं। चलो उठो। मेरे घोड़े पर सवार हो लो। दिल्ली अब दूर नहीं। वह देखो, उसकी मीनारें दिखायी दे रही हैं...।'

भयभीत यात्री ने बहुत आनाकानी की। वह घोड़े पर चढ़कर इन बटपारों का खिलौना नहीं बनना चाहता था। परन्तु उसकी एक न चली। हार कर उसे घोड़े पर चढ़ना पड़ा। घण्टे भर चलने के बाद वे दिल्ली के पास पहुँचे। शहर अब भी कोस भर था। किन्तु रात हो जाने से वे सराय में ही उतर गये।

जिस सराय में वे उतरे, वह शहर से दूर था। बीरसिंह ने देखा—पिछली बार जब वह दिल्ली आया था तब से कितना परिवर्तन हो चुका था। वह सराय जो खून, हत्या, डाका, चोरी और व्यभिचार का अड्डा था, अब बादशाही नियमों की कड़ाई में बँधकर शान्तिपूर्ण आश्रय बन गया था।

जिस समय वे सराय में घुसे, फाटक पर ही उन्हें एक सिपाही मिला जिसने उनका नाम-पता पूछकर अपने कागज़ात में दर्ज किया। दिल्ली आने का कारण पूछने पर जब बीरसिंह के साथी सिपाही ने उसे बादशाही मुहर दिखाकर अपना परिचय बताया तो सराय वाले सिपाही ने बड़े अदब से उसे सलाम किया—'तशरीफ रखिये। और हाँ, इस मुसाफिर की गठरी से निकले सोने और चाँदी को सरकारी मालखाने में जमा कर देता हूँ। सबेरे या जब भी उन्हें यहाँ से कूच करना होगा, इन्हें इनका सारा सामान मिल जायगा। तब तक हकीम साहब इनकी दवा करेंगे।'

यात्री भौंचक रह गया। इतनी सुविधा, इतना आराम! अचानक एक आदमी दौड़ता आया—'हुजूर! कल जो यात्री मुलतान शहर से आया था, बीमारी के कारण मर गया।

'हिन्दू है न?'

'जी हाँ।'

'तो उसके जलाने का इन्तजाम कर दो। शाही खर्च से उसे लकड़ी और कफन मिल जायगा। कल सबेरे के हरकारे से उसकी खबर दिल्ली और मुलतान भेज दी जायगी।' कहकर वह सिपाही दोनों मुसाफिर यात्रियों के विवरण लिखने में लग गया।

बीरसिंह सन्ध्या हो जाने के कारण अपने पूजा-पाठ और मुसलमान सिपाही नमाज में जुट गया। बीमार यात्री हकीम जी के पास पहुँचाया गया। मृत यात्री के समस्त कपड़े-लत्ते बटोर कर बाँध दिये गये और उनपर मुहर लगाकर सरकारी मालखाने में जमा कर दिया गया। राजधानी दिल्ली और उसके शहर मुलतान भेजे जाने के लिए दो सूचनाएँ भी तत्काल लिख दी गयीं। सराय में उस दिन अधिक चहल-पहल थी। बारान्दों में खड़े-बैठे यात्री प्रसन्न मुद्रा में उछलते, कूदते या ठहाका मार कर हँस पड़ते थे। उनमें कोई लम्बा था कोई नाटा; किसी की भूरी दाढ़ी थी, किसी की सफेद; कोई नंगे सिर था, कोई साफा बाँधे; कोई धोती-अँगरखा पहने था तो कोई कुरता-सलवार! छोटी-सी सराँय मानो विविध धर्म और सभ्यताओं का मिलन-बिन्दु बन गयी थी।

बड़े कमरे के एक कोने में बिछी चौकी पर सराँय का मालिक चुप-चाप बैठा हुक्का पी रहा था। बीरसिंह से परिचित होने के कारण उससे नजर मिलते ही वह उठ खड़ा हुआ। हुक्के की नली नीचे रखते हुए बोला—"आइये सरदार साहब, बहुत दिनों पर आना हुआ। क्या खिदमत करूँ आपकी?"

सराँय का बिलकुल परिवर्तित रंग-ढंग देखते हुए बीरसिंह ने दबी जबान में पूछा—"क्या हाल-चाल है? घर पर कुशल है?

हाल-चाल और कुशल सब ठीक है। सराँय मालिक ने सन्तोष-पूर्ण स्वर में उत्तर दिया—"आलमपनाह शेरशाह की हुकूमत में सब चैन ही चैन है। किसी को तकलीफ नहीं। सरकारी काम है,

बजा रहा हूँ! हुजूर आप ही लोग इन सरायों के मालिक हैं। बादशाह का हुक्म है कि मैं रात-दिन आप लोगों की खिदमत के लिए तैयार रहूँ। मुगलों का वह जमाना चला गया सरदार साहब"—कहते-कहते वह धीरे से खाँसा; फिर उसी नम्रता से बोला—"कहिये क्या खिदमत करूँ आपकी?"

"कुछ नहीं—सब मेहरबानी है।" कहकर वह लौट आया। दोनों अलग-अलग कमरों में जाकर बिस्तरों पर लेट गये। थकावट में चूर होने के कारण पलक मारते ही रात बीत गयी।

सबेरा होते ही नहा-धोकर बीरसिंह घबराया हुआ कादिर के पास आया। कादिर उस समय कपड़े बदल चुका था। बालों में कंघी करते हुए उसने बीरसिंह की ओर देखा। उसके परेशान चेहरे पर दृष्टि पड़ते ही उसने शीघ्रता से पूछा—"क्या बात है? आप घबराये-से क्यों हैं?"

"क्या बताऊँ कादिर—" मुँह लटकाये बीरसिंह बोला—"मेरी अशर्फियों की थैली खो गयी।"

"कहाँ?"— बीच ही में कादिर पूछ बैठा।

"वह घोड़े की जीन में ही बँधी रह गयी थी। बड़ी भूल हो गयी मुझसे।"

"तो परेशानी की क्या बात है, मिल जायगी"—कादिर ने लापरवाही से कहा।

"मिल जायगी? क्या कहते हो?"—बीरसिंह ने हाथ फैलाते हुए कहा—"जिसके हाथ लगेगी भला वह छोड़ेगा?"

"वह अंधेर अब खत्म हो चुकी है। अशर्फियों की बात क्या करना, अगर आपका एक हीरा भी सड़क पर गिर जाय तो उसकी ओर आँख उठाकर भी कोई नहीं देखेगा। यकीन रखें, अगर आपकी थैली कहीं गिरी न होगी तो जरूर वापस मिल जायगी।"

वीरसिंह को यद्यपि कादिर की बातों पर विश्वास नहीं हो रहा था फिर भी वह चुप रहा क्योंकि कुछ ही क्षणों बाद असलियत खुल जायगी। वह अभी कुछ सोच ही रहा था कि सहसा सराँय के एक नौकर ने अन्दर आने की अनुमति माँगी।

"आ जाओ"—पलटते हुए कादिर बोला। फिर उसने हँसकर बीरसिंह की ओर देखते हुए कहा—"लीजिये आ गये।"

बीरसिंह अचम्भित नेत्रों से कभी नौकर की ओर देखता, कभी उसके दायें हाथ की मुट्ठी में जकड़ी अपनी अशर्फियों की थैली की ओर। आज उसे प्रत्यक्ष प्रमाण मिल गया कि शेरशाह ने न केवल शासन और व्यवस्था बदल दी है, परन्तु लोगों का हृदय भी बदल दिया है। उसने केवल मुगल शासन पर ही नहीं अधिकार किया है, लोगों की कलुषित-भावनाओं पर भी उसका अधिकार हो गया है। बीरसिंह ने अनजान बनते हुए नौकर से पूछा—"कहो क्या बात है?"

"हुजूर यह आपकी थैली है...।"

"मेरी है?"—बीरसिंह ने कृत्रिम आश्चर्य दिखाते हुए पूछा।

"जी हाँ आपही की है"—नौकर नम्रतापूर्वक बोला। "आप इसे जीन के ही साथ बँधा भूल गये थे। आप लोगों के जाने का समय हो रहा है, इसलिये सोचा, घोड़े तैयार कर दूँ। आप इसे अपने ही पास रख लें तो अच्छा होगा; नहीं तो हो सकता है कि कहीं झटका खाकर गिर जाय।"

नौकर की ईमानदारी देखकर बीरसिंह का हृदय बाग-बाग हो उठा। थैली लेते हुए उसने चट उसके हाथ पर पाँच अशर्फियाँ बख्शीश रूप में रख दीं, फिर प्रसन्न मुद्रा में बोला—"जल्दी घोड़े तैयार कर दो, हमारे जाने का समय हो गया है।"

नौकर सलाम करता वापस लौट गया। थोड़ी देर बाद बीरसिंह कादिर के साथ बाहर आया और दोनों अपने-अपने घोड़ों पर सवार होकर सामने दिखायी देती हुई दिल्ली की ओर बढ़े।

ज्यों-ज्यों दिल्ली पास आती जाती त्यों-त्यों बीरसिंह का आश्चर्य बढ़ता जाता। जब उसने नगर में प्रवेश किया तो उसकी आँखें फटी रह गयीं। दिल्ली शहर क्या था, मानो इन्द्रपुरी बन गया था। नगर का कोना-कोना सुख, शान्ति और आनन्द में विभोर हो रहा था। सभी व्यक्ति प्रसन्नचित्त अपनी दिनचर्या में व्यस्त थे। बच्चे इधर-उधर अभय मुद्रा में उछलते-कूदते दौड़ रहे थे। सड़क के दोनों ओर विस्तृत बाजार फैला था। कहीं-रेशमी और ज़री के कपड़ों की दूकानें थीं तो कहीं हीरे-जवाहरातों का विक्रय केन्द्र; कहीं-रमणियों की सौन्दर्य-प्रसाधन सामग्रियाँ बिक रही थीं तो कहीं पूजा-कर्म के लिए मृगछाला, कुशासन, चन्दन आदि। जोर-शोर से दूकानों में क्रय-विक्रय हो रहा था।

शीघ्रता से आगे बढ़ते हुए दोनों ने किले में प्रवेश किया। अफगान और हिन्दू सैनिकों की वीर-सज्जा से किले की शोभा और ही बढ़ रही थी।

कादिर बीरसिंह को लेकर अतिथि भवन में चला गया जहाँ उसके रहने-सोने आदि की सुव्यवस्था करके वह शीघ्रता से वापस लौटा। बादशाह को वीरसिंह के आगमन की खबर देनी आवश्यक थी।

कादिर थोड़ी ही दूर जा पाया था कि अपना नाम लेकर किसी के पुकारने का स्वर सुनकर वह रुक गया। स्वर की दिशा में दृष्टि दौड़ाकर देखा—ऊपर बारामदे में शाहजादा आदिल खड़े हाथ के इशारे से उसे बुला रहे थे। कादिर राज्य का गुप्तचर तो था ही, साथ ही आदिल खाँ का मुँहलगा नौकर भी था। दोनों आपस में निःसंकोच वार्त्तालाप किया करते थे।

आदिल खाँ को देखते ही कादिर चट बायीं ओर मुड़ पड़ा। सीढ़ी पार करके ऊपर पहुँचा। शाहजादा आदिल को सलाम करके बोला—"हुकुम हुजूर, बन्दा हाजिर है।"

"तुम्हारे रहने और न रहने से मुझे क्या फायदा?" आदिल ने होंठ बिदकाते हुए मुँह फेरकर कहा। कुछ रुककर बोला—"तुम तो कहा करते थे कि यहाँ एक से बढ़कर हजारों हैं। मुझे एक का भी दीदार नहीं नसीब हुआ। इधर मैं कई दिनों से तुम्हें देखता न था। कहाँ चले गये थे?

"हुजूर मेवाड़ चला गया था...।"

"मैं खूब समझता हूँ तुम्हारा बहाना"—आदिल ने सिर हिलाते हुए कहा—"नहीं कर सकते हो तो साफ-साफ कहो। अब्बाजान का डर है नहीं तो मैं खुद...।"

"शाहजादे एक वायदा और"—कादिर ने मुस्कुराते हुए कहा—"अगर कल दोपहर तक आपकी तमन्ना पूरी नहीं कर सकूँगा तो आपका जूता मेरा सिर।"

"ठीक है। यह भी देख लूँगा।"

"तो इजाजत दीजिये। बादशाह सलामत के पास जाना है।"

"अभी?"

"जी हाँ।"

"अच्छा जाओ। लेकिन कल...।"

"विश्वास कीजिये..."—दृढ़तापूर्वक कादिर बोला और मुड़ते हुए शीघ्रता से वापस लौट पड़ा।

१६

आदिल खाँ की रंगीनियाँ

अरुणिमा की सुनहरी चादर ओढ़कर जब प्रकृति जल, थल तथा आकाश पर अपनी चित्ताकर्षक मुस्कान भरने लगी तो मलका लाद ने पति के बालों में अपने दायें हाथ की कोमल अँगुलियाँ फेरते हुए मधुर स्वर में कहा—"आलमपनाह, रात बीत गयी।"

"चाँद के रहते रात कैसे जा सकती है?"—कहते-कहते शेरशाह ने बेगम को अनुरागपूर्ण दृष्टि से देखा। मलका ने लाज से मुँह फेर लिया। कुछ रुक कर बोली—"आपको तो दिन में भी तारे नजर आते हैं!"

"यही तो खूबी है इन निगाहों की। सच पूछो तो इन्हीं की वजह से हुस्न की अदाएँ कायम हैं।"

लाद के हृदय में सोया नवयौवन एक बार पुनः जाग उठा। शेरशाह की मीठी बातों से उसमें अतीत का अल्हड़ उन्माद छलक उठा। चुनार की राग-रंगपूर्ण रातें, मधुर मिलन और सहवास का स्मरण करते ही मलका के नयनों में किशोरियों की-सी मादकता छा गयी। उसने निचले होंठ को दाँतों से दबा कर मुस्कान छिपाने का प्रयास किया परन्तु शेरशाह की नजरों से बच न सकी। शेरशाह उठ बैठा। दायें हाथ की अँगुली से मलका की ठुड्डी उठाते हुए बोला—"इंशा अल्लाह! तुम अब भी वैसी ही हो। जी चाहता है कि तुम इसी तरह मेरे सामने बैठी रहो और मैं तुम्हें देखता रहूँ।"

"सुलतान कहीं मेरी हँसी तो नहीं उड़ा रहे हैं"—मलका ने पलकें झुकाते हुए कहा—"मैं इस काबिल कहाँ ?"

"नहीं बेगम, यह तुमने कैसे सोच लिया"—शेरशाह ने शीघ्रतापूर्वक कहा— "शायद तुम्हें नहीं मालूम कि मेरे दिल में तुम्हारे लिए कितना प्यार है। उसी के सहारे तो आज मैं अफगानों का झण्डा ऊँचा कर पाया हूँ। शेरशाह सिर्फ प्यार चाहता है। तुमने उसकी भीख देकर जिन्दगी भर के लिए ऐहसानमन्द बना दिया। तवारीखों में जब तक शेरशाह याद किया जायगा तब तक बेगम लाद को भी दुनिया याद करेगी।"

लाद ने दृष्टि उठाकर शेरशाह के भावपूर्ण, गम्भीर चेहरे की ओर देखा; फिर सहज भाव से बोली—"यह मेरी खुशकिस्मती है आलीजाह।"

शेरशाह कुछ कहने जा रहा था कि सहसा पास ही किसी मस्जिद से उच्च स्वर में बोलते हुए मुल्ला की अजान से वातावरण गूँज उठा। शेर खाँ शीघ्रता से उठ खड़ा हुआ; बोला—"नमाज का वक्त हो गया।"

मलका ने उठकर मशहरी की डोर खींचते हुए पूछा—"लौटने में देर लगेगी क्या ?"

"देर तो जरूर हो जायगी क्योंकि आज जुमेरात है और एक आदमी मेवाड़ से आया है। उससे भी मिलना है"—आगे बढ़ते हुए बादशाह बोला। सहसा रुककर उसने पूछा—"कुछ खास बात है क्या ?"

"कुछ नहीं, यों ही। मेहर के बारे में आपकी राय लेनी थी।"

"मेहरुन्निसा ? उसके लिए यही अच्छा होगा कि वह शाहजादा आदिल को पसन्द करे क्योंकि मेरे बाद तख्त का वारिस वही होगा। वैसे उसकी ख्वाहिश। तुम उससे बातें कर लेना। मेहर को तुमने आज बुलाया भी है ?"

"जी हाँ। वह आती ही होगी।"

"ठीक है मैं चलूँ। तुम खुद निबट लेना। ऐसे मामलों में औरतें मर्दों की बनिस्बत ज्यादा चतुर और कामयाब साबित हुई हैं।"—कहता हुआ शेरशाह शीघ्रता से रनिवास के बाहर निकल गया।

महल में प्रति दिन की तरह चहल-पहल शुरू हो गयी। धीरे-धीरे दिन चढ़ा। वह विशाल भवन जो संसार समुद्र में पोत की भाँति चल रहा था फिर जन-कलरव से मुखरित हो उठा। समस्त व्यापार चालू हो गये, परन्तु विलास और शराब के दौर में जीवन का आनन्द लेने वाला आदिल खाँ बिस्तर पर पड़ा स्वप्नों की दुनिया में डूबा हुआ था। बगल की चौकी पर सोने के कामदार खाली गिलास रखे हुए थे। धूपदान से यद्यपि धूम नहीं निकल रहा था फिर भी कमरे में सुगन्ध छायी हुई थी।

आदिल अँगड़ाइयाँ लेते हुए करवटें बदल रहा था कि सहसा किसी के बलिष्ठ हाथों ने उसे झकझोर कर चैतन्य कर दिया। आगन्तुक बोला—"भाई जान उठिये, आज अभी तक सो रहे हैं?"

आदिल ने आलस्यपूर्ण स्वर में पूछा—"क्या बात है जलाल भाई? आज बड़े सबेरे आ पहुँचे?"

"आपको भीतर महल में बुलाया गया है न?"

"मुझे? क्यों?"—आदिल ने आश्चर्यपूर्वक पूछा। पलकों को मलते हुए वह शीघ्रता से उठ बैठा। रुककर कुछ याद करते हुए शीघ्रता से बोल उठा—"ओह! मैं तो भूल ही गया था। अभी चलता हूँ। लेकिन एक बात तो बताओ जलाल भाई?"

"कहिये।"

"अम्मीजान ने बुलाया है, क्यों?"—आदिल ने रहस्यमय ढंग से प्रश्न किया था। अनुमान लगाते हुए तुरन्त बोला—"कहीं मेहर का मामला तो...?"

जलाल ने निःसंकोच, किन्तु हिचकते हुए उत्तर दिया—"मेरे ख्याल से यही बात हो सकती है।"

"लेकिन इस बाबत तो मैंने पहले ही कह दिया था कि उसमें मुझे कोई दिलचस्पी नहीं है! तुम्हीं बताओ, उस गूँगी-बहरी जैसी कठपुतली को कौन पूछेगा?" मुस्कुराते हुए आदिल ने कहा—"वह हुस्न किस काम का जिसमें नज़ाकत न हो!" शील जहाँ मर्यादा से निकल कर बाहर हो जाता है वहीं निर्लज्जता का आरम्भ हो जाता है। विलासी आदिल में शील, मर्यादा और लज्जा सबका अभाव था।

आदिल की बात पर जलाल पहले तो संकुचित हो कुछ ठिठका, परन्तु शीघ्र ही वह सँभल गया और खिलखिलाकर हँस पड़ा। उसके हँसने के दो कारण थे, एक तो यह कि उसके और मेहर के बीच से उसका बड़ा भाई स्वतः पैर खींच रहा था। दूसरे, इतने पास रहकर भी आदिल मेहर को परख न पाया; आश्चर्य का विषय था। मेहर-सा सौन्दर्य चिराग लेकर ढूँढ़ने पर भी नहीं मिलता। उसका मधुर स्वभाव कदाचित् आदिल पहचान न सका। जलाल जानता था कि परवाना फूल पर नहीं, आग पर ही मरता है। अपना रास्ता साफ देखकर जलाल का सीना हर्ष से फूल उठा। उसने आदिल का समर्थन करते हुए उसे यह सलाह दी कि वह मलका से स्पष्ट कह दे कि मुझे मेहर के बारे में जरा भी रुचि नहीं है। थोड़ी देर रुकने के बाद जलाल ने आदिल से विदा ली और वह शाही उद्यान में टहलने चल पड़ा।

हाथ-मुँह धोकर आदिल खाँ मलका के पास आया। उस समय मेहर भी उपस्थित थी। मेहर को देखे महीनों बीत गये थे। उसने मुस्कुरा कर खड़े होते हुए आदिल खाँ का स्वागत किया; फिर झुक कर सलाम करती बैठ गयी। आदिल ने आगे बढ़कर मलका के हाथ चूमें।

हर्ष-विभोर मलका ने शाहजादे के मस्तक पर प्यार की छाप लगाकर मधुर कण्ठ से कहा—"बैठो बेटा, तबियत तो अच्छी है न?"

"मेहरबानी है, कैसे याद किया अम्मीजान ने?"

"कोई खास बात नहीं है?" कहते-कहते मलका ने भेद-भरी दृष्टि से मेहर की ओर देखा जो पलकें झुकाये लाज से गड़ी जा रही थी। यह जानते हुए भी कि जलाल खाँ को नहीं बुलाया गया है, मलका ने इधर-उधर देखते हुए धीरे से पूछा—"शाहजादे जलाल खाँ नहीं आये?"

"सुबह तो वह मेरे पास आये थे। यहाँ नहीं आये क्या?" आदिल ने विस्मित हो पूछा। फिर अनुमान लगाते हुए बोल उठा—"कहीं टहलने चला गया होगा।

आदिल की इस बात पर मेहर ने पलकें उठा कर कनखी से उसकी ओर देखा। फिर पूर्ववत् शान्त हो गयी। आदिल खाँ को यह देखकर आश्चर्य हो रहा था कि वह मेहर जो चुनार और जौनपुर में इतनी चञ्चलता से उससे बातें किया करती थी वह आज इतनी गम्भीर और चुप क्यों बैठी है? उसने उसकी ओर गौर से देखा, कुछ देर तक देखता रहा, भावों का एक विचित्र मंथन उसके मनमें उत्पन्न हो गया था।

मेहर बाहर जाने को उत्सुक हो रही थी। वह जानती थी कि जलाल और कहीं नहीं, बाग में ही घूमने गया होगा।

मलका को दोनों का मौन खल रहा था। वह कभी आदिल की ओर देखती कभी मेहर की ओर। सहसा उसके मस्तिष्क में एक युक्ति बिजली की तरह कौंध गयी। उसने शीघ्रता से आदिल की ओर देखते हुए कहा—"बड़े मौके से आये शाहजादे, आज मेहरबानू शायरी सुनाने वाली हैं। तुम्हें पता नहीं यह ऊँचे दर्जे की...।"

"आलीजाह!"—मेहर चौंक कर उठ खड़ी हुई।

"बैठो-बैठो, बेटी"—मलका ने मेहर का हाथ पकड़ते हुए कहा—"यहाँ और कौन बाहरी आदमी है। सुना दो न दो-एक कड़ियाँ।"

"हाँ, हाँ सुनाओ न, हर्ज क्या है?"—आदिल ने भी मलका का समर्थन किया—"मुझे तो पता ही न था कि तुम्हें शायरी करने का भी शौक है?"

मेहर दुविधा में पड़ गयी। समझ में न आया क्या करे। मलका की बात काटना उचित न था। वह सिर झुकाये चुप-चाप बैठ गयी। धीरे से अनुनयपूर्ण स्वर में बोली—"अम्मीजान, अगर शाम को आपकी इजाजत हो...।"

"अब लगीं तुम बहाना बनाने"—मलका बीच ही में बोल उठी—"चलो शुरू करो।"

मेहर कभी लाद मलका की ओर देखती, कभी आदिल खाँ की ओर। मानसिक व्यस्तता सँभालती वह मीठे स्वरों में गा उठी—पत्रियाँ फिर लिख दी जायगीं...।

आदिल खाँ मन्त्र-मुग्ध-सा मेहर की ओर देख रहा था। मलका ने हर्ष से दाद दिया—"वाह, क्या खूब!"

मेहर ने पूर्व पंक्तियों को पुनः उसी मधुरता से दुहराया और दबी जबान में आगे गा उठी—पत्रियाँ फिर लिख दी जायँगी।

आदिल के आश्चर्य का बाँध टूट चुका था। मुँह से प्रशंसा का कोई शब्द न निकल सका। उसने कभी इस बात की आशा भी न की थी कि मेहर का हृदय इतना सजीव हो सकता है, जिसके साथ जीवन की एक लम्बी अवधि बिताकर भी वह उससे काफी दूर रहा। मलका ने मेहर की प्रशंसा के पुल बाँधते हुए आदिल की ओर देखा। घायल शिकार की तरह उसके हृदय की वेदना चेहरे पर झलक रही थी। अपनी योजना सफल होती देख मलका का हृदय बाग-बाग हो उठा।

उसे यह पूर्ण विश्वास हो गया कि शाहजादा अब अपने साथ मेहर के निकाह से मुँह नहीं मोड़ सकता।

एक ओर तो लाद द्वारा अपनी प्रशंसा सुनकर मेहर का कलेजा मुँह को आरहा था, दूसरी ओर आदिल की दृष्टि में अपने प्रति विचित्र माद-कतापूर्ण आकर्षक और अनुराग की जो झलक उसे दिखायी दे रही थी, इससे उसका हृदय भावी आशङ्का से काँप उठा। क्षण-भर के लिए वह भयभीत हो गयी कि कहीं वह दोनों भाइयों के बीच दीवार बनकर खड़ी न हो जाय। दुविधा में उलझी, मलका से अनुमति लेकर वह बाहर चली गयी।

लाद ने लम्बी साँस लेते हुए आदिल की ओर अपना ध्यान केन्द्रित कर दिया। मुस्कुराते हुए पूछा—"मेहर की शायरी पर तुमने कोई दाद न दिया। पसन्द नहीं आयी क्या ?"

"पसन्द ? लाजवाब रूबाई थी अम्मीजान"—आदिल ने गम्भीर स्वर में कहा। फिर चेहरे की गम्भीरता छिपाते हुए मुस्कुराकर बोला—"मैं तो यही सोचता रह गया कि किन लफ्जों में उसकी तारीफ करूँ।"

"माशा अल्लाह !—" मलका प्रसन्नता से बोल उठी। उन्होंने देखा कि मेहर का जादू पूर्ण रूप से आदिल पर असर दिखा चुका है। एक बार जी में आया कि अभी आदिल और मेहर की निकाह का निर्णय कर लें, परन्तु शीघ्रता में कहीं काम खराब न हो जाय इसलिये उसने उस समय कुछ न कहा। वस्तु के अभाव में आकर्षण और बढ़ जाता है। प्यासा भँवरा फूल की ओर तेजी से उड़ता है, परन्तु रस-पान करते ही उसकी चाल में मंथरता आ जाती है। मलका जानती थी कि दिन-भर आदिल मेहर को प्राप्त करने की योजना के जाल बुनने में तल्लीन रहेगा। दिन-भर भूख से पीड़ित कबूतर के सामने शाम को ज्योंही चावल के दाने फेकें जायँगे वह स्वयं जाल में फँस जायगा।

आदिल खाँ और मेहर सम्बन्धी जो समस्या लाद और शेरशाह के मस्तिष्कों में चक्कर काट रही थी, उसका हल तो एक ही था; परन्तु कारण भिन्न-भिन्न थे। यद्यपि लाद को आदिल से कहीं अधिक जलाल पसन्द था, परन्तु यह सोचते ही कि शेरशाह के बाद आदिल बादशाह होगा, उसका विचार बड़े शाहजादे पर केन्द्रित हो जाता। मीर अहमद की मृत्यु के बाद मेहर लाद की गोद में बेटी की तरह पली थी। मलका के श्वसुर पक्ष का रक्त उसकी रग-रग में भिना था। मेहर को देखते ही मलका के नेत्रों के समक्ष अपना अतीत साकार हो उठता। उसकी यह हार्दिक इच्छा थी कि मेहर मुल्क की मलका बने, जिससे उसके पिता की व्याकुल आत्मा को शान्ति मिले और मेहर की ममता का उचित पुरस्कार दिया जा सके। दूसरी ओर शेरशाह के इस निष्कर्ष पर पहुँचने के कारणों में असमानता थी। वह जानता था कि वैधानिक रूप से आदिल ही उसका उत्तराधिकारी है। इस नीति में परिवर्तन का परिणाम गृह-कलह तथा भविष्य में शासन दुर्व्यवस्था है। शेरशाह आदिल के व्यवहारों से भलीभाँति परिचित था। उसकी दृष्टि में वह बहादुर, जोशीला और आत्मगर्व-विभूषित व्यक्ति अवश्य था, परन्तु दूसरी ओर लापरवाह और अत्यन्त विलासी भी था। उसके लिए किसी ऐसे जीवन-साथी की नितान्त आवश्यकता थी जो अपने पवित्र प्रेम में उसे बाँधकर उसका जीवन संयमित और भावनाएँ गम्भीर बना सके ताकि वह अपने जीवन के उत्तरदायित्व को भली भाँति समझ सकें। इस प्रकार की जीवन-संगिनी के समस्त गुण शेरशाह को मेहर में दिखायी दिये जिससे शाहजादी का उसके साथ निकाह का निर्णय बादशाह के लिये स्वाभाविक ही था। आदिल का मेहर के प्रति विराग इस समस्या का आधार बना हुआ था जिसको लाद ने बड़ी चतुरता से सुलझा लिया। मेहर के रूप और हृदय की सरस भावनाओं ने आदिल के रोम-रोम को वशीभूत कर लिया है, यह मलका स्पष्ट देख रही थी। अब

काम बाकी था, शेरशाह के सामने आदिल का निर्णय स्पष्ट करना और दिल्ली जाने के पूर्व निकाह का कार्य समाप्त कर देना। शाम को लाद ने शेरशाह के सामने आदिल से इस बात का निर्णय करना उचित समझा। गोधूलि-बेला में आदिल को पुनः आने की आज्ञा देती हुई मलका उठ खड़ी हुई। चञ्चल भावनाओं के वशीभूत आदिल मलका के बुलाने का कारण पूछने का साहस भी न कर सका। नम्रता से आदाब बजाता हुआ कमरे के बाहर चला गया।

आदिल के चारों ओर अब एक विचित्र नवीनता का साम्राज्य फैल चुका था। ऐसा प्रतीत होता था मानो वर्षों से सोते-सोते वह एकाएक जाग उठा हो। वह शीघ्रता से अपने कमरे में पहुँचा। कपड़े बदले। आदमकद शीशे के सामने जा खड़ा हुआ। कुछ क्षणों तक अपना प्रतिरूप निहारता रहा। उसे ऐसा प्रतीत हुआ मानो वह काफी बदल गया हो। सागर की उन्मत्त लहरें जैसे एक झील के शान्त अञ्चल में गम्भीर हो सो गयी हों। वह शीघ्रता से कमरे के बाहर आया। धीरे-धीरे उसके पद आप-से-आप मेहर के कमरे की ओर बढ़ने लगे। लगता मानो कोई चुम्बक उसको अपनी ओर आकर्षित किये जा रहा है। मेहर के कमरे में जाकर उसे ज्ञात हुआ कि वह नमाज़ पढ़ने में व्यस्त है। निराश हो आदिल उल्टे पाँव वापस लौटा। मन में विचारों का भीषण मन्थन हो रहा था।

धीरे-धीरे पैर बढ़ाता आदिल नीचे उतरा। घोड़े पर सवार हुआ और लाल बाग की ओर चल पड़ा। यह बाग उसके आमोद-प्रमोद का गुप्त स्थान था। बाग अत्यन्त ही रमणीक था। हरे-भरे वृक्षों के बीच में सङ्गमरमर का एक सुन्दर फौव्वारा था। अगल-बगल बैठने के लिए स्फटिक शिलाएँ रखी हुई थीं। बाग के एक ओर तिमञ्जिला हवादार भवन था। कुछ देर बाग में ठहरने के पश्चात् आदिल मस्ती में झूमता हुआ उसकी छत पर जा पहुँचा। मुँडेरे पर हाथ टेककर

अन्यमनस्क भाव से इधर-उधर देखने लगा। कभी वह द्रुत-प्रवाहित यमुना के नीलाञ्चल को देखता, कभी दिल्ली शहर की अट्टालिकाओं और लहलहाते छोटे-बड़े वृक्षों के अन्त में क्षितिज-रेखा को। कभी टेढ़ी-मेढ़ी सड़कों पर आते-जाते जन-समुदाय को देखता, तो कभी गगनाञ्चल में स्वतन्त्र विहार करते, चहचहाते चिड़ियों के दलों को।

उसे खड़े कुछ ही क्षण बीते होंगे की एक दासी हाथ में पानदान लिये आती दिखायी दी। वह ऊपर बारहदरी से आ रही थी और नीचे जा रही थी। आदिल ने आगे बढ़कर उससे पान की एक गिलौरी ले ली। उलट-पुलट कर बीड़े के चारो ओर लिपटे सोने के वर्क को देखता वह पुनः पूर्व स्थान पर आ खड़ा हुआ। दासी कुछ देर रुकी, फिर शीघ्रता से नीचे उतर गयी।

आदिल खाँ पान मुँह में डालने ही जा रहा था कि बगीचे के भवन के बगल वाली एक अट्टालिका की छत पर दृष्टि पड़ते ही वह चौंक उठा और अँगुलियो में दबा पान ज्यों-का-त्यों रह गया। आदिल ने देखा कि एक कोमलाङ्गिनी रूपवती अपनी सौन्दर्य-राशि का जादू बिखेरती, अपने अस्त-व्यस्त वस्त्रों को बिखेरे, जल-क्रीड़ा करती, स्नान करने की भूमिका बाँध रही थी। उसने धीरे-धीरे अपनी कोमल काया पर लिपटे रेशमी वस्त्रों को उतार कर एक ओर रख दिया। उसका शरीर सोने-सा दमक उठा। रेशम से मुलायम केश पवन में लहरा उठे। आदिल की आँखों में उसके रूप का नशा छा गया। वह आगे बढ़कर उसकी छत के ठीक ऊपर आ खड़ा हुआ।

स्नान करते-करते सुन्दरी की दृष्टि भी सहसा ऊपर उठी। आदिल उस खिली कलिका का मुँह देखते ही चौंक उठा। उसे ख्याल आया कि इस युवती को उसने कहीं देखा है। सहसा कुछ स्मरण कर उत्साह से वह उछल पड़ा। बिजली की तरह याददाश्त मस्तिष्क में लहर गयी। आदिल को अपने निर्णय पर पूरा भरोसा था कि यह युवती वही

है जिसे एक बार उसने जौनपुर में नीलामी में खरीदा था और फिर काफी अनुनय करके उसका बूढ़ा बाप उसे उससे वापस ले गया था। आदिल का हृदय एक अनूठी मादकता से शराबोर हो गया। उसने हाथ के बीड़े को मुस्कुराते हुए युवती की ओर उछाल दिया जो उसके दाएँ कन्धे पर गिरा और उसके उरोजों का स्पर्श करता भूमि पर जा पड़ा।

कुछ क्षणों तक तो युवती मुँडेरे की आड़ में छिपने का असफल प्रयास करती रही। पर जब उसने आदिल को अपनी जगह से हटते न देखा तो तीव्र दृष्टि से उसकी ओर घूरती पलक मारते साड़ी को शरीर के चारों ओर लपेट कर नीचे भागी।

उसकी इस अदा पर आदिल खिलखिलाकर हँस पड़ा। अभी वह कुछ निर्णय भी न कर पाया था कि दूसरे ही क्षण वह युवती पुनः ऊपर आयी। उसके साथ एक नवयुवक था। युवती आदिल की ओर दायें हाथ की अँगुली से संकेत करती उस युवक से रोषपूर्ण स्वर में कुछ कहने लगी। युवक की आँखों में खून उतर आया था। क्रोध से वह काँपने लगा था। घूरती आँखों से आदिल खाँ की ओर देखा। बात बिगड़ती देखकर आदिल खाँ ने वहाँ ठहरना उचित न समझा। वह तत्काल मुँडेरे के पास से हट गया और शीघ्रता से सीढ़ियों को पार करके नीचे उतर आया। कुछ देर वहाँ रुकने के बाद वह किले में वापस लौटा। उसकी आँखों में अकेली छत पर स्नान करती युवती का सौन्दर्य लहर रहा था।

महल में चहल-पहल काफी बढ़ गयी थी। नमाज पढ़कर तथा यतीमों व फकीरों को खैरात बाँट कर सुलतान किले में वापस आ चुका था।

१७

इन्साफ़ की एक अमिट छाप

नमाज़ पढ़ने और खैरात बाँटने का कार्य समाप्त करके शेरशाह अपने निजी बैठक में बैठा आवश्यक पत्रों को पढ़ ही रहा था कि पहरे पर खड़े सिपाही ने उसे राजपूत बीरसिंह के आने की सूचना दी। शेरशाह उससे मिलने को स्वतः इच्छुक था। उसने उसे फौरन उपस्थित करने की आज्ञा दी।

बीरसिंह सुलतान की अनुमति पाकर लम्बे डग भरता कमरे में आया। झुककर नम्रतापूर्वक बादशाह का अभिवादन किया। कमरे की सजावट, और शेरशाह का ठाट-बाट देखकर उसकी आँखें चकाचौंध हो गयीं। मन में सोचा कि तकदीर की चाल भी कितनी अलौकिक है! एक साधारण जागीरदार के बादशाह होने की बात पर भला कौन विश्वास करेगा? अब उसे विश्वास हो गया कि बादशाहत वंशगत अथवा पितृगत नहीं होती। यह भी व्यक्तिगत वैभव है जो केवल अपने किसी संचित पूर्व जन्म के कर्म-फल से अथवा किसी पुण्य के प्रसाद से प्राप्त होता है; अन्यथा सब क्यों नहीं बादशाह हो जाते। उसने क्या कम प्रयास किये? किन्तु एक किला भी तो न पा सका?

शेरशाह ने मुस्कुरा कर बीरसिंह का स्वागत किया—"आइये ठाकुर साहब, खैरियत तो है?"

"मेहरबानी है आलमपनाह की"—बीरसिंह सुलतान के संकेत पर बैठते हुए बोला—"यह मेरा सौभाग्य है कि हुजूर ने मुझ गरीब को याद किया।"

"आप हमारे दोस्त हैं"—व्यवहारिकता की ओट से राजनीति का पासा फेंक कर बादशाह बोला। बातों ही बातों में उसने धीरे-धीरे मेवाड़ की शासन-व्यवस्था का पूरा ज्ञान उससे प्राप्त कर लिया। बीरसिंह एक ओर राजपूतों की वीरता का वर्णन कर रहा था तो दूसरी ओर उनकी आपसी फूट और एक दूसरे के प्रति अविश्वास की दुर्बलता भी प्रकट करता। अंत में उसने बड़ी दृढ़ता से सुलतान को आश्वासन दिया—"बन्दगाने आली! आप मेवाड़ पर जरूर हमला करें। मुझे पूरा यकीन है कि आपकी फतह होगी।"

"अगर ऐसा हो गया तो हम आपको खुश कर देंगे"—सुलतान ने हर्ष से अपनी जाँघ पर हाथ पटकते हुए कहा—"लेकिन इस तरह खुलेआम जंग शुरू कर देना अफगान सल्तनत के लिए नुकसान-देह होगा। एक चाल काम आ सकती है, अगर आप मेरी मदद करें तो...।"

बीरसिंह चकराया! हे भगवान्! यह खतरनाक व्यक्ति अब मुझसे क्या काम लेना चाहता है? परन्तु साथ ही अपनी योग्यता का स्मरण होते ही वह फूल उठा। वह भी इस योग्य है कि बादशाहों को भी उसकी जरूरत पड़ती है। उत्साह से बोला—"कहिये हुजूर। बन्दा जी-जान से तैयार है।"

"मेवाड़ के कुछ खास-खास सरदारों के नाम मैं दोस्ताना खत लिख देता हूँ। आप उन्हें किसी तरह अपने राजा के पास पहुँचा दीजिये"—सुलतान ने गम्भीरतापूर्वक कहा। उसकी इस नीति को बीरसिंह भाँप न सका। बात यह थी कि मैत्रीपूर्ण पत्रों से सरदारों के ऊपर राजा का जरा भी यकीन न रह जायगा। वह उन्हें अफगान

मुसलमानों का मित्र समझ बैठेगा और इस प्रकार हिन्दुओं में वह सहज ही अविश्वास उत्पन्न कर उनमें फूट डाल सकेगा। जब मेवाड़ का राजा एक ओर घबराहट से परेशान होगा तब दूसरी ओर बादशाही फौज मेवाड़ की ओर बढ़ेगी। यह सोचकर सुलतान ने शीघ्रता से पूछा—"फिर जानते हो तुम्हारे लिए क्या ईनाम होगा बीरसिंह?"

"क्या होगा आलमपनाह?" बीरसिंह स्वार्थ के सम्बन्ध में चतुर था।

"यह अभी नहीं बताऊँगा। करके दिखा दूँगा और आप भी जीवन-भर याद रखेंगे...।" बात यद्यपि स्पष्ट न थी, फिर भी बीरसिंह ने किसी भारी पुरस्कार का अनुमान लगा लिया।

उसे अच्छी तरह सिखा-पढ़ा कर सुलतान ने उसे बिदा कर दिया। दिल्ली पहुँचने के पूर्व ही उन्हें अपनी योजना को कार्यरूप में परिणत कर देना था। इस विषय पर शेरशाह कुछ क्षणों तक सोचता रहा। सहसा मन-ही-मन दृढ़तापूर्वक बोल उठा—'अगर इस राजपूत ने मजबूती से हाथ मिलाया तो चुटकी बजाते मेवाड़ मुट्ठी में आ जायगा। राणा को अपने मित्रों पर सन्देह हो जाना चाहिये। फिर उसे हराते कितनी देर लगती है?'

इस योजना पर भली-भाँति विचार करके शेरशाह उठ खड़ा हुआ। शाम हो चुकी थी और आम-दरबार का समय हो गया था। मन्थर गति से वह बाहर आया। पहरेदार ने झुक कर आदाब किया। बुर्जियों के चारों ओर तैनात सैनिक चैतन्य हो गये। सुलतान धीरे-धीरे आगे बढ़ा। सहसा ढोल और नगाड़े की तुमुल-ध्वनि से वातावरण गूँज उठा। चार हथियारबन्द सिपाही सुलतान के पीछे-पीछे चलने लगे। गलियारा पार करते ही सहसा उल्टे आदिल खाँ सामने से आता दिखायी दिया। नित्य की अपेक्षा उस दिन वह अधिक गम्भीर दिखायी

दे रहा था। बादशाह को देखते ही उसने झुक कर नम्रतापूर्वक आदाब किया, परन्तु बोला कुछ नहीं। सुलतान मुस्कुरा कर आगे बढ़ गया। आदिल के भाव देखकर उसे यह विश्वास हो गया कि लाद का उसके विषय में निर्णय बहुत कुछ ठीक है। दोपहर को जब मलका ने उसे यह बताया कि उसने अपनी चाल से आदिल का ध्यान पूर्ण-रूप से मेहर की ओर आकर्षित कर लिया है, तो शेरशाह प्रसन्न ही हुआ। वह जानता था कि यदि वह चाहे तो आदिल को मेहर से निकाह करना ही पड़ेगा; परन्तु ऐसा करना उसके दृष्टिकोण के विपरीत था। उसे मेहर और आदिल दोनों ही प्यारे थे। दोनों का जीवन-पथ प्रशस्त करना उसका अपना कर्त्तव्य था। शेरशाह यद्यपि इस बात से भली-भाँति परिचित था कि मेहर मन-ही-मन जलाल को प्यार करती है, पर आदिल के जीवन में उसके सहयोग की नितान्त आवश्यकता थी जिसके कन्धों पर कुछ ही वर्षों में अफगान सत्ता का एक महान् उत्तरदायित्व आनेवाला था। सुलतान को विश्वास था कि मेहर उसे सही रास्ते पर ला सकती है।

विचारों में उलझा सुलतान दरबार में आया। सभी मन्त्री सरदार और सामन्त उठ कर खड़े हो गये। सबका अभिवादन स्वीकार करके सुलतान एक उच्च रत्न-जटित सिंहासन पर बैठ गया। उसकी आज्ञा से हैदर ने उस दिन के दरबार की कार्यवाही प्रारम्भ करने की घोषणा की। शेरशाह की आज्ञानुसार दरबार के अन्य कार्य प्रारम्भ होने से पहले उन व्यक्तियों की प्रार्थनाओं पर विचार किया जाना आवश्यक था जिनके अधिकारों का हनन करने का किसी व्यक्ति ने दुष्प्रयास किया हो। ऐसे मामलों का निर्णय सुलतान स्वयं करता था।

हैदर ने पुनः घोषणा की—"इस आम दरबार में यह एलान किया जाता है कि अगर कोई शख्स किसी की बदनीयती का शिकार हुआ हो या उस पर किसी ने जुर्म किया हो, उसके खिलाफ, चाहे वह

सरकारी आदमी हो या रियाया, सामने आकर अपनी फरियाद पेश करे। शाने-अफगान, आलमपनाह सुलताने आजम परवरदिगार शेरशाह सरदार बहादुर का हुक्म है कि हर एक फरियादी की आवाज की इज्जत की जाय और जिस किसी शख्स ने कानून को अपने हाथ में लेकर उसे अपनी बदचलनी का शिकार बनाया हो उसे अपने गुनाहों की पूरी-पूरी सजा मिले।' फरमान पढ़कर हैदर ने इधर-उधर देखा परन्तु कोई सामने न आया। गर्वपूर्ण नेत्रों से चारो ओर दृष्टि दौड़ाकर हैदर सुलतान के पास आया। नम्रतापूर्वक आदाब करते हुए बोला—"कोई फरियादी नहीं। आलमपनाह के मुल्क में किसी की जुर्रत नहीं कि किसी गरीब पर आँख उठाये। शेर और बकरी एक घाट पानी पी रहे हैं। हुजूर की मेहरबान साया में रियाया चैनो-आराम की जिन्दगी बसर कर रही है। किसी को रत्ती-भर तकलीफ नहीं। जिस तरह आसमान में सूरज के रहते अँधेरा नहीं हो सकता, उस तरह बन्दगाने आली की सल्तनत में गुनाहों की रीढ़ टूट चुकी है।"

"यह तो खुशी की बात है हैदर। रियाया के इतने पाक खयालातों ने हमें खुश कर दिया है"—शेरशाह इधर-उधर देखता गम्भीर शब्दों में बोला। कुछ सोचकर उसने आगे कहा—"फिर भी हमें चुस्ती से काम लेना चाहिये क्योंकि दुनिया को चमकाने वाले सूरज पर भी स्याह परदा डालकर बादलों के छोटे टुकड़े उसकी सल्तनत में कभी-कभी अँधेरा फैला देते हैं।"

"हम तो गुलाम हैं हुजूर। अपना गला देकर भी हुक्म का पालन किया जायगा"—हैदर ने अपनी स्वामिभक्ति प्रकट करते हुए कहा। दरबार की अन्य कार्यवाही प्रारम्भ करने के लिए उसने बादशाह की अनुमति ली, पर अभी उसका ऐलान भी न कर पाया था कि सहसा एक मर्म-भेदी करुण चीत्कार वातावरण में गूँज उठा। एक नवयुवक सिर के बाल बिखराये, अस्त-व्यस्त कपड़े पहने, कुछ चिल्लाता हुआ सामने आया।

उसकी छोटी दाढ़ी और नोकीली मूँछें थीं, चेहरा रोआबदार, शरीर चुस्त और गठीला था। उसकी आखों में क्रोध की लालिमा छायी हुई थी; परन्तु चेहरे पर निराशा और भय का पीलापन नाच रहा था। हाथ-पाँव रह-रह कर काँप उठते—क्षणिक भय और स्थायी क्रोध से। सुलतान के सामने हाथ फैलाकर वह काँपते स्वर में बोल उठा—"आलमपनाह, हुजूर की पाक हुकूमत में खुले आम हमारी इज्जत पर कीचड़ उछाला गया है...।"

"तुम्हारी इज्जत पर कीचड़...कौन कहता है?"—हैदर ने कुछ क्रोध-मिश्रित वाणी में उसे डाँटा।

"हैदर!"—शेरशाह ने हैदर को बीच ही में टोका—"तुम बैठ जाओ। फरियादी की आवाज हम तक पहुँचने दो"—हैदर लज्जित हो चुपचाप एक ओर बैठ गया। फिर आगत युवक की ओर देखकर उसने कहा—"साफ-साफ कहो नौजवान, किसने तुम्हारी इज्जत पर कीचड़ उछाला है?"

"हुजूरे आला, जान बख्शी हो, क्योंकि जिस आदमी ने मेरी इज्जत पर कीचड़ उछाला है उसका नाम लेते ही फरियादी की जबान के कलम हो जाने का खौफ है..."

"कोई डर नहीं। तुम्हें जानबख्शी फरमायी जाती है। निडर होकर कहो"—बादशाह बोला। फरियादी के मुँह से बात निकलती न थी। कुछ ठहर कर कहने लगा—"आज दोपहर को जब मेरी बीबी छत पर अकेली नहा रही थी, उस पर बेहया मस्ती से चूर एक जवान ने"...कह कर वह क्षण-भर के लिए रुका, चारों ओर दृष्टि दौड़ायी और फिर कहना शुरू किया—"उसने अपनी छत पर खड़े हो, अकेली नहाती हुई मेरी बीबी के जिस्म पर पान का बीड़ा फेंक दिया और खुलेआम मेरी आबरू पर ठोकर मारी है। आलमपनाह, हम गरीब हैं, इज्जत ही हमारी

शान है, आबरू ही हमारा सब कुछ है। अगर हमारी गैरत छिन गयी तो...बिना पानी की जिन्दगानी...।"

"वाकई तुम पर जुल्म किया गया है। कौन है वह जालिम?"—सुलतान ने आगे झुकते हुए सहानुभूति प्रकट की। क्या तुम उसे जानते हो?"

"जानता हूँ आलीजाह, लेकिन उसका नाम बताने से डरता हूँ। उसका नाम सुनकर यह जमीन हिल उठेगी। दर्जनों तलवारें मेरी ओर खिंच जायँगी और...सल्तनत में तूफान की एक लहर उमड़ जायगी।"

"तुम हमारी हिम्मत को चुनौती देते हो"—शेरशाह गरज उठा। किन्तु तत्काल अपनी उत्तेजना सँभालता हुआ कुछ रुककर संयमित स्वर में बोला—"तुम खुले दिल से मुजरिम का नाम कहो, चाहे खुद शेरशाह ही क्यों न हो, कानून किसी के लिए रियायत नहीं करता। वह अन्धे की लाठी है।"

फरियादी कुछ कहते-कहते रुक गया। उसका शरीर एक बार पत्ते की भाँति काँपा। मस्तक मानों विचारों के ऊहापोह से फटने-सा लगा। चेहरे पर भय, दुराशा और घबराहट के कारण निर्जीविता-सी छाने लगी। फिर हिम्मत बटोर कर वह फँसते स्वर में बोला—"परवरदिगार, बन्दा जान की खैर चाहता है। मेरी बीबी की इस तरह इज्जत लूटने वाला और कोई नहीं, खुद शाहजादा आदिल...।"

"आदिल खाँ"—बादशाह आश्चर्य से चौंक उठा। दरबारियों के रोम-रोम में बिजली की लहर-सी दौड़ गयी। वह कभी सुलतान के तमतमाये चेहरे की ओर देखते, कभी भय से काँपते नवयुवक की ओर। सैनिक रोष में जल उठे। हैदर ने म्यान से तलवार खींच ली। शाही परिवार पर ऐसा लांछन लगाने का दुस्साहस! उसने गरजती आवाज में युवक से कहा—"तू अपनी मौत से खिलवाड़ कर रहा है। शाहजादे पर झूठा इल्जाम लगाकर तूने शाने-अफगान की पगड़ी उछाली है।

तुझे...।" कहते-कहते हैदर स्तब्ध हो गया। बादशाह की गरजती आवाज से दरबार काँप उठा था। किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो हैदर चुपचाप बैठ गया। सुलतान कुछ क्षण चुप रहा। चेहरे पर कृत्रिम हर्ष की रेखाएँ उभाड़ते हुए उसने कहा—"तुम्हारी हिम्मत ने हमें खुश कर दिया। तुम्हारे ऊपर जिसने भी जुर्म किया है, उसे सजा जरूर मिलेगी। इन्साफ किसी का मुँह नहीं देखता। शाहजादा हो या कंगाल, कानून की निगाह में सब बराबर हैं।"

"एक अर्ज है आलीजाह"—कहते-कहते सेनापति मियाँ हाँसूँ उठ खड़े हुए।

"कहो।"

"बिना सबूत के फरियादी की बात क्या सच्च मान ली जायगी?"

सेनापति के इस प्रश्न पर सुलतान विचार-मग्न हो गया। समझ में न आया, क्या उत्तर दे। वह जानता था कि फरियादी इस विषय पर कोई प्रमाण नहीं उपस्थित कर सकता। पर इसका आशय यह तो नहीं कि उसकी बात झूठी मानकर ठुकरा दी जाय। कानून और इसमत की इज्जत तो रखनी ही पड़ेगी। उसने भूमि की ओर एकटक दृष्टि गड़ाये उस नवयुवक की ओर देखकर प्रश्न किया—"तुम्हारे पास अपने आरोप के लिए क्या सबूत है?"

नवयुवक काँप उठा। मन-ही-मन पछताने लगा। जोश में उसने मौत को आवाज दे दी थी। क्या सबूत पेश करे? पान की गिलौरी तो और किसी की भी हो सकती है? भय से उसकी घिग्घी बँध गयी। दायें हाथ की मुट्ठी में पकड़े पान के बीड़े को, मुट्ठी खोलकर उसने सामने कर दिया? बस यही मेरा सबूत है और मेरी बीबी...

'तुम्हारी बीबी'—उसे सबूत में हाजिर करो। हैदर तो पहले से जला था। सुलतान के कुछ बोलने के पहले ही वह शीघ्रता से कह उठा—"यह बीड़ा! सुलताने आलम, यह कोई सबूत नहीं। कहीं से

एक बीड़ा लाकर कोई आदमी शाही खानदान को अपनी साजिशों का शिकार बना सकता है।"

"सच है परवरदिगार! यह मुकद्दमा रद्द कर दिया जाय। फरियादी कोई पागल या बदनीयत आदमी मालूम होता है"—एक अन्य दरबारी ने हैदर का समर्थन किया।

"मुकद्दर के कशमकश में इन्सान को पागल करार दे देना माँबदौलत के उसूलों के खिलाफ है। इस आदमी के चेहरे पर उभरी लकीरें वाकई इन्साफ का तकाजा कर रही हैं"—सुलतान ने गम्भीरता से कहा। सहसा वह शीघ्रता से बोल उठा—"हम तुम्हारी फरियाद को कबूल करते हैं। तुम्हारा सबूत मेरे पास है।" कहते-कहते सुलतान ने पास में खड़े कादिर खाँ को आदिल को अदालत में उपस्थित करने के लिए कहा। कादिर शीघ्रता से महल में गया और कुछ ही देर में आदिल के साथ बादशाह के सम्मुख आ खड़ा हुआ। सुलतान ने आदिल की ओर घूर कर देखा। उसकी आँखें जल उठीं। इसकी विलासिता ने आखिरकार शाही खानदान के सिर पर कलङ्क लगा ही दिया। ऐसा पर निकम्मा शहजादा बादशाह होने पर क्या-क्या जुल्म करेगा? क्या इन्तहा है...!

अपने बुलाये जाने का कारण समझते ही आदिल भय से काँप उठा। कुछ निश्चय भी न कर पाया था कि सुलतान ने फरियादी की ओर संकेत करते हुए पूछा—"तुम इसे जानते हो?"

"नहीं आलीजाह! मैंने इसे कभी नहीं देखा"—आदिल ने साफ इन्कार कर दिया। हैदर का चेहरा प्रसन्नता से खिल उठा।

शेरशाह को जिस बात की आशङ्का थी, वह प्रत्यक्ष हो गयी। वह जानता था कि आदिल मिथ्या बोलने में पटु है। वह सभी बातों से मुकर जायगा। उसने आगे झुकते हुए मन्द स्वर में कहा—"शाहजादे, यह हमारे इम्तहान का समय है। तुम्हारी रग-रग में ऐसे बहादुर का

खून दौड़ रहा है जिसे मर जाना कबूल है, पर झूठ बोलना नहीं। उस शान की इज्जत आज तुम्हारे हाथ है। तुम्हारी सफाई के बिना मेरे फैसले का दम घुट जायगा और तवारीखों में हमेशा के लिए मेरे मुँह पर कालिख पुत जायगी। साफ-साफ कहो बेटे।"

शेरशाह की बातों से आदिल की खून में जान आ गयी। उसकी आत्मा उसे झूठ बोलने से खींचने लगी। पराजित सैनिक की भाँति सिर लटकाये उसने अपना अपराध स्वीकार कर लिया।

अदालत में जन-समूह उमड़ता जा रहा था। कहीं तिल रखने की भी जगह न थी। सभी अपलक दृष्टि से सुलतान की ओर देख रहे थे। वातावरण इतना शान्त था कि सूई गिरने का भी स्वर सुनायी पड़ जाता। सभी आतुर हृदय से फैसले की प्रतीक्षा कर रहे थे। कुछ देर तक मनन करने के बाद सुलतान उठ खड़ा हुआ। चारो ओर देखते हुए उसने नवयुवक के पक्ष में फैसला कर दिया। कड़कते किन्तु गम्भीर स्वर में बोला—"शाहजादे आदिल ने जान-बूझकर इस आदमी की अकेली बीबी पर पान का बीड़ा फेंक कर उसकी आबरू पर जुल्म किया है जिसे कभी माफ नहीं किया जा सकता। माँ-बदौलत ने इस जुर्म के लिए यह सजा तजबीज की है कि जिस तरह आदिल खाँ ने इस नौजवान के इज्जत पर हमला किया है, उसी तरह वह भी आदिल की बीबी की इज्जत पर ऐसा ही जहरीला बीड़ा फेंक कर अपना बदला चुकाये।"

चारो ओर पल-भर के लिए स्तब्धता छा गयी। धीरे-धीरे एक फुसफुसाहट चारो ओर लहर गयी। कुछ दरबारी आवेश में उठ खड़े हुए। आदिल पसीने-पसीने हो गया और फरियादी नवयुवक किञ्चित क्षोभ से दुखी हो उठा। कानून का पालन कराने के लिए सैनिक आगे बढ़े। सुलतान आज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर करने जा ही रहा था कि किसी वृद्ध का करुण स्वर वातावरण में गूँज उठा। वह चीख रहा था—"आलमपनाह, हम अपनी आवाज वापस लेते हैं—" वह वृद्ध दौड़कर

फरियादी युवक के पास आया। आवेश में उसके कन्धे झकझोरते हुए बोला—"तूने यह क्या किया काफिर? जिस आदमी से मुझे अपनी बेटी मिली, उसी के साथ दगा। सालों तक भटकते रहने के बाद जिस नेकदिल ने मेरी बेटी मुझे वापस दे दी, जिसे वह जौनपुर की नीलामी में खरीद चुका था, उसके लिए तो हमें गला देने के लिए भी तैयार रहना चाहिये।"

नयी गड़बड़ी देखकर हैदर ने उठते हुए शीघ्रता से पूछा—"क्या बात है? तुम लोग क्यों शोर मचा रहे हो?"

वृद्ध ने गिड़गिड़ाते हुए उत्तर दिया—"हुजूरे आला, मैं इसका ससुर हूँ। इसने जो गुस्ताखी की है, उसके लिए मैं माफी चाहता हूँ। हम अपनी फरियाद वापस लेते हैं।"

सुलतान ने मन-ही-मन अल्लाह का स्मरण किया। फिर युवक से शीघ्रतापूर्वक पूछा—"तुम्हें यह मंजूर है?"

"आलमपनाह।"

सुलतान सहज भाव से उठ खड़ा हुआ। विह्वल हृदय लेकर ऊपर आया और रनिवास की ओर बढ़ गया। सब कुछ जानते, सुनते हुए भी मलका चुप थी। सुलतान ने धीरे से कहा—"हमें मेहर और जलाल के निकाह की तैयारी जल्द कर देनी चाहिये।"

———

१८

नयी कामना : नया अभियान

जीवन की साँसें सीमित हैं और कामनाओं का तारतम्य अपार। धड़कनों का सिलसिला एक दिन समाप्त हो जायगा, किन्तु मनुष्य का मन्सूबा न तो कभी खतम होने का है, न कभी उसकी महत्त्वाकांक्षा दबने की। कामनाएँ दब सकती हैं, किन्तु उनका एक ही मार्ग है, त्याग-मार्ग, वैराग्य का पथ...परन्तु शेरशाह त्यागी न था। बादशाह हो जाने पर उसकी महत्त्वाकांक्षा प्रबल वेग से धधकने लगी थी। अब उसमें विजय के अभियानों का नाद प्रतिपल गूँजता रहता। किले पर किले, देश पर देश और सरदारों पर सरदारों की विजय ही तो उसकी साधना है, उसकी विभूति। क्या यह साधना किसी हठयोगी के एकान्त व्रत और कठोर तपस्या से तनिक भी पीछे है? सहसा उसका मन कहीं दौड़ गया। यह साधना तो अभी अधूरी है। यह तब पूर्ण होगी जब कालंजर का हिन्दू राजा पराभूत हो अपनी सार्वभौमिकता स्वीकार करे, उसके जगत-प्रसिद्ध दुर्ग पर अपना झण्डा लहराये। परन्तु यह हो कैसे? कालंजर दुर्जेय है, दुर्भेद्य! तब उस दुर्जेय और दुर्भेद्य को वशीकृत करना ही होगा।

सोचते-सोचते शेरशाह अपने स्वप्नों में तरंगित हो उठा। कुछ देर बाद उठा और वेग से झपटता हुआ अपनी बैठक की ओर चला गया।

अपनी राजनैतिक पटुता से शेरशाह ने मालवा और मारवाड़ पर विजय तो प्राप्त कर ली, परन्तु राजपूतों के हृदय की धधकती आग

ने उसे अपने भविष्य के प्रति शङ्कित कर दिया था। बीरसिंह जो कभी उसका घनिष्ठ मित्र था, अपनी कुरीति से सुलतान को मेवाड़ पर विजय दिलाने के बाद बिलकुल बदल गया था। चुनार किले की लालच में वह अपने बान्धवों के हाथ-पाँव काट रहा था, परन्तु जब उसे यह ज्ञात हुआ कि शेरशाह उसकी आशा-पूर्त्ति करने के लिए तैयार नहीं, तो उसकी आँखें खुल गयीं। लेकिन अब वह कहीं का न रह गया था। पंगु के समान अपने दुष्कृत्यों पर पश्चात्ताप करता दर-दर का मुँहताज बन गया था। शेरशाह की राजनैतिक चाल उसकी बुद्धि से परे थी। अपनी बुद्धि और परम शौर्य से जमीन-आसमान एक कर देने वाला अफगान सम्राट भला यह क्यों पसन्द करता कि उसके साम्राज्य के प्रसिद्ध दुर्ग चुनार पर किसी राजपूत का अधिकार हो? नकशे में उभड़ता धब्बा किस नकशेबाज को पसन्द है? शेरशाह जानता था कि खिसियाती बिल्ली की तरह बीरसिंह राजस्थान प्रदेश के अन्य राजाओं को उभाड़ने की चेष्टा करेगा, परन्तु इससे लाभ के बदले हानि की तनिक भी सम्भावना नहीं। अफगानों की सुदृढ़ शक्ति और अटूट एकता के सामने राजपूतों का छिन्न-भिन्न शौर्य सूरज के सामने दीपक के समान था।

राजपूताने में अफगान सत्ता के प्रसार का कार्य केवल सेनापतियों के भरोसे छोड़ देना शेरशाह ने उचित न समझा। अपने छोटे पुत्र जलाल खाँ के सहयोग से वह अपनी भविष्य की योजनाओं पर गम्भीरता से विचार करने लगा। राज्य की ओर से मुल्क के अविजित भागों में गुप्तचरों का जाल बिछा दिया गया था। प्रतिदिन की खबर सुलतान के पास भेजी जाती थी।

एक दिन प्रातःकाल जब काम-काज शुरू ही हुआ था, चारो ओर सुनहरी धूप छा गयी थी। राजधानी दिल्ली के राजपथ पर एक घुड़सवार हवा से बाजी लगाता किले की ओर बढ़ा। देखने में वह नवजवान और चुस्त था। आँख चमकीली, चेहरा लाल, और छोटी

दाढ़ी और खुरींटी मूँछवाले उस नवजवान घुड़सवार की ओर लोगों की नजरें बरबस उठ गयीं। पलक मारते वह किले के अन्दर आया। किले का पहला, दूसरा और तीसरा फाटक पार करता, पहरे पर खड़े सैनिकों की सलामियाँ लेता वह चौथे फाटक पर रुका। फाटक पर तैनात सैनिकों में से एक हवलदार शीघ्रता से आगे आया, सलामी देते हुए उसने घोड़े की रास पकड़ ली। नवयुवक नीचे उतर पड़ा। उसने शीघ्रता से पूछा—"आलमपनाह कहाँ हैं?"

"आरामगाह में"—हवलदार ने नम्र शब्दों में उत्तर दिया।

"और कोई है?"

"कह नहीं सकता। शायद वह अकेले हैं।"

नवयुवक आगे कुछ न बोला। दायीं ओर मुड़कर वह शीघ्रता से सीढ़ियों की ओर मुड़ा। सीढ़ियों को पार करके वह ऊपर आया। दीवानखाना, गलियारा, दो बड़े कमरे, अतिथि-विश्राम-गृह और तीसरी मञ्जिल की सीढ़ियों को पार करके वह अनुमति लेकर सुलतान के सामने उपस्थित हुआ। शेरशाह ने उस हाँफते हुए नवयुवक की ओर क्षणिक विस्मित दृष्टि से देखा फिर बैठ जाने का संकेत करते हुए हुक्के की नली बगल में रखकर पूछा—"कहो कादिर मियाँ, क्या बात है? परेशान-से नजर आते हो।"

"बात ही ऐसी है परवरदिगार"—कादिर ने चेहरे पर उभरी पसीने की बूँदों को पोंछते हुए कहा। उत्सुकतापूर्ण दृष्टि से सुलतान उसकी ओर देख रहा था। वह जानता था कि राज्य का यह विश्वसनीय गुप्तचर अवश्य ही कोई न कोई महत्वपूर्ण समाचार लाया होगा। कादिर ने हाथ का रूमाल जेब में रखते हुए कहा—"आलमपनाह, वह राजपूत बीरसिंह, जिसे मैंने एक बार आपके हुक्म से आपकी खिदमत में हाजिर किया था, बागी बन कर सल्तनत की राह में काँटें बो रहा है।"

"अच्छा ! क्या किया है उसने ?"

"इधर-उधर की बातों में बहका कर उसने बुन्देलों को अपनी ओर मिला लिया है। उसकी बातों के चक्कर में आकर कालञ्जर का राजा कीर्त्ति सिह उल्टे पाँव चलने लगा है। कालञ्जर किले के बारे में कीर्त्ति सिंह जिन सुलहनामों को कबूल करने के लिए तैयार था, उनसे उसने अब मुँह मोड़ लिया है। बहकी-बहकी बातें करने लगा है। किले के चारो ओर उसकी फौज छाती जा रही है। जङ्ग की पूरी तैयारी है।"

कादिर की बातें सुनकर शेरशाह चिन्तित हो उठा। दूसरे ही क्षण उसका चेहरा हर्ष से खिल उठा। उसने कहा—"जान पड़ता है कि राजपूत अब जड़ से खतम होना चाहते हैं। कालञ्जर भी अब अफगानों की मुट्ठी में आ जायगा"—कुछ सोचते-सोचते सुलतान ने कादिर की ओर मुड़कर पूछा—"उस राजपूत के बच्चे को तुमने छोड़ क्यों दिया ? जहरीले साँप का मुँह कुचल देना ही वाजिब है।"

"मैंने हरचन्द कोशिशें की थीं आलमपनाह"—कादिर शीघ्रता से बोला—"लेकिन वह डरपोक भाग कर कालञ्जर के किले में छिप गया।"

भविष्य की योजनाओं पर शेरशाह का मस्तिष्क तेजी से दौड़ने लगा। कीर्त्ति सिंह के दुर्व्यवहार का बहाना लेकर कालञ्जर पर अधिकार कर लेना, उसकी दृष्टि में एक सुनहला मौका था। कालञ्जर का किला हाथ में आते ही अफगानों की शक्ति आसमान पर चढ़कर बोलने लगेगी। वह किला, जिसे मुगल बादशाह हुमायूँ भी न जीत सका, केवल चन्देल राजाओं से सन्धि करके रह गया, उसे अफगान राज्य में मिलाकर इतिहास की एक अभूतपूर्व घटना रची जा सकती है।

मध्यकालीन भारत के सर्वोत्तम दुर्ग कालञ्जर को जीतने की तीव्र लालसा शेरशाह के हृदय में उमड़ पड़ी। उसकी विजय सम्पूर्ण मध्य भारत की विजय थी। शेरशाह के कानों में महमूद गजनवी के इस दुर्ग

की विशेषता पर प्रकट किये गये विचार गूँज उठे—"इसके रक्षक यदि चाहें तो तारिकाओं से बातें कर सकते हैं। इसका शिखर ऊँचाई में आकाश की ऊँचाई के समान है और मीन राशि के समानान्तर है।"

शेरशाह अभी भविष्य की योजनाओं पर विचार कर ही रहा था कि महकमा माल का उसका दीवान राजा टोडरमल वहाँ आ पहुँचा। सम्राट का अभिवादन करता हुआ बैठ गया। इस हिन्दू मन्त्री के प्रति शेरशाह के हृदय में अटूट विश्वास था। भारत के प्राचीन दुर्गों की विस्तृत जानकारी इसे थी। शेरशाह की आज्ञा से रोहिताश्व के विशाल दुर्ग को फिर से मरम्मत कर इसने उसे नया बना दिया था। टोडरमल को जब यह ज्ञात हुआ कि सुलतान कालंजर जीतने की तैयारी कर रहा है तो वह चकित तो हुआ ही, साथ ही भयभीत भी। चकित हुआ सुलतान के साहस पर, और भयभीत इसलिए कि कहीं हिन्दू हार न जाँय। कालंजर जीत लेना कोई आसान काम न था। वास्तुकला, रक्षा कौशल और धार्मिक महिमा की दृष्टि से विशिष्ट रीत्यानुसार निर्मित उस अनूठे दुर्ग को जीतना लोहे के चने चबाना था। जिस किले को प्राप्त करने के लिए कितने ही नरपति और चक्रवर्ती सिर पटक कर रह गये, अगणित सैनिकों के मुण्ड रक्तधारा में बहकर लुप्त हो गये, उसे तीन-चार वर्षों का शिशु-अफगान साम्राज्य क्या विजित कर सकेगा?

टोडरमल की मानस आँखों में कालञ्जर का दुर्ग और आस-पास का विस्तृत क्षेत्र साकार हो उठा। सचमुच दो कोस का वह विस्तृत क्षेत्र मन्दिर के समान है। शिव सन्निधि संयुक्त वही कालंजर मुक्तिदायक है। गंगा के दक्षिण में अवस्थित कालंजर क्षेत्र के समान पवित्र क्षेत्र भूमण्डल में और कोई नहीं। वहाँ समस्त तीर्थों का फल और अनन्त पुण्य निहित है। कालञ्जर दुर्ग की अनेक रमणीक झीलें और विशाल प्राचीन मन्दिर उस चतुर दीवान की आँखों के सामने नाचने लगे। उसे विचारों में इस प्रकार खोया देखकर सहसा सुलतान पूछ बैठा—"आप

क्या सोच रहे हैं राजा ? अगर कालंजर पर हमला कर दिया जाय तो...?"

"वह अधिकार में आ जाय तो क्या पूछना ! लेकिन बात यह है जहाँपनाह कि..."—कहते-कहते टोडरमल रुक गया।

"कहिये कहिये"—सुलतान ने आग्रह किया।

"इरादा तो शानदार है परवरदिगार, लेकिन किले को जीतना बड़ा ही मुश्किल है।"

"हमें ऐसी मुश्किलों को आसान बनाने में मजा आता है। अगर मुकद्दर ने साथ दिया तो शेरशाह कालंजर लेकर ही रहेगा, चाहे उसके बाद मौत को ही क्यों न गले लगानी पड़े। इस किले की मैंने इतनी तारीफ सुनी है कि इसको जीतने की तमन्ना ने उमड़ते दरिया की तरह मुझे अपने में शराबोर कर लिया है। अब कालंजर जीते बिना चैन नहीं।"

शेरशाह ने अपने विचार भलीभाँति दृढ़ करके कादिर से जलाल खाँ को शीघ्र भेज देने के लिए कहा और टोडरमल को सेना कूच करने की व्यवस्था करने की आज्ञा दी।

जलाल शान्त, उदार और कर्त्तव्य-परायण युवक था। वह बोलता कम, परन्तु कर्त्तव्य निभाने में सबके आगे रहता। उसका बड़ा भाई आदिल स्वभाव में उससे सर्वथा प्रतिकूल रहता। आदिल विलासी, काम से भागने वाला, लड़ाई से दूर रहने वाला, सुरा-सुन्दरियों के बीच आमोद करने वाला, बकवादी और अहंकारी युवक था। सामन्तों-सरदारों के सभी ऐब उसमें थे, गुण नदारद। उधर जलाल उन तमाम गुणों से विभूषित होने के साथ साधारण मानवीय विभूतियों से भी सम्पन्न था। वह पिता का सच्चा अनुचर था, सेवक। उसकी आज्ञाओं पर मर-मिटना हो तब भी जलाल बिना हिचक आग में कूद पड़ने वाला था। शेर खाँ मन-ही-मन अपने इस दूसरे बेटे को सबसे अधिक प्यार

करता। उसकी आशाएँ जलाल पर ही आधृत थीं। युद्धों और खतरों के बाद वह जलाल को सदैव अपने साथ रखता। इसीलिए आज जब एक महत्त्वपूर्ण अभियान करने का उसने संकल्प कर लिया तो उसका मन अनायास जलाल की खोज में दौड़ गया। बिना जलाल क्या वह अकेला जायगा?

दो-तीन घड़ी बीतते-बीतते हवा की तरह यह समाचार छा गया। शेरशाह के कालंजर पर आक्रमण करने का विचार सुनकर किसी ने दाँतों तले अँगुली दबा लिया, किसी का चेहरा गर्व से खिल उठा, किसी के हाथ-पाँव भय से काँप उठे और कोई परिहासपूर्ण मुद्रा में मुस्कुरा उठा।

जोर-शोर से युद्ध की तैयारियाँ की जाने लगीं।

सेना तैयार हो गयी और शीघ्र ही जलाल खाँ, टोडरमल तथा अपने अन्य प्रधान सरदारों के साथ शेरशाह ने कालंजर पर चढ़ाई कर दी।

कीर्त्ति सिंह ने सुना—अफगान बादशाह एक विशाल सेना सजाकर कालंजर जीतने चला आ रहा है? उसने शेरशाह का जवाब देने के लिए तैयारी कर ली। मर्द चुनौती सुन कर आगे बढ़ता है। कीर्त्ति सिंह बुन्देला था। उसने आन पर मरना सीखा था। जिनकी माताओं के दूध में यह जहर भरा था कि उनके बच्चे वृद्ध हो ही नहीं पाते थे, जिनकी युवती पत्नियों के भाग्य में शैय्या-विलास लिखा ही न था, जिनकी तलवारें म्यान में जाने के पूर्व फिर टकराने के लिए बेताब हो जातीं, उन चन्देलों के वंश में कीर्त्ति सिंह उनकी कीर्त्ति का रक्षक था।

तीसरे दिन अफगान सेना दूर क्षितिज के पास एक हलकी रेखा के रूप में दिखायी पड़ी और देखते-देखते महासमुद्र की तरंग की भाँति फैल कर आस-पास के प्रदेश पर छा गयी। इतनी अपार

वाहिनी के साथ खुल कर मैदान में आना, सम्भव न था। एक और सौ का क्या मुकाबला? अतः कीर्त्ति सिंह ने अपने साथियों से परामर्श कर कछुवा नीति का सहारा लिया। उसने अपनी सारी सेना किले के भीतर कर ली और बाहर का द्वार भीतर से बन्द कर रक्षात्मक युद्ध प्रणाली अपना ली। धीरे-धीरे अफगानी सेना टिड्डियों की भाँति भारी संख्या में उमड़ कर किले के नीचे आ जमी। उसने किला घेर लिया और चारो ओर बिखर कर चौकियाँ डाल दीं।

शेरशाह ने देखा—वास्तव में जैसा कहा जाता था और किताबों में लिखा था—कालंजर का किला आदमी का बनाया हुआ न प्रतीत होता। उसने सैकड़ों किले देखे और जीते थे, परन्तु वे सब इस किले की तुलना में नगण्य थे, बिन्दु मात्र थे। उसने चुनार और रोहिताश्व का स्मरण किया, दोनों किले कालंजर दुर्ग के एक कोने में सिमट जाने वाले थे। उसे यकीन हो गया, अपने इस अजेय दुर्ग के कारण ही चन्देलों को किसी का भय नहीं होता। सचमुच इसका नाम कालंजर सार्थक है—जिसे काल भी न जला सके। हिन्दू तो उ। सतयुग का बना मानते हैं।

अभी वह अपनी सेना को पहाड़ पर चढ़ने की आज्ञा देने ही वाला था कि ऊपर पहाड़ के दर्रे से बड़े-बड़े पत्थरों के ढेले और तीरों की वर्षा होने लगी। उनकी मार से अफगान सिपाही घायल हो तितर-बितर होने लगे। आक्रामकों का पता न था। वे छिपकर तीर चलाते थे। शेरशाह गरजा—'क्या डरते हो? बढ़कर छीन लो उनसे हथियार।' कह कर वह खुद आगे बढ़ा। उसे आगे जाते देख कर सभी बढ़ने लगे।

दिन में लगभग दस बज रहा था। कार्त्तिक का महीना था। सूर्य की रोशनी पर्वत श्रेणियों पर मैदान और वातायन में चमक रही थी। जाड़ा अभी प्रारम्भ न हुआ था, फिर भी धूप अच्छी लगती।

किला पहाड़ की चोटी पर काफी ऊँचाई पर था जहाँ तक पहुँचना कठिन था। रास्ता बीहड़, चढ़ाव का और खड्डों से भरा था जिसके बीच में हजारों जंगली पेड़ उग कर सामने का दृश्य रोक लेते थे। पेड़ों के कारण सामने छिपे शत्रुओं का पता ठीक से न लग पाता। फिर भी अफगान सिपाही साहस कर ऊपर बढ़ते जाते। घोड़े हाँफने लगे थे, उनके मुँह से फेन निकलने लगा था जिसमें सन कर उनकी लगाम सफेद हो गयी थी। परिश्रम के कारण उनके शरीर से पसीना थर-थर चू रहा था। सिपाहियों की रानें फटी जातीं। फिर भी जिरह-बख्तर पहने, टोप लगाये और पीठ पर ढाल लटकाये वे उत्साह-पूर्वक ऊपर चले जा रहे थे।

पहाड़ सीधा ऊँचा न था। बीच-बीच में दो-चार कोस पर बस्ती मिल जाती। अफगानों के हमले की खबर पाकर गाँव वाले भाग गये थे। बस्ती में चिड़िया का पूत न दिखायी देता। गाँव के बाहर पहाड़ी खेतों में कुछ खेती भी थी। चैती की फसल पूरी बोई भी न गयी थी, कहीं उग रही थी, कहीं नहीं। बीच-बीच में जुआर के गुच्छे, हवा में हिलते बड़े भले लगते। सिपाही खेतों के डाँड से चल रहे थे। घोड़े खेतों की अगहनी फसल के पौधों से रगड़ खाते जाते, परन्तु क्या मजाल जो कोई फसल की एक पत्ती नुकसान कर दे। पता चल जाने पर बादशाह उनके तलब में से उतना काट लेगा। इस डर से सिपाही नाक की सीध में घोड़ा बढ़ाये चढ़े जा रहे थे। अगल-बगल देखने का वक्त कहाँ था?

रास्ते में कहीं-कहीं चन्देले सिपाही मिलते। हाथों में तलवार, भाला या तीर-धनुष से वे मुसलमान-सिपाहियों का मुकाबला करते। परन्तु जिस प्रकार बरसाती नदी की प्रखर धार हवा के वेग से हिल्लोलित हो करार को काट देती है, उसी प्रकार अफगान सैनिकों की अटूट पंक्ति के

सम्मुख वे सीमित चन्देल टिक न पाते। लड़ते और खून से लथ-पथ हो वीर गति को प्राप्त हो जाते।

दिन ढलने लगा था। बेर लटक रही थी। अफगान सेना सबेरे का प्रयास करती किले की ओर पहुँचने की चेष्टा में यद्यपि सफल नहीं हो पायी, फिर भी काफी ऊँची चढ़ चुकी थी। लेकिन वह किला था या दानव की करामात। मालूम होता मानो उसकी नींव आसमान में खुदी थी। अब आगे बढ़ना सरल न था। चन्देले जगह-जगह प्रतिरोध करते। मुसलमानी सेना का उत्साह ठण्ढा पड़ता जा रहा था। शेरशाह ने देखा, लक्ष्य किया। फिर अपने बेटे को बुलाकर पूछा—'मैं समझता हूँ, आज यहीं रुक जाया जाय।'

'जैसी हुजूर की मर्जी'—जलाल बोला।

'मैंने तुम्हें अपनी राय देने की गरज से पूछा था'—शेरशाह कुछ चिढ़ उठा।

'बजा फरमाते हैं। रात होने वाली है। अगर रास्ते में कोई दर्रा या वीरान जगह मिलेगी तो मुमकिन हैं उसका फायदा उठा कर दुश्मन हम पर हमला करे...! इससे तो बेहतर है कि अब डेरा डाल दिया जाय।'

'ठीक कहते हो। मगर अपने फौजदारों और सिपहसालारों से भी हमें सलाह कर लेनी चाहिये। मियाँ हाँसू को बुलवाओ।'

हाँसू मियाँ एक कुम्मैत रास के अरबी घोड़े पर आगे-आगे बढ़े जा रहे थे। रिसाला जलाल खाँ के अधीन था, इसलिए वह पीछे था। एक सिपाही भेजा गया। उसने झपट कर हाँसू को सलामी दी और बादशाह का हुक्म सुनाया। हाँसू मियाँ सिपाहियों को आगे बढ़ने की आज्ञा दे पीछे आया। शेरशाह अपने दीवान और खास परामर्शदाताओं के साथ एक वृक्ष की सघन छाया में रुक गया था। हाँसू ने अदब से सिर झुकाया और फौजी सलामी दी।

'मैं समझता हूँ, अब हमें आज यहीं रुक जाना चाहिये क्योंकि आगे बढ़ने में खतरा है; क्यों मियाँ? अच्छा यह बताओ कि इस किले को फतह करने में हमें कितना समय लगेगा?'

हाँसू घबराया। प्रश्न साधारण न था। हिन्दू राजा किले के भीतर घुस कर जिस प्रकार पड़े रहते थे और मुसलमानी सेना सारा शहर घेर कर पड़ाव डाल देती, वह परम्परा उसे भूली न थी। इसमें महीनों से वर्षों तक लग जाते थे। परन्तु ज्यादा दिन बताने से शेरशाह नाराज हो सकता था, इसलिए उसने अन्दाज लगाते हुए कहा—'अगर घेरा न पड़े और खुल कर लड़ाई हो तो एक घण्टे में नहीं...किसी भी वक्त...।'

'फिर भी, कुछ ठीक समय बताओ।'

'ठीक समय क्या बताऊँ सरकार, एक महीना समझ लीजिये।'

'एक महीना। तब हमें रसद का इन्तजाम करना होगा। दस हजार सिपाही हमारे साथ हैं, घोड़े-ऊँट अलग से। सबकी खुराक चाहिये। राजा टोडरमल! आज रात यहीं रुक जाया जाय। कल समझ कर कूच किया जायगा।'

'जो हुक्म'—टोडरमल बोला।

क्षण-भर में बादशाही हुक्म लश्कर में छा गया। सिपाही रुक गये। घोड़ों की बाग नरम हुई। रावटियाँ पड़ गयी। पास ही के एक गाँव की सीमा पर शेरशाह ने डेरा डाल दिया।

सामने पश्चिम दिशा में सूर्य अस्त हो गये। उस पर्वतीय उपत्यका में धीरे-धीरे अन्धकार आकाश से उतरने लगा। आस-पास के गाँवों में वीरानपन छा गया था। सेना के आतङ्क से पेड़ों की शाखाओं पर बसेरा लेने वाले पक्षी भी अपने बच्चों के साथ उड़ कर भाग गये थे, या भय से दुबक गये थे। कहीं पत्ता खड़कता तक न था। कल जहाँ संध्या होते ही मन्दिरों में घण्टे-घड़ियाल की मधुर ध्वनि गूँजने लगती

थी, बालकों, युवकों तथा अन्य पूजन करने वालों के मुख से आरती के श्लोक फूटते, घरों के आँगन से वृद्धा स्त्रियों के भजन की तानें आकाश में फैलतीं वहाँ आज मरघट-सा सन्नाटा छा गया था। घरों में ताले बन्द थे। लोग भाग गये थे ! हाँ, भोजन-पानी न पा सकने के कारण दो-एक टूटे बैल-गाय अवश्य कभी-कभी हुँकारने लगते थे जिनकी बां-बां आवाज के साथ सेना के धर्म-धुरन्धर मुसलमान सिपाहियों की नमाज की आवाजें टकरा कर एक अजीब भयपूर्ण रस घोल रही थीं।

१९

और सूर्य डूब गया !

दो महीने बीत गये। शेरशाह कालंजर न ले पाया। इस प्रयास में उसके दस हजार सिपाही किला घेर कर पड़े रहते। परन्तु राजा कीर्त्ति सिंह द्वारा किले का द्वार बन्द कर लेने के कारण कोई सिपाही भीतर प्रवेश न कर पाया। शेरशाह की कामना जितनी ही बलवती थी, वह अब उतनी ही असहाय और कंटकाकीर्ण ज्ञात होने लगी। परन्तु मार्ग की बाधाओं के कारण वह लक्ष्य-च्युत होने वाला प्राणी न था। साहस कर घेरा डाले रहा।

जब इसी चेष्टा मे कुछ दिन और बीते तो उसके सेनापति हाँसू ने एक दिन अचानक उससे कहा—"अब हमारे पास कुल दस-बारह दिन के लिए रसद शेष है। इसके बाद सिपाही भूखों मरने लगेंगे। तब के लिए...?

'कभी-कभी ऐसा लगता है हाँसू-जैसे यह मन्सूबा ठानकर मैंने बड़ी गलती की—शेरशाह कुछ चिन्ता-ग्रस्त स्वर में बोला। उसकी वाणी में दुराशा साफ झलकने लगी थी। हाँसू ने उसे भाँपा, परन्तु वह चतुर व्यक्ति था, चट बोला—'जहाँपनाह को मायूस न होना चाहिये। एक बार का ठना मंसूबा बेकार नहीं हो सकता आलीजाह। बादशाह की मंशा पूरी करने की जिम्मेदारी हमारे कंधों पर है और हम उसे पूरा करके रहेंगे।'

"ठीक कहते हो हाँसू, लेकिन मैं बच्चा नहीं। तुम्हारी इन बातों की शक्ति क्या मुझसे छिपी है ? मुझे बालक मत समझो...यों बहलाने से क्या होगा ?'

बादशाह की इन बातों से हाँसू घबरा गया। गया था उसे खुश करने और कहाँ वह चिढ़ उठा। बात बदलते हुए बोला—'तब भी हमें यह किला फतह करने में कम-से-कम दो महीने तो लग ही जायँगे। लेकिन हुजूर इसके पहले कि हम कोई और काम करें, हमें एक ऐसी ऊँची दीवार या मीनार खड़ी करनी चाहिये जिस पर चढ़कर हम कम-से-कम किले के सामने बराबर ऊँचाई पर तो खड़े हो सकें। वरना वह सातवें आसमान में और हम धरती पर। रात को तो गरीबनेवाज, ऐसा लगता है जैसे उसमें जलने वाली मशालें तारों से भी ऊपर हों।'

'मैं भी यह महसूस करता हूँ। तुम्हारी बात बहुत वाजिब और गौरतलब है। कह कर वह किसी चिन्ता में डूब गया। क्या किया जाय ? किले की दीवारें पत्थर की हैं या फौलाद की। वे भी इतनी ऊँची कि आदमी की पहुँच से भी ऊपर। तब कैसे कामयाबी होगी ? हाँसू जो कहता है, वही ठीक है। किले के सामने एक ऐसी दीवार तामीर की जाय जो ऊँचाई में किले के बराबर हो। उस पर सीढ़ियाँ भी बनायी जाँय जिनके सहारे हमारे सिपाही उस दीवार पर चढ़ कर किले पर गोला-बारी कर सकें। यही एक उपाय है जिससे किला जीता जा सकता है।

गोला-बारी का स्मरण होते ही उसे एक बात सूझ गयी। हिन्दू अभी बारूद का काम जानते नहीं। जानते भी हैं तो तोपखाना नहीं रखते। चन्देलों के पास तोपखाना नहीं है। वे या तो तलवारों से लड़ेंगे या तीर-धनुष से। खैर, हमें चिन्ता नहीं। भला हो बाबर बादशाह का; उसने इस मुल्क को बारूद का नया काम सिखा दिया, वरना कौन हिन्दुस्तान में जानता था कि चुटकी-भर बारूद से दीवार

गिरायी जा सकती है। इसके लिए तो यहाँ दो-चार सौ सिपाही लड़ते, कटते-मरते, तब कहीं दीवार गिरती और यह तोपखाना, क्षण-भर में सब भूमिसात् कर देता। इसी के बल पर तो बाबर ने बादशाह इब्राहीम लोदी को कुछ ही घण्टों में मात दे दी। खैर, अब वह गुर मुझे मालूम हो गया है। कीर्त्ति सिंह के लिए मैं भी उसी दवा का इस्तेमाल करूँगा।

शेरशाह बड़ी देर तक उलझन में पड़ा था। कुछ निर्णय न कर पाता था। अन्त में हाँसू की ही बात मान कर बोला—'तो मियाँ कल से उस दीवार का काम शुरू कर दो। लेकिन पहले उसका एक नक्शा तैयार कराओ और कल ही मेरे सामने हाजिर करो।'

'बेहतर है हुजूर'—हाँसू ने सिर झुकाया।

'तो अब तुम जा सकते हो। जाओ और अपने काम में लग जाओ'—हाँसू अदब से सलाम करता चला गया। जब उसे गये कुछ क्षण बीते तो शेरशाह ने अपने बेटे जलाल खाँ को बुलवाया और कहा—'कल सबेरे तुम भारकुण्डा चले जाओ। वहाँ की खबर लेते आना। आदिल का मुझे भरोसा नहीं। आज चार दिनों से उसकी एक खबर मुझे नहीं मिली। अजीब आदमी है। राजा टोडरमल से मिलकर दफ्तर के काम देख लेना और यहाँ के लिए रसद जाते ही भेजवाओ। हाँसू बता रहा था, अब कुल दस-पन्द्रह दिनों के ही लिए यहाँ रसद रह गयी है। अगर माकूल वक्त पर गल्ले की कमी हुई तो हमारी सारी तमन्ना धूल में मिल जायगी और हम कहीं के न रह जायँगे।'

जलाल खाँ घण्टों बैठा पिता से परामर्श करता रहा। रात का अन्धकार सर्वत्र छाया था। जाड़ा अपनी सीमा पर था। सर्दी के कारण खेमे के बाहर निकलने की हिम्मत न होती। दिन में कुछ पानी बरस जाने से हवा बर्छी-सी मार करती। हड्डियाँ काँप जातीं। मगर उनके

खेमों में दो चूल्हे जल रहे थे जिससे खेमे के भीतर काफी गरमी थी। कुछ देर तक वहाँ बातें कर जलाल लौट आया। अपने खेमे में गया और पलङ्ग पर पड़ रहा।

तो कल उसे भारकुण्डा जाना है। भारकुण्डा में ही तो वह मेहर को छोड़ आया है। वह वहाँ बैठी कल्पनाओं का जाल बुनती होगी। वाह! कैसी किस्मत है। ब्याह को महीना-भर भी न बीता कि कालंजर पर चढ़ाई की बात चल पड़ी। अब्बा भी जाने किस फौलाद के बने हैं जैसे उनके सीने में आदमी का दिल है ही नहीं। मुहब्बत तो छू नहीं गयी है। हर वक्त जङ्ग की बात। सहसा उसका मन अपनी नव-परिणीता बहू पर दौड़ गया। अभी थोड़े ही दिन पहले उसके हाथ पीले हुए। निकाह होते ही जङ्ग की तैयारी। सुख की सेज पर वह आराम की नींद सो भी नहीं पाया कि तलवार उठा लेनी पड़ी। क्या करती होगी वहाँ। जब से आया हूँ, मन खोया-खोया-सा रहता है। इस बार ऐसा लगता है जैसे दिल वहीं रह गया हो। घोड़े की पीठ पर चढ़ा पहाड़ पर चलता हूँ तो भी रास्ते में मुझे मेहर का ही ध्यान बना रहता है। उस दिन उसकी याद में बे-सुध हो बढ़ा जा रहा था कि न जाने कैसे उस शैतान बुन्देले ने हमला कर दिया। वह तो घोड़ा चालाक था, उछल कर दूर चला गया और मैं पहने था जिरह बख्तर, वरना गला कटने में क्या देर थी। खैर, बदला मैंने भी चुका लिया। बुन्देला भाले की एक वार से ही गिर पड़ा।

इसी उधेड़-बुन में जलाल रात-भर पड़ा रहा। उसे नींद न आयी। सुबह होने में काफी देर थी। आसमान में तारे टिमटिमा रहे थे। तभी वह उठा। नहा-धोकर नमाज पढ़ी और बाप से आखिरी भेंट के लिए गया। वहाँ से सारी बातें तै कर लौटा। कुछ जलपान किया और घोड़े को तैयार होने की आज्ञा दी। इतनी देर में उसने अपना सिपाहियाना वेष तैयार किया और पहन-ओढ़ कर बाहर आया। नौकर

घोड़ा लाकर बाँधे था। जलाल घोड़े पर चढ़ा। घोड़ा एड़ लगाते ही हवा से बातें करने लगा।

दिन चढ़ते-चढ़ते हाँसू अपने काम में लगा। फौज के दारोगा से उसने नक्शा बनवाया और बादशाह के सामने पेश किया। नक्शा ठीक बना था। शीघ्र ही उसका काम शुरू करने की आज्ञा दे दी गयी।

शेरशाह आतुर था। एक-एक पल वर्ष के समान लग रहा था। बिना कालंजर जीते उसे कल न पड़ती। दो हजार आदमी काम में लगा दिये। मिट्टी की एक ऊँची दीवार सैकड़ों हाथ लम्बी-चौड़ी बनायी जाने लगी। ऐसा लगता मानो यह रचना स्वर्ग में सीढ़ी लगाने की प्रयास थी। शेरशाह खुद खड़ा रहता और अपने सामने दीवार बनवाता। बादशाह को स्वयं इतनी दिलचस्पी लेते देख मजदूर और सिपाही जी-जान से जुट गये।

फिर भी काम आसान न था। महीनों लग गये। ऋतुएँ बीतने लगीं। शिशिर के बाद हेमन्त आया और वह भी चला गया। हेमन्त के बाद वसन्त आया। किन्तु आस-पास के गाँवों में सन्नाटा छा जाने से उस नये वसन्त का आगमन मालूम ही न हो सका। धीरे-धीरे होली आयी, किन्तु कौन जलाये होली? गाँव में था ही कौन? लालगढ़ से लेकर कालञ्जर तक का रास्ता मनुष्यों से रहित हो चुका था।

धीरे-धीरे चैत्र आरम्भ हुआ। काम बढ़ता जा रहा था। दीवार तन रही थी। उसमें लगी सीढ़ियाँ अब आकाश में काफी ऊँचाई तक जा पहुँची थीं। उन पर होकर अब सिपाही आने-जाने लगे। वैशाख और जेठ में भी काम होता रहा। जेठ शुरू होते-होते दीवार बन गयी। उस पर एक ऊँचा चबूतरा बना दिया गया—इतना लम्बा-चौड़ा जिस पर काफी सिपाही और तोपें खड़ी हो सकें। बड़ी-बड़ी मुश्किलों से तोपों को खींचकर उस दीवार पर चढ़ा दिया गया।

शेरशाह ने खुद चढ़ कर देखा। इस दीवार पर से अब कालञ्जर

का किला साफ ही नहीं, बिलकुल भीतर से दिखायी देने लगा था। किले के भीतर का आँगन, फाटक, मन्दिर, सभा, रनिवास सभी हिस्से साफ दिखायी पड़ते। शेरशाह को ज्ञात हुआ मानो कालञ्जर का किला कोई दुर्ग नहीं, खुद परमेश्वर का निवास था। उसकी बुर्जें, मीनारें, बारान्दे और खिड़कियाँ मानो जन्नत का नक्शा पेश कर रही थीं। वह कीर्त्ति सिंह के वैभव पर ईर्षा करने लगा। कालंजर जैसा एक भी किला उसके पास नहीं। वह इसे अवश्य जीतेगा।

अब शेर खाँ की कामनाएँ उफन-उफन कर बढ़ने लगीं। वह वृद्धावस्था में भी जवानों-सा लगता। यद्यपि अब वह काफी दुर्बल हो गया था, फिर भी साहस में कोई कमी न थी। घोड़े पर चढ़ने में हाँफने लगता, परन्तु नित्य घोड़े पर ही चढ़कर घूमता। उस दिन भी उसने दीवार पर खड़े होकर सिपाहियों को ललकारा। अफगान सिपाही तोपों में गज लगाकर साफ करते, गोले भरते और बारूद भर कर पलीतें लगाते। शेरशाह तोपों के पास खड़े होकर स्वयं कालञ्जर को गिराने की आज्ञा देता। वह कालञ्जर के अजेय दुर्ग की मीनारों को टूट कर गिरते देखना चाहता था। जो दुर्ग आज तक अविजित था, उसे जीत कर संसार के सामने वह एक अद्वितीय पुरुष के रूप में खड़ा होगा। जो यश आज तक किसी को न मिला उसे वह कण्ठहार बनायेगा।

अफगान सिपाही तोपें दागते। गोले निकल कर सामने किले पर गिरते। उनके गिरते ही पत्थरों के टुकड़े छितरा कर फैल जाते। खम्भे और पाटन टूट-टूट कर गिरने लगते। कालंजर में कोहराम मच गया। किले के भीतर नर-समुद्र हाहाकार कर उठा। गोलों की मार से शहर की जनता पिस जाती। आर्तनाद और चीत्कार के कोलाहल से आकाश की छाती भी फटने लगी। बच्चे भयभीत हो आँखें फाड़े ताकते। स्त्रियाँ हाय-हाय करतीं। पुरुष समझाते। परन्तु कोई फल नहीं। तब

तक दस-पाँच नये गोले गिरते। अब कालंजर की गगन-चुम्बी मीनारें अपना गौरव खोकर भू-लुण्ठित होने लगीं। किले के भीतर भगवान शिव के मन्दिर पर एक गोला गिरा—मन्दिर का कलश शिव-लिङ्ग को दबोच कर भूमिसात् हो गया।

बुन्देलों का खून खौलने लगा। अब वे स्वयं किले का फाटक खोलकर बाहर निकल आने और अफगानों को टुकड़े-टुकड़े कर देने की दुर्दम अभिलाषा से क्रोध में ओंठ काटने लगे। वे दाँत पीसते, तलवारें उठाकर रह जाते, क्योंकि वे परवश थे, बन्द थे, उनके पास तोपें न थीं। तब क्या करते? निदान हो वे शिव की शरण में गये। आर्त होकर उन्हें स्मरण किया—हे रुद्र! तुम सृष्टि का संहार करते हो? तुम शिव हो, पालक हो, रक्षक हो, मंगलकारी हो। तब हे भगवन्, अपने इन असहाय पुत्रों का यह विनाश क्यों करा रहे हो?

उधर शेरशाह सामने दीवार पर खड़ा था। तोपची एक गोला दगते ही तोपें साफ करते, फिर भरते और आग लगाते; गोला निकल कर प्रलय रचने लगता। यही क्रम चल रहा था। अचानक शेरशाह के बगल वाली तोप की नली फटी। धमाके का शब्द हुआ, मानो स्वर्ग में खड़ी वह दीवार अभी पाताल में चली जायगी, ऐसा कम्पन हुआ और आग की लपटें दिखायी देने लगीं। तोपों की गाड़ियों के पास ही बारूद के डब्बे धरे थे। आग लगते ही पास रखा बारुद भी प्रज्वलित हो उठा। अब उस गगन-भेदी गर्जन से खड़े रहने में भी आफत हो गया। भयानक धूँआ छा गया जिसमें किसी ओर कुछ दिखायी न पड़ता। सहसा शोर हुई। सिपाही चिल्लाने लगा। कुछ पता न चलता था। बाद में मालूम हुआ कि बादशाह गिर पड़े हैं। उनका शरीर झुलस गया है।

शेरशाह के गिरते ही सेना में सिहरन फैल गयी। हिन्दुओं ने कहा—और गिराओ शिव-मन्दिर!

शेरशाह को उठाया गया। बारूद में आग लग जाने से उसका शरीर बुरी तरह जल गया था। न जाने किस पुण्य से वह अब तक शेष था। सारा शरीर कान्तिहीन हो काला पड़ गया था। बारूद के जलने से चमड़ा जल कर झँवा गया था। चेहरे पर कनपटी की ओर ज्यादा घाव था। बायाँ हिस्सा घावों से जर्जर हो गया था। उसे उठाकर वहाँ से हटाया गया। नीचे उतारना भी एक समस्या थी। सैकड़ों सीढ़ियाँ उतरनी थीं, परन्तु शेरशाह जैसे नशे की झोंक में था। उसे कुछ पता न चला। घाव ताजा था, टीस न थी। मगर जलने से पीड़ा अधिक थी। वह उठती हुई वेदना की लहर को दबा कर पी जाता। यद्यपि वह कराहता न था, परन्तु तपे तवे-सा उसका लाल चेहरा बता रहा था वह किस आग में झुलसा जा रहा था। उसे खेमें में ले जाकर पलङ्ग पर सुला दिया गया।

जलाल ने सुना। वह दूसरे मोर्चे पर था। दौड़कर आया। देखा—बाप का अन्तिम वक्त था! ममता से उसका हृदय भर आया। आँखें छलछला आयीं। वेग से झपट कर पलंग के नीचे जमीन पर बैठ गया। हैदर ने भावी बादशाह की कल्पना कर एक कामदार चौकी जलाल खाँ के लिए मँगवायी—'इस पर बैठें हुजूर!'

जलाल खाँ ने पिता के क्षीण होते शरीर को देखा। कातर होकर पूछा—'कैसी तबियत है!'

शेरशाह ने सिर हिलाया मानो कह रहा हो—फिक्र मत करो। मैं अच्छा हूँ। परन्तु वह जैसा अच्छा था, यह किसी से छिपा न था। उसने शीघ्र ही फौज के हकीम को बुलवाया। मरहम तैयार किये जाने लगे। हकीम ने आकर शेरशाह के जले शरीर का उपचार आरम्भ किया। गुलाब जल के छींटों से उसे शीतल किया जाने लगा। जले हुए हिस्से पर चन्दन का लेप और अन्य सुगन्धित जड़ी-बूटियाँ लगायी जाने लगीं। थोड़ी देर बाद उसे होश हुआ। कुछ शान्ति मिली तो आँखें खोलकर पूछा—'जलाल खाँ कहाँ हैं?'

हैदर ने उसकी कामना जान कर कहा—'यहीं तो बैठे हैं मालिक !''

शेरशाह ने ढूँढ़ती आँखों से चारो ओर देखा, मानो जलाल खाँ को खोज निकालना चाहता हो। उसकी यह दशा देख जलाल रो रहा था, अपनी पगड़ी से बहते हुए आँसुओं को पोंछ लेता, फिर सम्हल कर बोला—'हाजिर हूँ; कोई हुक्म ?'

'घबराओ मत। रोते क्यों हो ? मैं बिलकुल अच्छा हूँ। कोई डर नहीं है, कोई डर नहीं...। मगर क्या कालंजर फतह हो गया ?'

हाँसू वहीं खड़ा था। उसने धीरे से कहा—'अभी नहीं खुदावन्द।'

'अभी नहीं ? तो यहाँ क्या कर रहे हो ? जाओ ! मेरी चिन्ता न करो। किला जीत कर लौटो और इस फतह की खुशखबरी मुझे दो'—शेरशाह ने आँखों को इस प्रकार सिकोड़ते हुए कहा जैसे उसे अतिशय कष्ट हो रहा हो। वह उसे बलपूर्वक छिपाना चाहता हो। हाँसू चुपचाप वहाँ से चला गया। जलाल ने खिदमतगारों के हाथ से पङ्खा ले लिया और स्वयं झलने लगा। तब करवट बदल कर पुत्र की ओर देखते हुए शेरशाह बोला—'मुझे यहीं छोड़ दो। जीत की फिक्र करो। जब तक फतह न कर लोगे मेरे प्राण टँगे रहेंगे। तुम जाओ, नहीं फौज डाँवाडोल हो जायेगी।' एक क्षण रुक कर जलाल को चुप देखकर फिर कहा—'बिना दूल्हे के ब्याह और बिना सरदार के जङ्ग नहीं होता। हम और तुम दोनों नदारद रहेंगे तो सिपाहियों का दिल छोटा हो जायगा और वे सब भाग खड़े होंगे। अब सोचो मत जाओ; खुदा की रहमत पर भरोसा करो। वह जो कुछ करता है अच्छे के ही लिए करता है।'

पिता का बार-बार आग्रह सुनकर जलाल उठा। काँपते पाँवों से खेमे के बाहर आया। उसे देखकर लोगों ने अनुमान लगाया कि उनका भावी बादशाह यही है, और इस अनुमान के बल पर उन्होंने एक

बार जोर से हल्ला मचाकर जयघोष किया। 'अल्ला हो अकबर' के नारों से वह प्रान्त गूँज उठा।

जलाल के मन में नयी शक्ति उठी। उसके प्रकाश में उसका मन सहसा कहीं दूर जा उड़ा। आदिल यहाँ है नहीं; यदि बादशाह का नश्वर शरीर किसी प्रकार छूटा तब ? तब क्या होगा ? भाग्य का सूरज क्या उसके जीवन-प्रदेश में चमकने वाला है ? विचारों में एक आँधी उठी। भुजाओं की नसें तनने लगीं। अपने अधिकारों की सुरक्षा के लिए वह सतर्क हुआ। घोड़े पर सवार हुआ और वेग से मैदान की ओर चला गया।

जेठ का महीना था। सूर्य सीधे सिर पर चमक रहे थे। लूह के बगूले उठते तो जैसे अन्धड़ उठाकर सारे जगत पर फेंक देना चाहते। आसमान धूमिल हो गया था। प्रचण्ड आँच से पहाड़ के पत्थर भी तपने लगे थे। आँखों के सामने धरती मानो नाच रही थी। उस भयानक बेला में बाहर निकलना भी मौत का सामना करना था। तब भी जलाल खाँ मानो लूह पर शासन करता हुआ वेग से भागा जा रहा था। उसे इस प्रकार जाते देखकर सिपाही भी तैयार हुए। यदि शेरशाह बीमार न होता और मैदान में हाजिर रहता, तब जलाल खाँ धूप के बहाने हट जाने का बहाना ढूँढ़ निकालता। परन्तु पिता के गिरते ही अब वह स्वयं मालिक-मुख्तार था। जिम्मेदारी की भावना जगते ही उसके लिए धूप अपनी प्रचण्डता खो बैठी। कामयाबी प्राप्त करने के श्रेय की अभिलाषा ने लूह की प्रखरता शीतल कर दी थी। उसने मैदान में जाते ही चारो ओर देखा—भागते हुए सिपाही फिर जुटने लगे थे। उसने नगाड़े वालों को आवाज दी। नगाड़े बजने लगे। बाजा बजना युद्ध का द्योतक था। तोपची सजग हुए। जेठ की वह दोपहरी सूर्य की विकराल किरणों का तोप के गोलों से सन्धि कराकर कालञ्जर पर विनाश की सृष्टि करने लगी।

भीतर किले का एक-एक भाग बारुद के शोलों और गोलों की चपेट में पड़ कर शीश धुन कर खण्डित होता और देखते-देखते भूमिसात् हो जाता। उधर बन्दूकों की मार से बुन्देले घायल हो गिर पड़ते। फिर भी वे अजस्र स्रोत की भाँति अटूट शृंखला में तीर-कमान लिये चले आते। उनके बाणों की वर्षा से अफगान सिपाही भी जर्जर हो युद्ध-भूमि छोड़ रास्ता ढूँढने लगते। परन्तु शेरशाह की कठोर आज्ञा के कारण वे काल के गाल में चले जाना अच्छा समझते थे।

दिन-भर युद्ध होता रहा। किले के भीतर और बाहर लाशों की ढेर लग गयी थी। उसे देख कर विकराल रूप धारण कर आग बरसाने वाला सूर्य भी मानों मुँह छिपा कर कहीं दूर जा छिपा। धरती पर अँधेरा छाने लगा। कुहराम से आकाश गूँज रहा था। मौत का बाजार लगा था जिसमें मनुष्य का मंसूबा अपना मूल्य चुका लेना चाहता था। महत्त्वाकांक्षा, तू धन्य है। तूने अपने विकास के लिए अपने भाइयों का विनाश किया, माताओं का गर्भ चीर डाला, पत्नी के खून से हाथ रँगे, पिता के रक्त से प्यास बुझायी, युगों-युगों की सिद्धियों को चुटकियों में मसल डाला, शताब्दियों की कला को क्षणों में भस्म कर दिया, फिर भी तेरी पिपासा ज्यों की त्यों बनी है। अभिलाषा! तू मनुष्य का रक्त पीकर मनुष्य में जीवित रहती है।

सन्ध्या होते ही लूह बन्द हो गयी, परन्तु उमस से बुरा हाल था। पूरा पर्वत-प्रदेश जैसे जल रहा था। कुछ देर बाद आकाश में चन्द्रमा उगा भी तो उसे सिपाहियों की नृसंश लीला ने गुबार के पर्दे में छिपा लिया।

रात को लड़ाई रुक गयी। जलाल खाँ दौड़ा-दौड़ा पिता के पास गया। उसकी हालत खराब होती जा रही थी। अब वह आँखें बन्द किये पड़ा रहता। रोम-रोम में जैसे आग लगी थी। क्षण-भर के लिए शान्ति न होती। फिर भी वह अपनी वेदना छिपाये था।

हाय री लिप्सा ! तू अपने विजय के लिए रो भी नहीं सकती ? संसार के सामने कराहने में भी अपनी दुर्बलता थी और शेरशाह किसी भी मूल्य पर सेना में यह अफवाह न फैलने देना चाहता था कि उसकी दशा चिंत्य है।

रात-भर हकीम जी तोड़ परिश्रम करते और उसके प्राणों के साथ होड़ लगाते रहे। पहाड़-सी रात किसी प्रकार जाग कर बीती। जलाल खाँ को संकेत कर शेरशाह ने अत्यन्त मन्द स्वर में कहा—"तैयार हो जाओ। यह आखिरी दाँव है बेटा। यही मेरी जिन्दगी की आखिरी फतह है। इसे जीत कर आओ। मेरे प्राण तुम्हारे रास्ते में लगे हैं। अल्लाह तुम्हें कामयाब करे।"

वक्त अधिक न था। बादशाह ने हैदर को इशारे से बुलवाया। जब वह पास आ गया तो कहा—"मेरी पगड़ी लाओ।"

उसका आशय समझ कर हैदर ने दूसरे खेमें से उसकी पगड़ी मँगवा दी। उसे हाथों में लेकर शेरशाह ने जलाल को संकेत किया—इधर आओ।

जलाल ने झुक कर सिर बढ़ा दिया। वृद्ध पिता ने आँखों में आँसू भर कष्ट से कराहते, किन्तु उसे ओठों से बाहर न जाने देने का प्रयास करते हुए काँपते हाथों से पगड़ी जलाल के सिर पर रख दी—"इसकी इज्जत बचाना ! खुदा तुम्हें सलामत रखे।" जलाल भावावेश में रो उठा, किन्तु तत्काल परिस्थिति की गंभीरता का ज्ञान करते ही अनुशासन के ढंग पर सलाम करता हुआ बाहर निकल गया। उसके जाते ही युद्ध के बाजे नित्य की भाँति जोर-जोर से बज कर अफगानी अभियान की सूचना से धरती-आकाश कँपाने लगे।

सुबह का उगा आकाशगामी पथिक अपनी यात्रा समाप्त कर अस्ताचल की ओर बढ़ना चाहता था। जैसे वह शेरशाह को साथ ले चलने के लिए रुका था। आज के सूर्य की दशा ठीक बादशाह जैसी

थी। दोनों ही अपना कार्य समाप्त कर चुके थे। दोनों का प्रखर प्रताप संसार देख चुका था। अब दोनों ही अस्तगामी थे।

सहसा जोरों से बाजे बजने लगे। कालंजर का किला सम्पूर्ण रूप से जीता जा चुका था। कीर्त्ति सिंह अपनी अन्तिम साँस तक लड़ता मारा गया। बुन्देलों ने जान दे दी, परन्तु शान न जाने दी। प्राण रहते अफगानी किले में घुस न सके। फिर प्राणों के उड़ जाने पर संसार किसका है? जो जीवित बचा है, वह रक्त-रंजित वसुन्धरा भोगे। वीर तो अपनी सद्गति प्राप्त कर सीधा स्वर्ग जाता है। अपनी तलवारों की धार पर बुन्देलों ने दुश्मन की बाढ़ को रोका और उनके गोलों की आग में कूदकर अपनी मर्यादा बढ़ायी। तीसरे पहर एक अक्षय कीर्ति और खून से लथ-पथ उध्वस्त दुर्ग छोड़ कर वे परम लोक को चले गये।

जलाल विजयोल्लास से कालंजर में घुसा। उसके सिपाहियों ने किले पर से हिन्दुओं का सूर्य की निशानी वाला केसरिया झण्डा उतार दिया और उसकी जगह चाँद-तारों वाला हरा झण्डा गाड़ दिया। शेरशाह के विजय की घोषणा करती तोपों ने दिगन्तरों को कम्पित कर डाला।

शाम हो रही थी। जलाल खाँ घोड़े पर सवार हुआ। भागता हुआ शेरशाह के पास आया। जब जलाल वहाँ पहुँचा तो वह बुत पड़ा था, मानो मृत्यु की स्वागत कर रहा हो। जलाल ने आवाज दी—'हुजूर! आपकी रहमत से फतह हो गयी।'

'फतह हो गयी?'—शेरशाह की बुझती लौ फिर भभक उठी। चेहरे पर प्रसन्नता की रेखाएँ झलक उठीं—'अपना झण्डा लहरा दिया?'

'जी हाँ, हमारा झण्डा इस वक्त किले पर फहर रहा है।'

'और कीरतसिंह?'

'मारा गया।'

'माशा अल्लाह! या परवरदिगार खुदाबन्द करीम! तू कितना रहमदिल है! कितना गरीबनेवाज!'

परन्तु जो त्रिगुणातीत है, जिसके लिए विनाश और सृजन आकर्षण-रहित नित्य-कर्म है, उसके लिए दया का पात्र कौन, और क्रोध का आधार कौन ? तब अपने सब सरदारों को उसने अपने पलङ्ग के पास बुलाया। विजय की खुशी में अफगान मतवाले हो रहे थे। आधे से अधिक सिपाही और सरदार किले में रुक गये थे, उसकी रक्षा के लिए। जो वहाँ थे, सब आये। उन्हें देखकर शेरशाह ने खरखराते कण्ठ से कहा—मेरी आखिरी ख्वाहिश पूरी हुई। अल्लाहताला ने मेरी मुराद पूरी कर दी। अब कोई तमन्ना बाकी नहीं। अब मेरा दिल शान्त है, प्रसन्न।' फिर कुछ रुककर बोला—'अब तक मैं आपका सरदार था, बादशाह। परन्तु इस मिट्टी के बर्तन का क्या भरोसा ? कब टूट जाय। आज यह प्याला टूट रहा है। इसलिए मुल्क के इन्तजाम और रियाया की हिफाजत के लिए सबके रहनुमा के रूप में आप सबके हाथों इस, अपने बेटे जलाल खाँ को दिये जाता हूँ। मेरे बाद इन्हें ही अपना बादशाह मानना और जिस तरह आज तक मेरे हुक्म के मुताबिक सारा काम करते रहे, वैसे ही अब जलाल खाँ का हुक्म मानना। इसी से परमात्मा प्रसन्न होगा। यही मेरा आखिरी कलाम है, मेरा अन्तिम निवेदन।" कह कर उसने आँखें मूँद लीं।

अश्रुप्लावित नेत्रों को ऊपर उठा कर जलाल चिल्लाया—'अब्बा!' परन्तु अब्बा अब उस अनन्त मार्ग का यात्री बन चुका था, मुसलमानों के विश्वास के अनुसार जहाँ जाकर फिर कोई वापस नहीं लौटता। पिता के शव पर सिर पटकते हुए वह जोर से रो उठा। खेमें में करुण क्रन्दन की सिहरन छा गयी। मोलवियों ने कुरान की पवित्र आयतों को पढ़ना शुरू किया। तब तक सूर्य भी डूब गया। हाँ, आकाश की छोर पर कुछ लाली अब भी शेष थी जिसकी आभा में जलाल खाँ का मुँह ईंगुर की भाँति लाल हो रहा था।